वर्ष 45, अंक 3 मई - जून 2022

गगनांचल

साहित्य, कला एवं संस्कृति का संगम

जयंती स्मरण

महावीर प्रसाद द्विवेदी

15 मई 1864

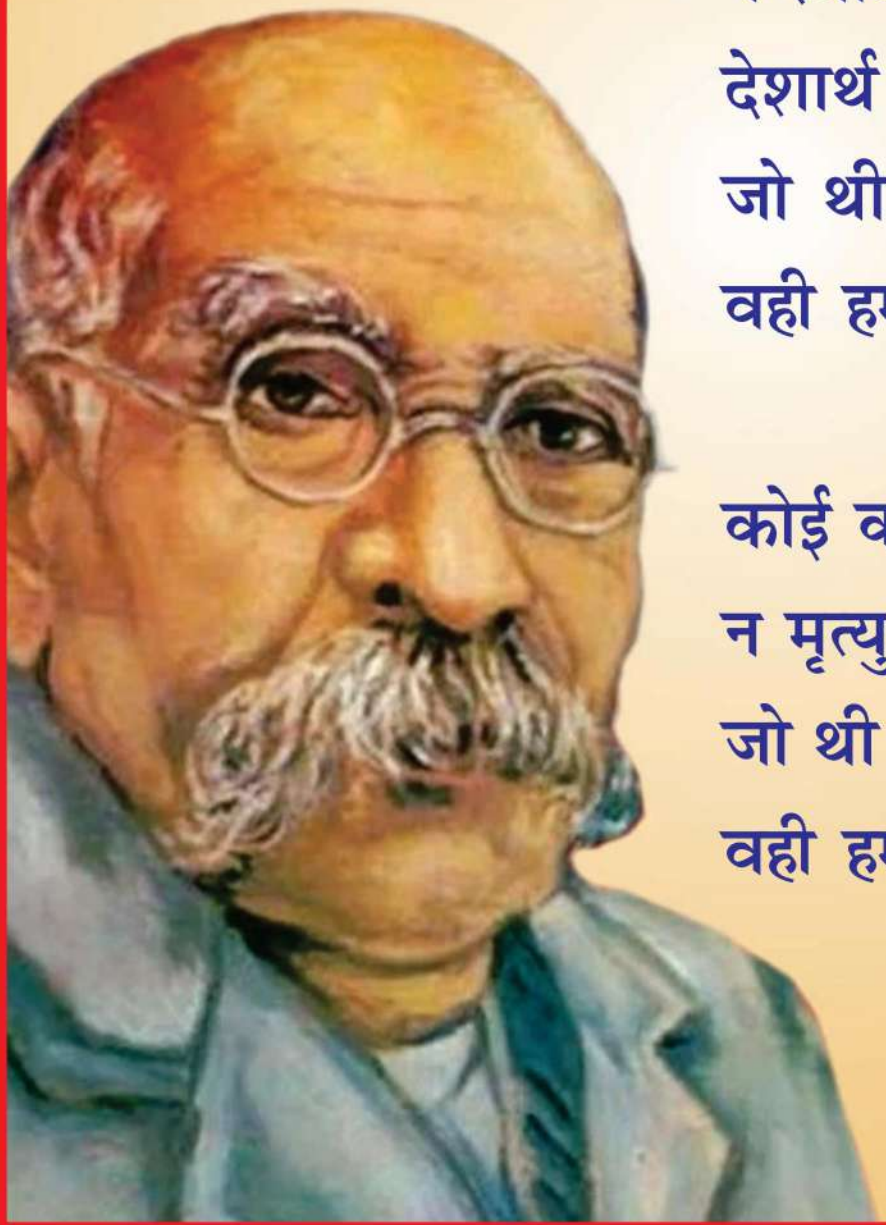

न स्वार्थ का लेन जरा कहीं था,
देशार्थ का त्याग कहीं नहीं था।
जो थी जगत्पूजित श्रेष्ठ-भूमि,
वही हमारी यह आर्य्य-भूमि।।

कोई कभी धीर न छोड़ता था,
न मृत्यु से भी मुँह मोड़ता था।
जो थी जगत्पूजित धैर्य्य- भूमि,
वही हमारी यह आर्य्य-भूमि।।

-महावीर प्रसाद द्विवेदी

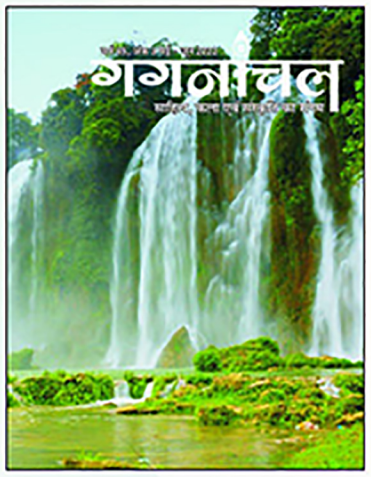

ISSN : 0971-1430

गगनांचल

साहित्य, कला एवं संस्कृति का संगम

वर्ष 45 अंक 3 मई - जून 2022

प्रकाशक

कुमार तुहिन

महानिदेशक

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद

संपादक

डॉ. आशीष कंधवे

प्रकाशन सामग्री भेजने का पता

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद

आजाद भवन, इंद्रप्रस्थ एस्टेट,

नई दिल्ली-110002

ई-मेल : pohindi.iccr@nic.in

गगनांचल अब इंटरनेट पर भी उपलब्ध

http://www.iccr.gov.in/Publication/Gagananchal

पर क्लिक करें।

सदस्यता शुल्क

वार्षिक	:	₹ 500
		यू.एस $ 100
त्रैवार्षिक	:	₹ 1200
		यू.एस. $ 250

उपर्युक्त सदस्यता शुल्क का अग्रिम भुगतान 'भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद, नई दिल्ली' को देय बैंक ड्राफ्ट/मनीऑर्डर द्वारा किया जाना श्रेयस्कर है।

मुद्रण : स्पेस 4 बिजनेस सोल्यूशन्स प्रा. लि. दिल्ली

इस अंक के आकर्षण

देश बड़ा या घर : कोमल

भगवान विष्णु का परशुरामावतार

विस्थापन की त्रासदी और हिंदी उपन्यास

सांस्कृतिक विरासत का धनी: मेरा प्रिय भारत

मॉरीशस के उपन्यासों में सांस्कृतिक चिंतन

समकालीन संदर्भ में गुरु जाम्भोजी का पर्यावरण बोध

अमृत महोत्सव: विकास के रास्ते 'वोकल फॉर लोकल'

हिंदीतर प्रदेश त्रिपुरा में हिंदी भाषा व साहित्य: एक अवलोकन

गगनांचल में प्रकाशित लेखादि पर प्रकाशक का कॉपीराइट है किंतु पुनर्मुद्रण के लिए आग्रह प्राप्त होने पर अनुमति दी जा सकती है। अतः प्रकाशक की पूर्वानुमति के बिना कोई भी लेखादि पुनर्मुद्रित न किया जाए। गगनांचल में व्यक्त विचार संबद्ध लेखकों के होते हैं और आवश्यक रूप से परिषद की नीति को प्रकट नहीं करते। प्रकाशित चित्रों की मौलिकता आदि तथ्यों की जिम्मेदारी संबंधित प्रेषकों की है, परिषद की नहीं।

अनुक्रम

गगनांचल
साहित्य, कला एवं संस्कृति का संगम

वर्ष 45, अंक 3, मई - जून 2022

प्रकाशकीय

3 कुमार तुहिन

संपादकीय

4 **सांस्कृतिक समरसता: राष्ट्र का सर्वमंगल**
डॉ. आशीष कंधवे

सांस्कृतिक-चिंतन

7 **श्री अरविंद के आलोक में संस्कृति दर्शन**
डॉ. श्रुति मिश्रा

अध्यात्म-चिंतन

11 **भगवान विष्णु का परशुरामावतार**
अमिय भूषण

साहित्य-चिंतन

15 **हिंदीतर प्रदेश त्रिपुरा में हिंदी भाषा व साहित्य: एक अवलोकन**
डॉ. कालीचरण झा

राष्ट्र-चिंतन

18 **सांस्कृतिक विरासत का धनी: मेरा प्रिय भारत**
प्रीति खरे

कथा-सागर

19 **देश बड़ा या घर**
कोमल

33 **रूम हीटर**
श्यामल बिहारी महतो

तत्त्व-चिंतन

36 **गुरु जाम्भोजी: तत्त्व-चिंतन और उच्च जीवनादर्श का आग्रह**
डॉ. आनंद पाटिल

40 **समकालीन संदर्भ में गुरु जाम्भोजी का पर्यावरण बोध**
डॉ. सीमा रानी

लोक-चिंतन

44 **आदिवासी समाज की संस्कृति**
नवीन चंद पटेल

48 **छत्तीसगढ : पारंपरिक पूजा-पद्धति एवं लोक-पर्व के प्रमुख आयाम**
चुन्नीलाल साहू

सामयिक-चिंतन

56 **नई शिक्षानीति: विद्यालयी शिक्षा में संभावनाएं और चुनौतियाँ**
शीतल चौधरी

देश-देशांतर

58 **जर्मनी में हिंदी भाषा का अध्यापन**
सुशील शर्मा 'हक़'

स्वास्थ्य-चिंतन

61 **योग भगाए रोग**
डॉ. अनिल चतुर्वेदी

सिनेमा-चिंतन

63 **हिंदी सिनेमा में विस्थापन का प्रभाव**
अभिनव प्रकाश

विचार-चिंतन

66 **टेक्नोलॉजी एवं शिक्षा**
अखिलेश कुमार गुप्ता

शोध-चिंतन

67 **विस्थापन की त्रासदी और हिंदी उपन्यास**
डॉ. देवी प्रसाद तिवारी

71 **मॉरीशस के उपन्यासों में नशे की समस्या: एक आलोचनात्मक अध्ययन**
शालेहा प्रवीन

75 **अमृत महोत्सव: विकास के रास्ते 'वोकल फॉर लोकल'**
डॉ. विशाल मिश्रा

साक्षात्कार

81 **वाद, विवाद, पंथ, खेमे सब खोखले है: नीरजा माधव**
साक्षात्कारकर्त्ता-राहुल द्विवेदी

समीक्षा-पर्व

85 डॉ. रवि शंकर शुक्ल/**भारतीय ज्ञानपरंपरा...**

86 डॉ. लहरी राम मीणा/**गर्म रोटी के ऊपर...**

87 डॉ. मृगेन्द्र राय/**सुषेण पर्व: द्वंद्व...**

काव्य-मधुबन

89 विवेक गौतम

90 अनिल वर्मा मीत

91 सुशील साहिल

92 सोनिया अक्स

93 **गतिविधियाँ : आई.सी.सी.आर.**

प्रकाशकीय

कुमार तुहिन
महानिदेशक

भारतीय संस्कृति लोक-भाषा, लोक गीतों-कथाओं के माध्यम से देशांतरों की यात्रा करती रही और प्रचार-प्रसार पाती रही। उदाहरणस्वरूप रामचरित मानस को ही ले लें। तुलसी रचित रामचरित मानस ने लोक-साहित्य को माध्यम बनाकर यात्रा की और विश्व का कण्ठहार बन गयी। परन्तु आज मैं अपनी बात को हिंदी तक ही सीमित रखूँगा।

प्रयोक्ताओं की संख्या की दृष्टि से हिंदी विश्व की प्रथम दो प्रमुख भाषाओं में से एक है। विश्व के लगभग 80 देशों में आज हिंदी बोली, समझी एवं पढ़ी जाती है। हिंदी के वैश्विक विकास का मुख्य कारण है इसका सरल व सहज होना। हिंदी की एक और महत्त्वपूर्ण बात यह है कि यह जैसे बोली जाती है वैसे ही लिखी जाती है। जबकि अंग्रेजी, फ्रांसीसी, रूसी, जर्मनी आदि भाषाओं में यह तत्त्व दिखाई नहीं पड़ता। हिंदी की यही एकरूपता इसकी सफलता का कारण है।

वर्तमान समय में हिंदी का प्रचार-प्रसार वैश्विक स्तर पर दो तरह से हो रहा है-प्रथम श्रेणी के अंतर्गत वे देश आते हैं जो हिंदी का विश्व भाषा के रूप में पठन-पाठन कर रहे हैं जिनमें रूस, चीन, जापान, नार्वे, स्वीडन, पोलैंड, आस्ट्रेलिया, मैक्सिको, अमेरिका आदि देश प्रमुख हैं। दूसरे के अंतर्गत वे देश शामिल हैं जहाँ प्रवासी भारतीय या भारतवंशी की संख्या बहुतायत में है। चूँकि इनकी मातृभाषा हिंदी रही है इसलिए ये जिन देशों में भी गयी अपनी भाषा एवं संस्कृति को निरंतर सहेजती, समेटती एवं समृद्ध करती रही। फिजी, सुरीनाम, गुयाना, वर्मा, मॉरीशस, थाईलैंड, नेपाल, श्रीलंका, मलेशिया, दक्षिण अफ्रीका इसके उत्कृष्ट उदाहरण हैं। अत: यह कहने में अतिशयोक्ति नहीं है कि दोनों प्रकार के देशों में आज हिंदी का भाषाई वर्चस्व और रचना संसार विपुल और समृद्ध है।

आज विश्व के अनेक देशों में विदेशी भाषा के रूप में हिंदी पढ़ाई जाती है। प्रवासी भारतीय वर्ग द्वारा हिंदी भाषा को अपने सामाजिक एवं सांस्कृतिक अस्मिता से जोड़कर देखने के कारण इस धरोहर को सुरक्षित रखना वे अपना नैतिक कर्त्तव्य समझते हैं। वे जहाँ कहीं भी रह रहे हैं अपनी मातृभाषा को नहीं भूले, अपितु उसे एक अमूल्य निधि के रूप में संरक्षित एवं सुरक्षित रखने का प्रयास भी किया जा रहा है। अमेरिका तथा यूरोपियन देशों में हिंदी भाषा को सिर्फ शैक्षिक अभिरुचि तक ही सीमित नहीं रखा गया है अपितु इसे प्रयोजन मूलक दृष्टि से भी देखा जाता है। हिंदी का वैश्विक फलक निरंतर समृद्ध एवं विस्तृत होते जा रहा है जो भाषा की दृष्टिकोण से शुभ है।

कुमार तुहिन

संपादकीय

डॉ. आशीष कंधवे
संपादक

सांस्कृतिक समरसता: राष्ट्र का सर्वमंगल

वर्तमान भारत संक्रमण काल से गुजर रहा है। भारतीय राजनीतिक व्यवस्था से लेकर आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, भाषाई और धार्मिक आस्थाओं में भी अभूतपूर्व परिवर्तन देखने को मिल रहे हैं। भारत आरंभ से ही सहिष्णु देश रहा है विस्तार वादी नीतियाँ कभी इसकी मनोवृति में नहीं रही हैं। यही कारण है कि भारतीय संस्कृति अपने वैशिष्ट्य को आज तक बचाए रखने में सक्षम रही है। इस वैशिष्ट्य का प्रमुख कारण भारतीय समाज में पाए जाने वाली सामाजिक समरसता है। सामाजिक समरसता अर्थात् सामाजिक समानता। सामाजिक समानता का तात्पर्य किसी भी समाज के जातिगत भेदभाव एवं अस्पृश्यता को जड़ से उन्मूलन करना परस्पर प्रेम एवं सौहार्द्र को बनाने का प्रयत्न है।

समरसता का अर्थ ही है समाज के सभी वर्गों का एकरस हो जाना अर्थात एक मत हो जाना, एक जैसा व्यवहार करना, एक जैसा सम्मान देना और एक जैसी व्यवस्था में रहना।

सरल शब्दों में सामाजिक समरसता विभिन्नता में एकता को ही कहते हैं।

सामाजिक शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व की परिकल्पना ही सामाजिक समरसता की मूल चेतना है। जब किसी समाज की आत्मीयता अपनी पराकाष्ठा को प्राप्त होती है तभी सामाजिक समरसता विश्व के अन्य देश, अन्य संस्कृति या अन्य किसी समाज के लिए एक आदर्श उदाहरण प्रस्तुत करती है। सामाजिक समरसता सांस्कृतिक समन्वय का आरंभ बिंदु है। इसी आधार बिंदु से 'सर्वजन सुखाय, सर्वजन हिताय' जैसे सूत्र का निर्माण होता है। इस सूत्र के निर्माण से राष्ट्रीय चेतना में अभूतपूर्व परिवर्तन देखे जाते हैं और इसी परिवर्तन के सरोकारों को जब हम अपने जीवन में उतार लेते हैं तो हमारे भीतर बंधुत्व का भाव पैदा हो जाता है। यही बंधुत्व हमें 'वसुधैव कुटुंबकम' की परिकल्पना से जोड़ता है और समृद्ध समरसता के सिद्धांत को प्रतिपादित करता है। समरसता के निर्माण के लिए यह आवश्यक है कि उसकी सामाजिकता बनी रहे। इस परिकल्पना को समझने के लिए मनुष्य के सामाजिक होने को भी हमें समझना पड़ेगा। मनुष्य का सामाजिक होना तभी संभव है जब उसकी शारीरिक, मानसिक एवं आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति समाज से होती रहे। व्यक्तियों के साथ संबंध की निर्मिती होती रहे । हम सब जानते हैं कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और एक दूसरे के साथ संबंध जोड़ना मनुष्य की मनोवृति में है। जोड़ने का यही मनोविज्ञान समरसता का सांस्कृतिक वाङ्मय है। सांस्कृतिक वाङ्मय को वर्तमान में हमें देखना पड़ेगा। बाजार भाव की घोर प्रतिस्पर्धा और प्रत्येक मनुष्य के मन में स्वयं को श्रेष्ठ सिद्ध कर देने की इच्छा ने ही हमारी सामाजिक समरसता को ठेस पहुंचाया। वर्तमान में भारत का प्रत्येक समुदाय किसी न किसी विवाद में उलझा हुआ है। सामाजिक-सांस्कृतिक चेतना के लिए विश्व भर में जाना जाने वाला भारतवर्ष आज द्वंद्व की स्थिति में है। एक समूह दूसरे समूह से, एक जाति दूसरे जाति से, एक संप्रदाय दूसरे संप्रदाय से, एक व्यापारी दूसरे व्यापारी से, एक शिक्षक दूसरे शिक्षक से, एक छात्र दूसरे छात्र से आदि आदि प्रतिस्पर्धा में हम राष्ट्रीय मूल चेतना को भूल चुके हैं। स्वयं को श्रेष्ठ समझने की भूल कहीं भारतीय समरसता के मूलभूत सिद्धांत को ही विखंडित न कर दे ?

राष्ट्र के प्रत्येक व्यक्ति को एक सामाजिक व्यवस्था के अंतर्गत रहना होता है। यही सामाजिक व्यवस्था उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा का

निर्धारण करती है तथा उसके दायित्त्वबोध एवं अधिकार से अवगत कराती है। भारतवर्ष में समाज के सभी लोगों को आंतरिक दृष्टि से समान अधिकार प्राप्त है। यही आंतरिक अधिकार उस व्यक्ति को अथवा समाज को अथवा राज्य को अथवा राष्ट्र को उसके अपने लोगों एवं मूल्यों से संपन्न कराता है तथा स्वतंत्रता के बोध को जागृत करता है। स्वतंत्रता का बोध होना और स्वतंत्रता के दायित्त्वों का निर्वहन करना दोनों के मूलभूत अंतर को आज हम लोग भुला चुके हैं। यही कारण है कि भारतवर्ष में उथल-पुथल की स्थिति बनी हुई है। सामाजिक समरसता की स्थिति में बदलाव राष्ट्रीय स्तर पर असंतोष की भावना को उत्पन्न करता है और उस राष्ट्र में रहने वाले नागरिकों को असुरक्षा की भावना भी जागृत होती है। सामाजिक समरसता में बदलाव आर्थिक परिस्थितियों के साथ-साथ धार्मिक अथवा आध्यात्मिक परिस्थितियों में बदलाव से भी होता है। इसी सामाजिक व्यवस्था को बचाए रखना ही सामाजिक समरसता है।

सामाजिक समरसता के निर्माण में साहित्यकारों पत्रकारों की भूमिका भी बहुत महत्त्वपूर्ण होती है। अगर हम गौर से देखें तो सूचना क्रांति के इस दौर में वांछित-अवांछित अनेक प्रकार की सूचनाएँ हमें प्राप्त होती रहती हैं। सूचनाओं की अधिकता से भी राष्ट्रीय वातावरण में अनेक विसंगतियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। कई बार यह रोष का कारण बन जाता है। एक सर्जक पत्रकार और एक चैतन्य साहित्यकार का यह दायित्त्व होता है कि वह अपनी लेखनी से, अपने संपादन से समाज में शांति की स्थापना करें, उनके सुरक्षित होने के भाव को उत्पन्न करें और उनके मौलिक अधिकारों की रक्षा करें। किसी भी विषय को सनसनीखेज बनाकर प्रस्तुत करना न पत्रकारिता का धर्म है और न ही किसी साहित्यकार से अपेक्षा की जाती है कि सांस्कृतिक सामाजिक संप्रभुता को कमजोर करने में उसकी भूमिका भी हो सकती है।

विडंबना यह है कि आज इन दोनों मानकों पर साहित्यकार और पत्रकार खरे नहीं उतरते हैं। सबका अपना-अपना लक्ष्य है और अपना-अपना लोभ। लक्ष्य और लोभ की प्राप्ति के लिए उचित अनुचित लिखना भी आजकल फैशन बन गया है। लोकतंत्र में रहने वाले आम नागरिक यह तय नहीं कर पाते हैं कि कौन सच कह रहा है। साहित्य और पत्रकारिता का फैशन परस्त होना अर्थात् मौके के अनुरूप कार्य करना, समय के अनुरूप हित को साधना कहीं से भी राष्ट्रीयता के पक्ष में नहीं है। परिस्थिति में सामाजिक और सांस्कृतिक समरसता कितनी अक्षय रहेगी यह शोध का विषय है।

आजकल वैचारिक आंदोलन देखने को नहीं मिलते क्योंकि वैचारिक आंदोलन के लिए संयम की आवश्यकता होती है। भारतीय समाज बहुत तेजी से अपना संयम खोता जा रहा है। संयम अर्थात् धैर्य ही धर्म को धारण करने का मार्ग बताता है। समाज में जब इतनी बेचैनी होगी तो धर्म की स्थापना के बारे में सोचना किसी स्वप्न देखने जैसा है। इसलिए यह आवश्यक है कि सामाजिक अथवा सांस्कृतिक आंदोलन के नेतृत्व के लिए शांत, धीर, गंभीर और प्रभावकारी नायक होना चाहिए अन्यथा परिणाम प्रलयंकारी हो सकते हैं। किसी व्यक्ति के प्रभावशाली होने में और धीर गंभीर चिंतक होने में अंतर होता है। एक महत्त्वपूर्ण बात मैं यहाँ कहना चाहूँगा कि समरसता संघर्ष के सिद्धांत पर आधारित नहीं होती है क्योंकि यह प्रतिरोधात्मक, पृथकवादी अथवा अलगाववादी आंदोलन नहीं होती है। आज का भारतीय समाज इस बिन्दु को समझ नहीं पा रहा है।

'सामाजिक समरसता' सामाजिक आदर्श का प्रत्यय और पूर्व प्रत्यय है। वस्तुतः यह समाज के समस्त वर्गों के संगठन का एक अद्वितीय प्रयास है, जिसका लक्ष्य एक विभेद मुक्त, आदर्श सामाज का निर्माण करना है। सामाजिक समरसता एकात्मता का साक्षात्कार है। इसमें अभिन्नता है और सभी का सभी से एकत्व है। इसमें सामूहिक अस्तित्व की स्वीकृति है। समरसता समतामूलक, बंधुत्व पर आश्रित समाज का विचार है।

आधुनिक सन्दर्भ में इस विचार का प्रतिपादन और व्यावहारिक प्रकटीकरण हुआ है। सामाजिक समरसता की अंतर्वस्तु में संघर्ष के स्थान पर सह-अस्तित्व, विषमता के स्थान पर समता, वर्ग चेतना के स्थान पर सर्वमंगल की कामना निहित होती है।

संघ के द्वारा प्रतिपादित सामाजिक समरसता की अंतर्वस्तु है विभेद नहीं एकत्व, संघर्ष नहीं समन्वय और सह-अस्तित्व, परावलंबन नहीं परस्पर आलंबन एवं सहयोग है। आज समरसता का चिंतन एक आन्दोलन का रूप ले चुका है। यह आन्दोलन केवल वैचारिक आन्दोलन नहीं है, यह सामाजिक सांस्कृतिक आन्दोलन भी है। इसकी प्रकृति शांत, धीर, गंभीर है, लेकिन यह प्रभावकारी और परिणामकारी है, इसलिए साहित्यिक प्रवृत्तियों का लोकरंजन करना तो आवश्यक है ही परंतु लोकमंगल की कामना अधिक मूल्यवान है।

समरसता की अवधारणा परिणामकारी हो इसके लिए अत्यंत आवश्यक है कि साहित्यिक समाज को और संपुष्ट किया जाए तथा

साहित्य से समाज को जोड़ा जाए। सामाजिक समरसता का विचार और संस्कार सनातन भारतीय दर्शन से उपजा है। इसलिए इसमें आध्यात्मिकता भी है और नैतिकता भी। वस्तुत: यह आन्दोलन आत्मवत सर्वभूतेषु, तथा व्यावहारिक आध्यात्मवाद से ही उत्पन्न हुआ है। व्यावहारिक अध्यात्म के दार्शनिक विचार से प्रेरित होने के कारण आज भी इसका महत्त्व नहीं है जितना सनातन समय में था। स्पष्ट रूप से यह समझ लेना चाहिए कि कुछ विचार सृष्टि में अपरिवर्तनशील होते हैं। 'आत्मवत सर्वभूतेषु' के विचार पर आधारित 'सामाजिक समरसता' भारतीय संस्कृति का आधार है। समरसता के चिंतन में रामराज्य की परिकल्पना से लेकर महात्मा बुद्ध का सम्यक दर्शन और विचार सन्निहित है। इसमें संत रामानंद का व्यवहार और संस्कार, (अस्पर्शी नहीं सर्वस्पर्शी समाज जीवन की कल्पना) भी सम्मिलित है। यह गुरू अमर दास जी (सिख पंथ के तीसरे गुरु) का दर्शन और चिंतन, 'पहले पंगत, फिर संगत' की अभिव्यक्ति है। इस तरह यह एक आदर्श समाज निर्माण का व्यावहारिक चिंतन है। वहीं आधुनिक काल में देखें तो कहीं न कहीं गांधी का चिंतन भी अध्यात्म की ओर ही ले जाता है तभी वह अपने जीवन के आदर्श को श्रीराम में ढूँढते हुए नजर आते हैं।

सामाजिक समरसता की अनिवार्यता और प्रासंगिकता आन्दोलन की एक सामाजिक सांस्कृतिक पृष्ठिभूमि है। यह आन्दोलन

हिन्दव: सोदरा: सर्वे, न हिन्दू पतितो भवेत।

मम दीक्षा हिन्दू: रक्षा,मम मंत्र: समानता।।

अर्थात् सभी हिंदू सहोदर भाई हैं कोई भी हिन्दू पतित नहीं हो सकता, मेरी दीक्षा ही हिन्दू रक्षा है, और मेरा मंत्र समानता का मंत्र है। यही सनातन मान्यता का व्यावहारिक परिणाम है। यद्यपि यह आन्दोलन समाज में व्याप्त जातिगत भेदभाव को नकारता है, परंतु केवल सामाजिक विषमता, अस्पृश्यता, छुआ-छूत आदि अतीत के अनुभव के आधार पर इस आन्दोलन का मूल्यांकन करना कठिन है। इसलिए यह आवश्यक है कि साहित्यिक जगत में इन मूल्यों को पुन: जीवित किया जाए और एक वैचारिक आंदोलन की ओर समाज को अग्रसर किया जाए जो सामाजिक समरसता के आदर्श नियमों, सामाजिक मूल्यों से घनिष्ट रूप से सम्बन्धित है। इस आंदोलन की अंतर्वस्तु प्राचीन आग्रहों और दुराग्रहों से मुक्ति है। इसमें समाज में व्याप्त रुढ़ियों से स्वतंत्रता है तथा सामाजिक अव्यवस्था के विरुद्ध विद्रोह भी है। जो भूल हुई है उस सुधार की प्रक्रिया यहीं से आरंभ होगी इसीलिए मैंने कहा कि सामाजिक समरसता सांस्कृतिक संरचना का आधार बिंदु ही नहीं बल्कि प्रस्थान बिंदु भी है। संकुचित संदर्भ में इसका अर्थ ढूँढने वालों की कोई कमी नहीं है परंतु व्यापक सन्दर्भ में सामाजिक समरसता मानवीय अस्मिता, नारी प्रतिष्ठा, समता समानता और सांस्कृतिक समरसता का संस्कारनिष्ठ कार्य है। इसलिए वर्तमान के अनुभव के रूप में उसका विश्लेषण और मूल्यांकन आवश्यक है।

आन्दोलन की विश्वसनीयता आंदोलन के आधार पर निर्भर करता है। अगर आंदोलन का आधार सत्यनिष्ठा और पूर्वाग्रहमुक्त है तो निश्चित रूप से राष्ट्र के एक बड़े वर्ग को अपने प्रभाव से आकर्षित करेगा। भारत में अनेक ऐसी धार्मिक आध्यात्मिक और सामाजिक संस्थाएँ हैं जो भारतीय एकीकरण, भारत के मूल सिद्धांतों और भारत की सनातन प्रवृत्तियों को पुन: समाज में जागृत करना चाहते हैं। जहाँ सब समरस, सब एकरस, एकाकार हैं। दीनदयाल उपाध्याय से लेकर केशव बलीराम हेडगेवार तक का दर्शन हमें यही सिखाता है। दर्शन का व्यावहारिक पक्ष और दर्शन का सैद्धांतिक पक्ष दोनों को समझना बहुत जरूरी है। वर्तमान में समस्या यह है कि हम इसके सिद्धांत एक पक्ष पर विचार प्रकट किए जा रहे हैं परंतु व्यावहारिक पक्ष से दूर हो रहे हैं। सांस्कृतिक समरसता और सामाजिक समरसता दोनों के लिए आवश्यक है कि समाज में सदसयता बने, निष्कपट निष्कलंक रूप से शिक्षा में साहित्य के पठन-पाठन की व्यवस्था हो। साहित्य राष्ट्रहित में हो, साहित्य राष्ट्रीय नीतियों के अनुकूल हो और साहित्य निष्पक्ष हो। क्योंकि, समरसता में सदसयता है, सहृदयता है। समरसता में सहकार है, सरोकार है। समरसता में आत्मीयता है, सद्भाव है। समरसता सहयोगपूर्ण व्यवहार है। इस प्रकार यह समाजवाद, साम्यवाद और अन्य सभी वादों से ऊपर मानवता का दर्शन है। इसमें मानव समाज की अखण्डता, समग्रता एवं अद्वैत का बोध होता है। यही अद्वैत का बोध भारतीय संस्कृति का सौंदर्य है। गुणात्मक एवं भावनात्मक रूप से सामाजिक समरसता की अवधारणा अन्य समकालीन अवधारणाओं से श्रेष्ठ है। समरसता का सुखद परिणाम यह होगा कि हम सब के विचार एक होंगे। इससे 'वयं हिंदूराष्ट्रांग भूता' अर्थात् हम एक राष्ट्र के अंग हैं, की अद्भुत आकांक्षा पूर्ण होगी।

डॉ. आशीष कंधवे
मोबाइल : +91-9811184393
ई-मेल : editor.gagananchal@gmail.com

श्री अरविंद के आलोक में संस्कृति दर्शन

डॉ. श्रुति मिश्रा

ऋषियों के (आत्मानं विद्धि) संदेश को यद्यपि अभी मनुष्य नहीं समझ सका है किंतु इसमें निहित इस संदेश को (स्वयं को शिक्षित करो) उसने स्वीकार कर लिया। वस्तुतः ऋषि यहाँ तत्त्व द्रष्टा है। इसे ही श्रीअरविंद ने आध्यात्मिक मनुष्य कहा है जो मानव जीवन को उसकी पूर्णता की ओर ले जाने में सक्षम है। आध्यात्मिक मनुष्य जो मानव जीवन को उसकी पूर्णता की ओर ले जा सकता है प्राचीन भारतीय विचार में ऋषि नाम दिया गया है। ऋषि वह है जिसने मानव जीवन का पूर्ण रूप से उपयोग किया है तथा अति बौद्धिक अति मानसिक और आध्यात्मिक सत्य का श्रुति ज्ञान प्राप्त कर लिया है। निम्न अवस्थाओं से वह ऊपर उठ चुका है और सब वस्तुओं को ऊपर से देख सकता है

भारतीय संस्कृति समग्रता की संस्कृति है। यदि सामाजिक उपादानों की बात की जाए तो सभ्यता और संस्कृति परस्पर पूरक हैं और इनमें एक प्रकार की अन्योन्याश्रयता है। लौकिक तथा आध्यात्मिक विकास के लिए मनुष्य द्वारा किया गया उत्तम विचार ही संस्कृति है। जहाँ सभ्यता हमारे सामाजिक,आर्थिक जीवन को प्रभावित करती है वहीं संस्कृति से हमारा आध्यात्मिक जीवन प्रभावित होता है। संस्कृति मानव के समग्र परिष्कार का माध्यम है। वह उसे सुसंस्कृत करती है। मनुष्य को श्रेष्ठ बनाने में तथा उसकी श्रेष्ठता स्थापित करने में संस्कृति का महत्त्वपूर्ण योगदान है। मनुष्य के जीवन तथा उसके समस्त क्रियाकलापों पर संस्कृति का प्रभाव अत्यधिक पड़ता है। इसी कारण श्री अरविंद कहते हैं कि किसी जाति की संस्कृति उसकी जीवन विषयक चेतना की अभिव्यक्ति होती है और वह चेतना अपने आप को विचार, आदर्श, ऊर्ध्वमुख संकल्प, आत्मिक अभीप्सा, सर्जनशील आत्म अभिव्यंजना, गुणग्राही सौंदर्य बोध, मेधा, कल्पना व्यवहारिकता में प्रकट करती है।[1]

भारतीय दर्शन को धर्म, सहिष्णुता, समन्वय की भावना, उसके गौरवशाली इतिहास, सुसंस्कार, रीति रिवाज़ आदि के कारण भारतीय संस्कृति को अन्य संस्कृतियों की तुलना में गौरवपूर्ण माना जाता है। विवेक तथा ज्ञान भारतीय संस्कृति का आत्मा भाव है। श्री अरविंद का आविर्भाव भारतीय सभ्यता और संस्कृति का संस्कार लेकर हुआ है। महर्षि अरविंद का संदेश विश्व को भारतीय सभ्यता और संस्कृति का संदेश देता है। जब वे आध्यात्मिक जीवन की ओर बढ़े तो उन्होंने भारतीय दर्शन तथा धर्म को और भी गहराई से जानने का प्रयत्न किया।[2] स्वाभाविक है कि श्री अरविंद की संस्कृति विषयक विचारों पर भारतीय दर्शन का गहरा प्रभाव है।

श्री अरविंद ने ब्रह्म को पूर्ण सत् और जगत् को अपूर्ण सत् के रूप में स्वीकार किया है और अपनी दिव्य दृष्टि के आलोक में समग्र अद्वैतवाद का प्रतिपादन उसकी संस्कृति का अनुशीलन भारतीय परंपरा के परिप्रेक्ष्य में किया है।

जब भी हम श्री अरविंद के सामाजिक-राजनीतिक विचार पर दृष्टिपात करते हैं तो हम पाते हैं कि वह भी वेदान्त की परंपरा के अनुरूप ही है। यही कारण है कि उनकी तत्त्व मीमांसा के साथ-साथ उनके सामाजिक और राजनीतिक दर्शन में भी आध्यात्मिक चेतन सत्ता की प्रधानता निर्विवादतः दृष्टिगोचर होती है।

संपूर्ण मानव जाति भौतिक, प्राणमय, भावना एवं मनोमय प्रकृति में समान है। मनुष्य प्रकृतिगत मनोमय प्राणी है। जैसे-जैसे उसका जीवन प्रगति करता है उसी के अनुपात में मनुष्य में विभिन्नता का सामर्थ्य

उत्पन्न होता जाता है। मनोमय चेतना की उन्मुक्तता के कारण ही वह स्वयं को अपनी सत्ता के विधान को तथा अपने विकास की प्रगति को न केवल अन्य प्राणियों की अपेक्षा अधिक समझ सकता है बल्कि वह इस मनोमयता से ऊपर उठकर मन प्राण और शरीर जिससे नि:सृत हुए हैं उस सत्ता के प्रति अपनी चेतना को उद्घाटित कर सकता है क्योंकि मनुष्य की प्रगति का सच्चा विधान इस बात में नहीं है कि उसने कितना भौतिक और प्राणिक विकास किया है अपितु इस बात में है कि प्रकृति के विकास क्रम में भारी मानसिक और आध्यात्मिक प्रगति के वह किस स्थान पर स्थित है।[3]

श्री अरविंद सार्थक जीवन की दिव्यता को अनेक रूपों में संस्कृति का प्रतिफलन मानते हैं इसीलिए वे (भारतीय संस्कृति के आधार) नामक ग्रंथ में जहाँ एक तरफ भारतीय संस्कृति पर निरंतर हो रहे अतिशयोक्तिपूर्ण कटाक्ष के कारण आसन्न संकट के प्रति आत्मरक्षा की आवश्यकता का अनुभव करते हैं वहीं यूरोपीय संस्कृति के प्रभाव व विसंगतियों का विश्लेषण करते हुए उनके आक्षेपों का निराकरण करते हैं। साथ ही दर्शन, धर्म कला से ओतप्रोत भारतीय संस्कृति के मूलतत्त्वों का भी उद्घाटन करते हैं।

वस्तुतः विकास का क्रम भौतिक तत्त्वों से आरंभ होता है। तदनंतर उसमें निगूढ़ प्राण प्रकट होता है। तत्पश्चात् वनस्पति से पशु, फिर पशु से मानव की ओर यह क्रम गति करता है। मानव में भी विकास का आरंभ अवमानव(sub-human) से होता है। मानव को धातुओं, वनस्पतियों और पशुओं की प्रकृति को भी धारण करना होता है क्योंकि उसकी भौतिक प्रकृति का निर्माण इन्हीं से हुआ है। फलत:, उसके मन और प्राण पर इन्हीं का आधिपत्य होता है। भौतिक मन के अवमानवीय स्रोतों से ही मनुष्य ने जड़ता के प्रति झुकाव, भूमि के प्रति राग, खानाबदोशी और लूटपाट की प्रवृत्ति, क्रोध और भय से अभिभूत होना, दंड की आवश्यकता साथ ही दंड पर निर्भरता वास्तविक स्वतंत्रता से अनभिज्ञता, बौद्धिक रीति से प्राप्त ज्ञान को आत्मसात करने की मंद प्रवृत्ति आदि को प्राप्त किया है। अवमानवीय तत्त्वों के कारण है अपनी स्थिति से ऊपर उठ पाना उसके लिए अत्यंत दुष्कर होता है किंतु प्रकृति अपने निम्नभाव का अतिक्रमण करके अपने विकास की महान प्रक्रिया की ओर अग्रसर होती है। अतीत से शिक्षा ग्रहण कर अपनी अनंत संभावनाओं को जानना और तदनुरूप विकास की ओर अग्रसर होना ही मानव के लिए नियत है।[4]

श्री अरविंद किसी भी संस्कृति में निहित प्राणशक्ति और श्रेष्ठता का मापदंड तीन आधारों पर मानते हैं- जीवन के प्रति मौलिक चिंतन की शक्ति, जीवन हेतु उसके आदर्श और उस आदर्श के अनुरूप कर्म करने की प्रेरक शक्ति। संस्कृति के संदर्भ में श्री अरविंद स्पष्टत: कहते हैं -

'वेद भारतीय संस्कृति का आध्यात्मिक और मनोवैज्ञानिक बीज है और उपनिषदें सर्वोच्च आध्यात्मिक ज्ञान एवं अनुभव के सत्य की अभिव्यक्ति। यह सत्य ही सदा इस संस्कृति का उच्चतम विचार और चरम ध्येय रहा है। इसी ध्येय ने जीवन को तथा जाति को आत्मा की अभीप्सा की ओर प्रेरित किया है। ये दो महान पवित्र ग्रंथ इसकी काव्यमय और सृजनशील आत्म अभिव्यक्ति के सर्वप्रथम महत् प्रयत्नों का फल हैं। ये विशुद्ध आंतरात्मिक एवं आध्यात्मिक मन की भाषा में परिकल्पित एवं वर्णित है।'[5]

ऋषियों के (आत्मानं विद्धि) संदेश को यद्यपि अभी मनुष्य नहीं समझ सका है किंतु इसमें निहित इस संदेश को कि (स्वयं को शिक्षित करो) उसने स्वीकार कर लिया। वस्तुतः ऋषि यहाँ तत्त्व द्रष्टा हैं। इसे ही श्रीअरविंद ने आध्यात्मिक मनुष्य कहा है जो मानव जीवन को उसकी पूर्णता की ओर ले जाने में सक्षम है। आध्यात्मिक मनुष्य को जो मानव जीवन को उसकी पूर्णता की ओर ले जा सकता है प्राचीन भारतीय विचार में ऋषि नाम दिया गया है। ऋषि वह है जिसने मानव जीवन का पूर्ण रूप से उपयोग किया है तथा अति बौद्धिक अति मानसिक और आध्यात्मिक सत्य का श्रुति ज्ञान प्राप्त कर लिया है। निम्न अवस्थाओं से वह ऊपर उठ चुका है और सब वस्तुओं को ऊपर से देख सकता है परंतु उसे इन सब के प्रयास के साथ सहानुभूति भी है और वह अंदर से भी इन पर दृष्टि डाल सकता है। इसलिए जिस प्रकार भगवान दिव्य रीति से जगत् का पथ प्रदर्शन करते हैं उसी प्रकार वह भी मानव रीति से जगत् का पथ प्रदर्शन कर सकता है क्योंकि भगवान के समान ही वह जागतिक जीवन के बीच में भी है तथा उसके ऊपर भी है।[6]

यहाँ यही स्पष्ट करने का प्रयास किया जा रहा है कि मानव जाति जो अपनी सभ्यता की जन्म स्थिति प्राप्त कर सकी और यह बौद्धिकता मात्र है। शिक्षा को स्वीकार करने का तात्पर्य यही है कि मनुष्य जाति यह स्वीकार करने लग गई है कि मनुष्य मात्र प्राण और शरीर ही नहीं मन भी है। मन के विकास के फलस्वरूप ही वह मनुष्य को अधिकृत कर सकता है।[7]

सभ्य मानव जाति इस समय मुख्य रूप से जिस विचारधारा से अनुशासित हो रही है वह है विचारशील होना, नैतिकता से संपन्न होना, संकल्प तथा बुद्धि की सत्यता के अधीन होना, संसार तथा अपने अतीत को जानना और तदनुरूप सामाजिक और आर्थिक जीवन को सुसंगठित करना, प्राणिक अभ्यास और भौतिक सत्ता को समय ग्रुप में व्यवस्थित करना आदि। यद्यपि द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात पश्चिम की शिक्षा संबंधी

विचारधारा में बहुत परिवर्तन हो गया है तथापि मानव समाज पर इस विचारधारा का व्यापक प्रभाव अभी भी है। संक्षेप में, कहा जा सकता है कि यह विचारधारा योग्यता और उपयोगिता पर अधिक बल देने वाली है। स्पष्ट है कि मनुष्य इस समय भी भौतिक और प्राणिक अधिक है। श्री अरविंद का मानना है कि यद्यपि मानव की मनोमय तत्त्व जो अभी दिखाई तो नहीं देते परंतु मनुष्य के मन में सत्ता के रूप में विकसित होने के लिए अनिवार्य हैं, प्राप्त हो जाएंगे।[8]

सामान्यतया संस्कृति से अभिप्राय मनोमय जीवन का अनुशीलन है। प्राण में स्तर के उपरांत ही उसका मनोमय जीवन है, जिसके दो पहलू हैं-पहले में प्रकृति के अनुभवात्मक उद्देश्य की प्रधानता होती है जिसमें इंद्रियों, संवेदनों और आवेगों की स्थिति होती है। दूसरे में प्रकृति के बाह्य उद्देश्यों की प्रधानता रहती है अर्थात् इसका संबंध कर्म करने वाले अंगों और कर्म क्षेत्र से होता है। ऐसा नहीं है कि ये दोनों उद्देश्य एक दूसरे से निरपेक्ष हैं अपितु प्रधानता की दृष्टि से ऐसा विभाग किया गया है।

वर्तमान में विश्व मानव अवस्था के युग में है।श्री अरविंद के अनुसार अब समय आ गया है कि मानस,अधिमानस में उन्नत हो, वर्तमान विभिन्न सामाजिक तथा राष्ट्रीय संघर्ष, दुःख, अन्याय, अत्याचार, विनाश इन सबसे मुक्ति पाने का निश्चित इलाज अतिमानस अवस्था प्राप्त करने में है। अन्य सब उपाय तात्कालिक और आंशिक फलदाई सिद्ध होंगे। मानव संस्कृति इस यंत्र युग में अब इतनी विकृत हो गई है कि उसका ठीक नियंत्रण मानस के बस की बात नहीं है। सामान्य मानस की भूमिका से वर्तमान जागतिक संघर्षों का शाश्वत समाधान संभव नहीं है इसलिए उस दिशा में किए जाने वाले सारे मानवीय प्रयास एवं प्रयोग असफल हो रहे हैं। भीषण आणविक शस्त्रों से समस्त मानव जाति भयभीत है। अति मानस का अवतरण ही इस संसार को अब वास्तविक शांति प्रदान कर देगा। वही अब दुनिया का एकमात्र आशा स्थान है।[9]

किंतु अरविंद अति मानस का आगमन मात्र इक्का-दुक्का विशिष्ट व्यक्तियों में नहीं अपितु सारे समाज में चाहते हैं। उनका एकीकृत योग मात्र व्यक्तिरूप जीवात्मा के उद्धारनार्थ न होकर समग्र विश्व के विकासार्थ है। योग साधना जब तक किसी व्यक्ति या व्यक्तियों तक ही सीमित रहेगी तब तक योग वास्तव में एकीकृत नहीं होगा। साधक का दिव्य पूर्णत्व तभी यथार्थ कहा जाएगा जब वह स्वयं में तथा अन्य सभी प्राणियों में चैतन्य का एक ही स्रोत तथा प्रेम भाव और विश्वव्यापी सूत्र अनुभव करेगा। गीतू प्रदेश के कुछ श्लोकों का स्मरण अनिवार्य है-

योगयुक्तो विशुद्धात्मा विजितात्मा जितेन्द्रियः।
सर्वभूतात्मभूतात्मा कुर्वन्नपि न लिप्यते।।[10]

सर्वभूस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि।
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः।।[11]

सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः।
सर्वथा वर्तमानोऽपि योगी मयि वर्तते।।[12]

समं सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्तं परमेश्वरम्।
विनश्यत्वस्वविनश्यन्तं यः पश्यति से: पश्यति।।[13]

जिसका चित्त योग संपन्न है। अंतःकरण विशुद्ध है।जो स्वयं पर नियंत्रण रखता है, जिसने इंद्रियों को जीत लिया है तथा जो सब प्राणियों में स्वयं को अनुभव करता है वह (आवश्यक एवं उचित)कर्म करता हुआ भी उनमें लिप्त (आसक्त) नहीं होता(5/7)

सर्वत्र समृद्धि रखने वाला योग संपन्न व्यक्ति सब प्राणियों में स्वयं को एवं स्वयं में सब प्राणियों को देखता है (अनुभव करता है)(6-29)।

सब प्राणियों में स्थित मेरी (परमेश्वर) की जो उसी एकत्व भावना से भक्ति करता है वह योगी किसी भी प्रकार का आचरण करता हुआ भी मेरे स्वरूप में निवास करता (6-31) है।

सभी विनाशलीला प्राणियों में समान रूप से स्थित अविनाशी परमेश्वर को जो जानता है वही वास्तविक (सत्य) जानता है।(13--37)[14]

श्री अरविंद का मानना है कि विज्ञान ने संस्कृति को अथवा संस्कृति के बाह्य आकार को कुछ सीमा तक लोक व्यापक बना दिया। किंतु नीचे से बहुत संख्या में अर्धसभ्य लोगों के आ मिलने से संस्कृति का स्तर ऊपर उठा हो या उसे दृढ़ता प्राप्त हुई हो ऐसा नहीं लगता क्योंकि आज भी उत्तेजनाप्रधान कर्मवाद ही मानव का प्रेरक है और व्यापार वाद की आधुनिक सभ्यता का केंद्र है। कहने का तात्पर्य यह है कि आज भी मनुष्य की स्थिति असंस्कृत, मनोमय सत्ता की कर्मशील और उत्तेजना प्रवण स्थिति ही है। परिणामस्वरूप, विचार कला और साहित्य बहुत सस्ते हो गए। लेखक और विचारक को सामान्य जनों की रूचियों और अनुरक्तियों के अनुरूप रचना करनी होती है।[15]

'एक शब्द में उच्च मनोमय जीवन अच्छे और बुरे दोनों परिणामों के साथ लोकायत, संवेदनप्रधान तथा क्रियाशील बन गया है।.... विशेषत: शिक्षा की नवीन प्रणालियाँ, समाज के नवीन सिद्धांत, क्रियात्मक संभावना के क्षेत्र में आने शुरू हो गए हैं, जिनसे संभवत: एक दिन ऐसी घटना घटित होगी जो अभी अज्ञात है, अर्थात् मनुष्यों की एक ऐसी जाति की केवल एक वर्ग की ही नहीं सृष्टि होगी जिन्होंने कुछ सीमा तक अपने मनोमय पुरुष को प्राप्त और विकसित कर लिया होगा, वह मनुष्य जाति सुसंस्कृत होगी।[16]

यह निर्विवाद सत्य है कि भारतीय संस्कृत की शिष्टता अनेकों यूरोपीय विद्वानों को स्वीकार्य है किंतु यह बात भी उतनी ही सत्य है कि स्वयं से श्रेष्ठ की श्रेष्ठता के प्रति सहज विद्वेष का भाव मानव मन की स्वाभाविक वृत्ति है। प्रज्ञावान मनुष्य ही इस सत्य को स्वीकार कर पाता है। (द ह्यूमन साइकिल) अपने इस ग्रंथ में श्री अरविंद मानते हैं कि यूरोपीय विचारकों का चिंतन विज्ञान पर अवलंबित होने के कारण एक झूठी आत्मनिष्ठता के दोष से ग्रस्त है जिसके कारण सत्य उपेक्षित हो गया है और व्यक्ति अहंकार के परिणामस्वरूप जातीय सर्वोच्चता सिद्ध करने का प्रयास किया जाने लगा। श्री अरविंद किसी भी संस्कृति में निहित प्राणशक्ति का मापदंड तीन आधारों से निर्धारित करते हैं, जीवन के प्रति मौलिक चिंतन की शक्ति क्या है? जीवन के लिए प्राप्य आदर्श क्या हैं? तथा उन आदर्शों के अनुरूप कर्म करने की प्रेरक शक्ति क्या है?

इन तीन आधारों पर भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठता उच्च स्तर पर स्थापित है। श्री अरविंद स्पष्टत: कहते हैं कि,– वेद भारतीय संस्कृति का आध्यात्मिक और मनोवैज्ञानिक बीज है और उपनिषदें सर्वोच्च आध्यात्मिक ज्ञान एवं अनुभव के सत्य की अभिव्यक्ति। यह सत्य ही सदा इस संस्कृति का उच्चतम विचार और चरम ध्येय रहा है। इसी ध्येय की ओर इसने व्यक्ति के जीवन को तथा जाति की आत्मा की अभीप्सा को प्रेरित किया है। यह दो महान पवित्र ग्रंथ है इसकी काव्यमय और सर्जनशील आत्मअभिव्यक्ति के सर्वप्रथम महत् प्रयत्नों का फल है। यह विशुद्ध अंतरात्मा एवं आध्यात्मिक मन की भाषा में परिकल्पित एवं वर्णित है।[17]

वस्तुत:, श्री अरविंद ने दर्शन, धर्म, कला और सुव्यवस्थित जीवन के लिए सृजनात्मक कार्यों का उद्गम स्थल मन को ही स्वीकार किया है। मन की प्रवृति के अनुसार मनुष्य को सबल समृद्ध बौद्धिक व्यावहारिक कर्मों के कुशलतापूर्वक क्रियान्वयन की शक्ति प्राप्त होती है। मानसिक परिवर्तन आध्यात्मिक परिवर्तन और अति मानस में परिवर्तन हेतु मन की भूमिका प्रमुख है। यद्यपि हमारी संकल्प शक्ति सर्वोपरि है किंतु यह शक्ति भी केवल मन में ही उदित होती है।

श्री अरविंद यह स्पष्ट रूप में स्वीकार करते हैं कि अगर नैतिकता भारतीय संस्कृति का स्वर है तो धर्म, जीवन का आधार। धर्म को नैतिक मूल्यों की शक्ति प्राप्त है। इसे जनसामान्य तक बोधगम्य बनाने के लिए कलात्मक कृतियों, कथानकों और दृष्टांतों के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया है। यदि धर्म के सार तत्त्व की बात की जाए तो सत्य,सम्मान राजभक्ति, शुचिता, अहिंसा, क्षमा, दानशीलता, परोपकार आदि सद्गुणों की प्रधानता को श्री अरविंद ने महत्त्व दिया है। इनके अनुपालन से मन में सात्विकता आती है तथा जीवन में हम दिव्य ज्ञान की प्राप्ति की ओर अग्रसर होते हैं।

श्री अरविंद के अनुसार धर्म एवं दर्शन का समन्वित स्वरूप ही संस्कृति है। भारतीय दर्शन अन्यान्य दर्शनों से पृथक मात्र अनुमान तर्क वितर्क शब्द जाल से परे सुव्यवस्थित बुद्धिमूलक सिद्धांत है। यह उन सबको क्रमबद्ध करने वाला अंतर ज्ञानात्मक बोध है जो भारतीय धर्म की आत्मा है। भारतीय दर्शन में निहित विचार क्रियाशील, सत्य एवं सारभूत अनुभव है। इससे आध्यात्मिक शक्ति उत्पन्न होती है, जिसके कारण अंतर एवं बाह्य में तथा मनुष्य के विचार एवं आचरण में भेद नहीं रहता है।

संदर्भ:

1. श्री अरविंद- भारतीय संस्कृति के आधार, जगन्नाथ वेदालंकार तथा चन्द्रदीप त्रिपाठी द्वारा अनूदित, श्रीअरविंद सोसायटी, पाण्डिचेर, 1968,पृ.66
2. डॉ विश्वनाथ प्रसाद वर्मा-द पोलिटिकल फिलासफी ऑफ श्रीअरविंद,- मोतीलाल बनारसीदास(1976) पृ.162
3. उमेशचंद्र दुबे, श्रीअरविंद का संस्कृति दर्शन; प्रथम संस्करण,1993, भारतीय विद्या प्रकाशन, वाराणसी,पृ.2
4. वही, पृ.5
5. श्रीअरविंद, भारतीय संस्कृति के आधार,पृ.413
6. श्रीअरविंद,मानव चक्र, लीलावती इन्द्रसेन द्वारा अनूदित, श्रीअरविंद सोसायटी, पाण्डिचेरी,1970
7. उमेश चन्द्र दुबे, श्रीअरविंद का संस्कृति दर्शन,पृ.6
8. श्रीअरविंद,मानव चक्र,पृ.83
9. प्रो.ग.वा.कवीश्वर,श्री अरविंद की अतिमानस तथा दिव्य जीवन की अव-धारणा;(भारतीय दार्शनिक निबंध, संपादक- डॉ.डी.डी.बंदिष्टे तथा डॉ. रमाशंकर शर्मा, षष्ठ संस्करण-2008, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी,- पृ.380
10. श्रीमद्भगवद्गीता; 5/7
11. वही; 6/29
12. वही,6/31
13. वही,13/27
14. प्रो. ग. वा.कवीश्वर, पृ.381
15. उमेशचंद्र दुबे, श्रीअरविंद का संस्कृति दर्शन,पृ.12
16. श्रीअरविंद,मानवचक्र(लीलावती इन्द्रसेन द्वारा अनूदित);पृ.101
17. श्रीअरविंद, भारतीय संस्कृति के आधार, श्रीअरविंद सोसायटी,पृ.337

❖

दर्शन एवं धर्म विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
मो. 9455666710

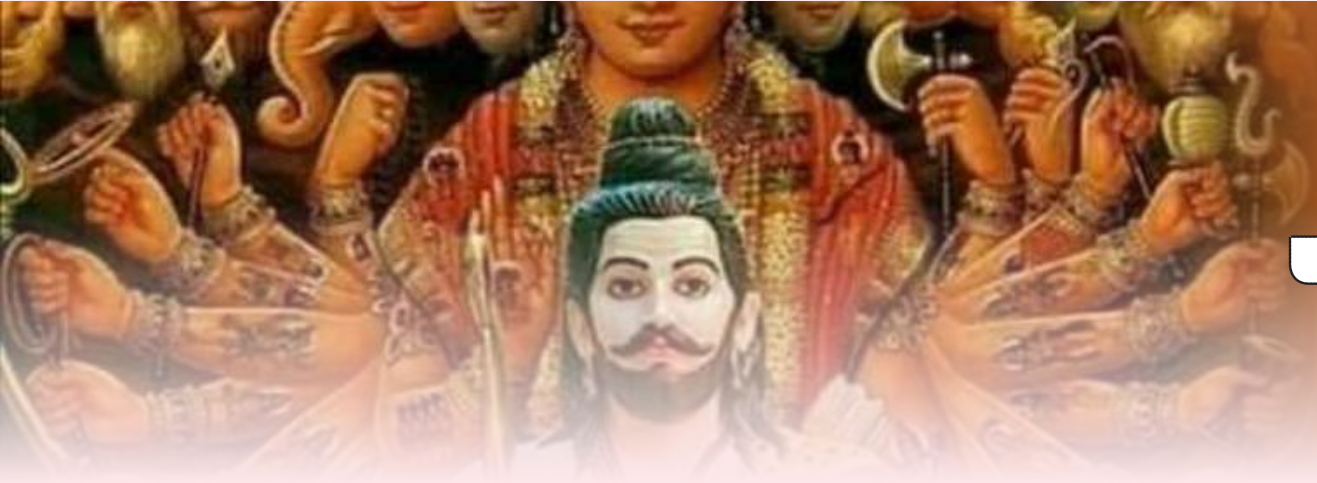

भगवान विष्णु का परशुरामावतार

अमिय भूषण

सर्वाधिक भगवत अवतार और संतों का जन्म इसी मास में हैं। बैशाख की शुरुआत के साथ ही जहाँ कृष्ण पक्ष में सती अन_सुइया और नाथपंथियों के आद्य गुरु मक्षेन्द्रनाथ जी का जन्म हैं। वहीं सिख पंथ के दस गुरुओं में से अंगद देव,अमरदास और अर्जुन देव का जन्म दिवस यही ऋतु मास हैं। बात अगर अवतारी संतों की बात करें तो बैशाख के इसी महीने में आद्य शंकराचार्य, रामानुजाचार्य,भक्त कवि सूरदास,हित हरिवंश,संत बसवेश्वर,गुरु गोरक्षनाथ का आगमन भी धरा धाम पर हुआ हैं। महर्षि पराशर और वशिष्ठ ऋषि की जयंती भी इस मास में आती हैं। किन्तु इसके शुक्ल पक्ष तृतीय तिथि की कोई तुलना नहीं हैं। यह अक्षय दिवस एक नहीं अपितु भगवान के चार-चार अवतारों का अव-तरण दिवस हैं। यह सनातन हिंदू मान्यताओं की स्वयं सिद्ध तीन महत्त्वपूर्ण तिथियों में से पहली तिथि है।

यूं तो अपने में हर महीना खास होता हैं। वहीं हर ऋतु का अपने में एक अलग अंदाज़ होता हैं। फ़िजायें भी खुद में बदली-बदली-सी लगती हैं। वहीं नज़ारे भी बदले बदले-से नजर आते हैं। प्रकृति में हर तरफ बदलाव की आहट महसूस होती हैं। बात अगर भारतीय उप महाद्वीपीय की करें तो यहाँ हर बदलते मिज़ाज-ए-मौसम के साथ ही ढेरों उत्सव पर्व आते रहते हैं। भोजन, बोली, पहनावे के साथ ही यहाँ तीज-त्योहारों को लेकर भी विविधताएँ हैं। जहाँ दुनिया के दूसरे हिस्सों में मजहबी मान्यता वाले उत्सव पर्वों की भरमार हैं। वहीं यहाँ धर्म और संस्कृति आपस में इस कदर गूँथे हैं कि उनको एक दूसरे से अलग कर पाना संभव ही नहीं हैं। शायद इसका कारण यहाँ के हवा और पानी में हो। तभी तो यहाँ हर विचार हर जातिये पहचान वाले समूहों का सदैव स्वागत हैं। वहीं हम जहाँ भी जाते रहे हैं वहाँ एक सुसंस्कृत संस्कृति समाज के गठन में अपना योगदान देती रही हैं। आज भी हम विश्व को श्रेष्ठ बनाने और आतिथ्य सेवा को अपना सौभाग्य मानते हैं। इसलिए हम वर्ष भर ढेरों उत्सव पर्व मनाते हैं। हर आगंतुक अतिथि का दिल खोल कर स्वागत करते हैं। हमारी यह रीति नीति हमें हमारे पूर्वजों से मिली हैं। जिन्हें बड़े बुजुर्गों से जानबूझकर हम आज भी जीवंतता के साथ ये ढेरों उत्सव पर्व मनाते हैं। मानव इतिहास के महामानवों की जयंती और अवतारी पुरुषों के अवतरण दिवस को हम धूमधाम से के साथ युगों-युगों से मनाते आए हैं। पश्चिम या फिर दुनिया की अन्य संस्कृति के ठीक उलट हम आज भी अपनी परंपरा मान्यताओं से गहरे जुड़े हैं। आखिर हो भी क्यों नहीं यह धरती तो ऋषि मुनि और देवताओं की धरती हैं। जहाँ प्रकृति के पंच महाभूतों से परमात्मा सृष्टि के कल्याण और दुष्टों के संहार को प्रगट होते हैं। यहीं तो देवता और ऋषि जन्म लेने को लालायित होते रहते हैं। यह धरती जम्बूद्वीप आर्यावर्त्त भरत खंड भारतवर्ष हैं। यहाँ के कंकड़ कंकड़ शंकर और हर नदिया जल गंगा हैं। यही देवता और ऋषि इस जगत के कल्याण हेतु निरंतर चिंतन और प्रयत्नशील होते रहे हैं।

इसलिये ये संस्कृति और धरती पश्चिम के दकियानूसी समाज, अनुदार जातिय पहचान और रूढ़िवादी धार्मिक मान्यताओं से कोसों दूर हैं। प्रकृति के परिवर्तन में विश्वास और उन्नत खगोल- गणित विज्ञान वाले इस समाज का वर्ष वसंत ऋतु के साथ प्रारंभ होता हैं। चैत्र मास के आगमन के साथ ही सृष्टि सृजन उत्सव के अनेक पर्व एक साथ आ जाते हैं। प्रकृति पूजन नारी पूजन के पावन पर्व चैत्र नवरात्रा से हमारा नवसंवत्सर प्रारंभ होता हैं। इस प्रथम मास में भारतीय उपमहाद्वीप और हिन्दू मान्यताओं से ओतप्रोत हर संस्कृति हर भाषायी समाज का नूतन वर्ष भी आता हैं। यह सृष्टि के सृजन और विस्तार का मास हैं। सनातन

मान्यता में इसी मास में सृष्टिकर्त्ता ब्रह्म से सृष्टि का सृजन प्रारंभ किया था। वहीं मैथुनी सृष्टि के वाहक संवाहक कारक और कर्त्ता कामदेव का भी अवतरण दिवस हैं। इसीलिए इसे मधुमास भी कहा गया हैं। सनातन दर्शन विज्ञान के अनुसार चौबीस एक विशिष्ट संख्या हैं। जहाँ सांख्य दर्शन में आत्मा के अलावा संसार में चौबीस तत्त्वों का विचार हैं। वहीं योग दर्शन जीव और शिव के इतर चौबीस अन्य तत्वों से इस सृष्टि को निर्मित मानता हैं। इसलिए सनातनी मान्यताओं वाला सर्वव्यापी अविनाशी ईश्वर इसके हर तत्त्व में विराजमान हैं। अतः ऐसे में इस चौबीस घंटे के अहोरात्र और चौबीस तत्वों वाले जगत के कल्याणार्थ विभु विधाता को इतने अवतार लेने पड़ते हैं। यहाँ देवों के अवतार तो कई हैं किंतु इन अवतारों में दशावतार की महत्ता सर्वाधिक हैं। वास्तव में ये सृष्टि के विकास का क्रम चक्र हैं। वैसे इसको लेकर दो अलग अलग मान्यतायें हैं। जहाँ महाभारत में यह हंस देव से शुरू हो कल्कि देव पर समाप्त होता हैं। वहीं पुराण ग्रंथानुसार यह क्रम मत्स्य देव से प्रारंभ होकर कल्कि अवतार पर समाप्त होता हैं। दोनों ही सूची में बुद्ध और हंस अवतार देव को छोड़ कर सभी अवतारों के नाम में समानता हैं। वहीं इन सभी अवतारों के प्राकट्य की तिथियाँ भी अदभुत हैं। मत्स्य अवतार जहाँ चैत्र शुक्ल तृतीया को वहीं मर्यादाओं वाला रामावतार चैत्र शुक्ल नवमी को आता हैं। बैशाख माह में एक तरफ प्रबल पराक्रम अवतार परशुरामावतार का जन्मोत्सव हैं, वहीं हम कारुण्य अवतार करुणामय गौतम बुद्ध का भी अवतरण दिवस इसी महीने मनाते हैं। चैत्र कृष्ण नवमी को तीर्थकर ऋषभदेव और इसी मास के शुक्ल पक्ष त्रियोदशी को चौबीसवें तीर्थकर महावीर स्वामी की जयंती मनायी जाती हैं। मासों में प्रथम इस मास के चैत्र शुक्ल षष्ठी को देवी यमुना का आगमन होता हैं। वहीं देवी गंगा शिव की जटाओं से स्वर्ग से मृत्यु धरा पर इसी दिन अवतरित होती हैं। यह गंगोत्पत्ति अवतरण दिवस बैशाख शुक्ल सप्तमी हैं। सनातनी मान्यताओं में इसी दिन गंगोत्री से पहली धारा फूटी थी मानवता के कल्याण को गंगा हिम शिखरों से मैदानों को निकली थी। बात अगर देवी के अवतारों की हो तो दस महाविद्याओं वाली तारा चैत्र मास के शुक्ल पक्ष नवमीं को तो वहीं बंगलामुखी और छिन्नमस्ता का प्रादुर्भाव बैशाख मास में हुआ हैं। महालक्ष्मी अवतार माँ सीता का प्राकट्योत्सव जहाँ बैशाख शुक्ल नवमी हैं वहीं माँ रुक्मिणी इसी पक्ष के नवमी को जन्मी हैं। समस्त सृष्टि के आद्य पुरुष प्रकृति और देव-दानवों के पितृ पुरुष ऋषि कश्यप का जन्मोत्सव भी इन्ही दिनों में हैं। हिन्दू धार्मिक मान्यताओं के अनुसार ये महीने बड़े पावन हैं। सूर्य का प्रकाश हर जगह तक पहुँचता हैं। इन महीनों में दिन बड़ा और रात छोटी होती हैं। सर्वत्र नवजीवन का संचार होता हैं। खेती किसानी भी तो ज़ोरों पर होती हैं। हिन्दू मान्यताओं के अनुसार यह देवताओं का दिवस और असुरों की निशा हैं। चैत्र से भादो तक के इन्ही मासों में सभी अवतारों का जन्म होता हैं। वहीं अधिकांशतः ऋषि मनीषियों का जन्म भी इन्हीं पावन महीनों का हैं। किन्तु बैशाख के इस महीने की बात ही कुछ और हैं। सर्वाधिक भगवत अवतार और संतों का जन्म इसी मास में हैं। बैशाख की शुरुआत के साथ ही जहाँ कृष्ण पक्ष में सती अनसुइया और नाथपंथीयों के आद्य गुरु मक्षेन्द्रनाथ जी का जन्म हैं। वहीं सिख पंथ के दस गुरुओं में से अंगद देव,अमरदास और अर्जुन देव का जन्म दिवस यही ऋतु मास हैं। बात अगर अवतारी संतों की बात करें तो बैशाख के इसी महीने में आद्य शंकराचार्य, रामानुजाचार्य,भक्त कवि सूरदास,हित हरिवंश,संत बसवेश्वर,गुरु गोरक्षनाथ का आगमन भी धरा धाम पर हुआ हैं। महर्षि पराशर और वशिष्ठ ऋषि की जयंती भी इस मास में आती हैं। किन्तु इसके शुक्ल पक्ष तृतीय तिथि की कोई तुलना नहीं हैं। यह अक्षय दिवस एक नहीं अपितु भगवान के चार-चार अवतारों का अवतरण दिवस हैं। यह सनातन हिंदू मान्यताओं की स्वयं सिद्ध तीन महत्त्वपूर्ण तिथियों में से पहली तिथि हैं। ये अक्षय ऊर्जाओं वाले अविनाशी भगवान विष्णु के अवतार भार्गव राम के जन्मोत्सव की पावन तिथि हैं। यूं तो इस तिथि पर भगवान विष्णु के द्वादश अवतारों में से भगवान हयग्रीव और नर नारायण का भी प्राकट्य हुआ हैं। यह दस महाविद्याओं में से एक माता मातंगी का भी प्रकाट्य दिवस हैं। किंतु इसकी महत्ता प्रथमः मनुज अवतार के जन्मोत्सव नाते बढ़ जाती हैं। इस वर्ष यह तिथि 3 मई को हैं। बात अवतारों की करें तो भगवान भार्गव राम एक विशिष्ट दैवीय अवतार हैं। जहाँ पूर्व अवतारो में परमात्मा प्रकृति के पंच महाभूतों से क्षण भर के लिए प्रगट होते थे। अपने निर्दिष्ट कार्य को करते और फिर अनंत अंतरिक्ष में अंतर्ध्यान विलीन हो जाते थे। किन्तु ये अवतार पूर्ण विकसित विशुद्ध मानवीय अवतार था। मानवीय मूल्यों संवेदनाओं से भरा था। मत्स्य से प्रारंभ हुए अवतार वास्तव में सृष्टि के विकास का चरण हैं। जिसने भगवान परशुराम तक आते-आते अपने जैविक विकास क्रम चक्र को पूरा कर लिया था। मत्स्य जलीय तो कूर्म-कच्छप उभयचर अवतार थे। जहाँ नृसिंह पशु के मनुष्य बनने की प्रक्रिया के प्रतीक अवतार हैं। वहीं भगवान वामन आधुनिक मानव के पूर्ववर्ती अवतार हैं। वो मानवीय विकास क्रम के प्रक्रिया के प्रतीक हैं। किंतु इन अवतरणों के आगमन तक मनुष्य ने अपनी विकास यात्रा पूर्ण नहीं की थी। वो यात्रा तो वास्तव में भार्गव राम से शुरू होती हैं। ये भृगुकुल में जन्म के नाते भार्गव कहे गए। जमदग्नि ऋषि पुत्र होने के नाते

जामदग्न्याय कहे गए। रेणुका माता के गर्भ से जन्म के नाते रेणुका पुत्र भी पुकारे जाते हैं। सदैव परशु धारण करने के नाते इस भगवत अवतार का सर्वाधिक जनप्रिय नाम परशुराम ही हैं। इनका परशु वो शस्त्र हैं जिसके प्रहार से रणभूमि में किसी का भी हृदय विदीर्ण किया जा सकता हैं। वहीं जरूरत पड़ने पर इसे फेंक कर किसी दुष्ट का गला भी उड़ाया जा सकता हैं। यह परशु एक अस्त्र और एक शस्त्र भी हैं। यह एक ऐसा हरवा हथियार था जिससे आप घरेलू कार्यों से लेकर बर्बर निशाचर तक से अपने लोगों की रक्षा कर सकते थे। यह मनुष्यता के इतिहास का पहला अवतार था। जब किसी मनुष्य ने अपनी कृतियों से देवत्व की सर्वप्रथम प्राप्ति की थी। अगर कहें तो भार्गव राम मानवीय सभ्यता के न केवल प्रथम नायक बल्कि मनुजों के आदिदेव भी हैं। एक योद्धा एक ब्रह्मचारी योगी और अनेकों विद्याओं के प्रवर्तक आचार्य भी हैं। इसलिए इनको लेकर पुराणों में कहा गया हैं-

अग्रतः चतुरो वेदाः पृष्ठतः सशरं धनुः।

इदं ब्राह्मं इदं क्षात्रं शापादपि शरादपि

अर्थात जो शौर्य में समपूर्ण और ज्ञान से सदैव परिपूर्ण हैं। जिनके पास श्राप और वर दोनों की शक्ति अपार हैं। वहीं तो भगवान विष्णु के प्रथम मनुज अवतार हैं। भगवान भार्गव राम दंड और अभय दोनों के सगुन साकार रूप थे। ये दुनिया के सबसे प्राचीन युद्धकला कलरीपायट्टु के जनक थे। वहीं युद्ध विद्या में धनुष गदा एवं मल्ल युद्ध के विशेष ज्ञाता थे। जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण इनके शिष्यों में महापराक्रमी भीष्म,द्रोण, बलराम और कर्ण का होना हैं। भगवान भार्गव राम नारी समानता और शिक्षा ज्ञान के भी प्रबल पैरोकार थे। इन्होंने रोहिणी को युद्ध विद्या की शिक्षा भी दी थी। वहीं ऋषि अगस्त की स्त्री देवी लोपामुद्रा,अत्रि मुनि की पत्नी सती अनसुइया और देवी लोम्हार्षिणी को लेकर नारी जागृति का अभियान चलाया था। क्षत्रिय कुल शिरोमणि राजा दिवोदास की पुत्री देवी लोम्हार्षिणी भगवान भार्गव राम की बाल सखा थी। अगर कृषि और तकनीक की बात हो तो इनका यहाँ भी अतुलनीय योगदान हैं। दशरथनंदन राम के पूर्व ये पहले अवतारी मानव हैं जिन्होंने समुद्र का उपयोग मानवीय हितों के लिए किया था। जहाँ रघुकुल नंदन राम ने समुद्र में सेतु बांधा वहीं भृगुकुलनन्दन राम ने समुद्र से भूमि निकालकर यहाँ मानव बस्तियाँ बसाई थीं। आज भी भारत के दक्षिणी राज्य केरल और दक्षिणी पश्चिम भारत के गोआ प्रान्त के लोगों मान्यता हैं कि यहाँ पहले समुद्र था। जिसे भूमि में बदलकर भगवान भार्गव राम ने उनके पुरखों को बसाया था। फिर खेती करनी सिखाई। वहीं गुजरात से लेकर नेपाल तक कई ऐसे जलस्रोत हैं जहाँ स्थानीय निवासी इसे भगवान भार्गव राम द्वारा प्रकट किया बताते हैं। गुजरात में राम गंगा हैं तो नेपाल के दोलखा जिला के बिगू गाँव में राम बाण जल स्रोत हैं। यहाँ का जल शुद्व और औषधीय गुणों से परिपूर्ण हैं। ये जल के स्रोतों को ढूँढना उन्हें पहाड़ों से मैदान तक लेकर आना क्या कोई सामान्य काम हैं क्या!आज दुनिया के पास समुद्री भूमि के उपयोग का कई सफल उदाहरण हैं। इनमें नीदरलैंड के हॉलैंड का उदाहरण सर्वाधिक पुराना और प्रामाणिक हैं। यहाँ नीदरलैंड के विज्ञानियों ने हॉलैंड प्रान्त में अपने हुनरों से समुद्र में डूबी भूमि का एक बड़ा टुकड़ा प्राप्त कर वहाँ मानव बसती बसा रखी हैं। संभवतः यह हॉलैंड की सम्पूर्ण भूमि का करीब चालीस प्रतिशत हिस्सा हैं। ऐसा ही तो भगवान परशुराम ने मनुष्यता के इतिहास में वर्षों पूर्व किया था। समुद्र से निकाली भूमि पर न केवल एक मानव बस्ती बसाई अपितु एक श्रेष्ठ सुसंस्कृत समाज व्यवस्था की रचना भी की थी। यहाँ केरल गोआ के लोग आज भी उन्हें अपना पितृ पुरुष मानते हैं। भगवान परशुराम ने लोगों को कला संस्कृति के साथ ही उन्नत कृषि वानकी सिखाई। वो देशज शास्त्र के आदि ज्ञाता थे। कृषि के विकास और विस्तार के लिए उन्होंने ज्ञानी अग्निहोत्रीय को इस ओर प्रवृत्त किया था। वहीं दंभ दर्प से भरे आततायी शासन का दमन भी किया था। अव्यवस्था न फैले इसलिए नवीन शासकीय व्यवस्थाओं का सृजन न्याय विधान और धर्मोनकूल किया था। जहाँ ऋषि अगस्त ने द्रविड़ भूमि- तमिल भूमि तक आर्यत्त्व का संदेश पहुँचाया। वहीं भार्गव राम भगवान ने नर्मदा के पार वाले वन अरण्य कंदराओं तक आर्यत्त्व का संदेश पहुँचाया हैं। जहाँ राम मर्यादाओं के वाहक और परशुराम संस्कृति के संवाहक थे। यहाँ राम की लीला त्रेता और रावण के नाश तक थी। वहीं परशुराम की प्रतीक्षा कल्कि अवतार के आने तक की हैं। दशावतारों में यह पहले और इकलौते ऐसे अवतार हैं जो आते सतयुग में हैं। वहीं लौटते हर बार कल्कि अवतार दीक्षा के बाद हैं। जिसका जिक्र कल्कि उपपुराण में हैं। परशुराम वो प्रतीक और भगवान हैं जिनके कदमों की आहट आपको चारो युगों में सुनाई देगी। त्रेता में रघुनंदन राम जी से जनकपुर नगरी में संवाद हुआ हैं। वहीं जनक के पितर राजा देवरात को इन्होंने दक्ष यज्ञ विध्वंस के बाद अपना प्रिय धनुष पिनाक आशीर्वाद स्वरुप दिया था। यह पिनाक शारंगधारी भगवान के इस अवतार को स्वयं शिवजी ने भेंट किया था। इस परशुराम अवतार के चरण चिन्ह आपको भारत वर्ष के हर हिस्से में दिख जाएंगे। नेपाल हो या भारत, बिहार हो या झारखंड या फिर गुजरात उत्तराखंड से लेकर अरूणाचल प्रदेश और उड़ीसा गोआ केरल तक विस्तृत भारत। वहीं भारतीय उपमहाद्वीप के हर हिस्से में भगवान परशुराम से जुड़े हुए अनेकों पवित्र तीर्थ स्थान अवस्थित हैं। अगर सही

मायनों में शोध हो तो ये संकेत हमें सुदूर पूर्व से पश्चिम में मध्य पूर्वी देशों तक लेकर जाएंगे। परशुराम की कथाएँ स्थानीय प्रकृति और पात्रों को लेकर बुनी इंडोनेशियाई कावि रामकथा में भी हैं। वहीं मध्य पूर्वी देश तुर्कमेंनिस्तान की राम कथा के प्रमुख पात्रों में से एक भार्गव राम हैं। हाँ समय की यात्रा सांस्कृतिक प्रदूषण और भारत से मैत्री संबंधों में आए कमी के नाते राम परशुराम वाले तुर्क रामायण की कथाएँ बदल सी गई हैं। अग्रज अनुज संबंधों वाले इस संबंध को यहाँ पक्ष-विपक्ष दिखाया हैं। संभवतः इस्लामिक प्रभावों ने इस राम गाथा की मूल कथा को ही बदल कर परशुराम चरित्र को यहाँ एक खलनायक के तौर पर पेश किया हैं। खैर क्या कहा जाए जब "साई एक अवतार" विश्वास के साथ बढ़ रहे हिंदू पहचान वाले भारत नेपाल में परशुराम उपेक्षित हैं तो भला तुर्कमेंनिस्तान की चर्चा कहाँ तक छेड़ी जाए। परशुराम कौन हैं भारत के राष्ट्रकवि दिनकर कहते हैं-

मुख में वेद पीठ पर तरकस ,

कर में कठिन कुठार विमल।

ये उन्होंने अपनी लोकप्रसिद्ध काव्य संग्रह 'परशुराम की प्रतीक्षा' में कहा हैं। वास्तव में हमारी धार्मिक चेतना के आद्य पुरुष को ही हमने भुला दिया। वर्ना आज साई सबुरी मंदिरों में नहीं होते और सच्चे अवतार वन में खाक नहीं छान रहे होते आज भगवान भार्गव राम के विराट व्यापक चरित्र से सभी को परिचय कराने की आवश्यकता हैं। वहीं उनको लेकर समाज में चल रही नकारात्मक धारणाओं के निर्मूलन के भी उन्मूलन की जरूरत हैं। इसके साथ ही भगवान भार्गव से जुड़े पवित्र तीर्थस्थानों को चिन्हित करने और उनके विकास की आवश्यकता हैं। इससे जहाँ रोजगार के अवसर बढ़ेंगे वहीं सामाजिक जुड़ाव और भी गहरा होगा। इन प्रयासों से भारतीय उपमहाद्वीप के अंदर आपसी सांस्कृतिक जुड़ाव प्रगाढ़ होगा। क्योंकि सनातन मान्यतानुसार सभी अवतारों के उद्देश्य एक ही हैं। हर अवतार धर्म के स्थापन अधर्म के नाश प्राणियों में सद्भावना और विश्व के कल्याण के लिए हैं। राम हों कृष्ण हो, बुद्ध, महावीर या फिर भगवान भार्गव राम हों सबने अपने-अपने दौर में सज्जन शक्तियों का संरक्षण और दुर्जनों का संहार किया हैं। इन्होंने उनकी दुर्जनता का नाश और प्रकृति का सदैव रक्षण विकास किया हैं। भगवान भार्गव राम के इन्हीं गुणों को प्रकाशित करने और समाज के कुछे-एक वर्गों में चली आ रही पूर्ववत नकारात्मक धारणाओं को भी बदलने की जरूरत हैं। क्योंकि ये सभी अवतार जीवात्मा के कल्याण मानवीय मूल्यों के विकास और दानवीय प्रकृति वाले दनुज विशेष के दलन के लिए हैं। भगवान भार्गव राम को आधार बनाकर जहाँ एक ओर भारत नेपाल संबंधों के बेहतरी की बात हो सकती हैं। वहीं इनको आधार बना कर भारतीय उपमहाद्वीप के देशों में आपसी प्रेम संबंधों को भी मजबूत किया जा सकता हैं। पूरे उपमहाद्वीप और कहें तो इसके बाहर भी एशिया महाद्वीप के देशों में आपसी पर्यटन एवं सांस्कृतिक आदान प्रदान को हम बढ़ावा दे सकते हैं। परशुरामवता से जुड़े ये चिन्ह हमें पौराणिक साहित्य से लेकर लोकमानस की गाथाओं तक में घुले मिलेंगे। पड़ोस के नेपाल के सिरहा जिला में भगवान भार्गव राम द्वारा प्रज्ज्वलित अखंड रामधून हैं। वहीं नेपाल में इनके धनुष से जुड़ा धनुषा तीर्थ भी हैं। वहीं राम परशुराम के संवाद की साक्षी जनकपुर नगरी मिथिला धाम आज भी परशुराम के प्रतीक्षा में खड़ी हैं। बस आवश्यकता भगवान परशुराम के चरित्र पक्ष से अवगत कराते हुए समाज तक उनके पावन संदेशों को देने की हैं। विभिन्न राम कथा, महाभारत के साथ ही पुराणों में इनपर विपुल साहित्य भरा पड़ा हैं। जहाँ अठारह महापुराणों में से भागवत, स्कंद,कूर्म,मत्स्य,ब्रह्मांड एवं ब्रह्मवैवर्त्त पुराण में इनकी विषद चर्चा हैं। वहीं उप पुराणों में अति प्राचीन कल्कि औप पुराण के साथ ही भार्गव एवं नृसिंह पुराण में भी इनकी चर्चा हैं। जहाँ ब्रह्मवैवर्त्त पुराण के अन्तर्गत गणेश खंड में वहीं ब्रह्मांड पुराण के उपोद्धातपाद में परशुराम चरित्र की चर्चा आई हैं। कूर्म पुराण के ब्राह्मी संहिता में इनके भृगु वंश का वर्णन किया गया हैं। वहीं मत्स्य पुराण के अंतर्गत दशावतार चरित्र के माध्यम से भगवान भार्गव राम के चरित्र को प्रकाशित किया गया हैं।

बस प्रयास इनको लेकर आगे बढ़ने की हैं। अगर ज्यादा कुछ न भी किया जाए तब भी केवल भारत नेपाल में अवस्थित भगवान भार्गव राम से जुड़े पावन स्थल के तीर्थों की जागरण यात्रा द्वारा भी बहुत कुछ हो सकता हैं। इसके साथ ही अन्य पवित्र तीर्थ स्थलों के हाल सुधरेंगे। तालुकात बेहतर होंगे और प्रकृति संस्कृति,भारत भारतीयता और हिन्दू हिंदुत्व से संबंधित विषयों पर भी समाज जागरण होगा। ऐसे यात्रा और धार्मिक सर्किट निर्माण में भारत नेपाल संबधों के बेहतरी के सूत्र भी छिपे हैं। वहीं नेपाल और भारत की केंद्रीय सरकार और स्थानीय सरकारों को भगवान भार्गव राम के नाम से एक धार्मिक सांस्कृतिक पर्यटन सर्किट पर काम किया जा सकता हैं।

❖

भारतीय ज्ञान परंपरा अध्येता
सदभावना नगर लेन न.-1, कलमबाग रोड मुजफ्फरपुर, राज्य- बिहार
पिन कोड-842001 संपर्क सूत्र- +919955676400, 8707773779
ईमेंल आईडी- amiyasharmaa@gmail.com

हिंदीतर प्रदेश त्रिपुरा में हिंदी भाषा व साहित्य : एक अवलोकन

डॉ. कालीचरण झा

त्रिपुरा की वर्तमान भाषायी स्थिति के संदर्भ में यह तथ्य अव-लोकनीय है कि कुछ ऐतिहासिक कारणों से बँगला भाषा इस प्रदेश की महत्त्वपूर्ण एवं प्रभावशाली भाषा रही है। "राज्य के तत्कालीन शासकों ने बंगला को राजकीय एवं प्रशासनिक भाषा के रूप में संरक्षण दिया। अब तो यह जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में स्वयं को स्थापित कर चुकी है। करीब अस्सी फीसदी लोग अपने दैनिक जीवन में बंगला भाषा का इस्तेमाल करते हैं। यहाँ तक कि त्रिपुरी (कॉकबरक) बंगला लिपि में लिखी जाती है। यही कारण है कि त्रिपुरी लोग बंगला समझ एवं बोल लेते हैं। त्रिपुरियों के प्रबुद्धवर्ग की बंगला भाषा पर महारत हासिल होती है। ये बंगला भाषा पर मातृभाषा जैसी पकड़ रखते हैं। इनकी बौद्धिक एवं सांस्कृतिक उपलब्धियाँ उतनी ही उच्च है जितनी किसी अन्य उन्नत समुदाय की।

पूर्वोत्तर भारत में स्थित तथा 10491.69 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला वर्तमान त्रिपुरा भारत का छोटा-सा प्रदेश है, जिसकी सीमाएं बांग्लादेश, मिज़ोरम एवं असम से लगी हुई हैं। 15 अक्टूबर, 1949 में भारतीय संघ में विलय से पूर्व त्रिपुरा एक देशी रियासत था। ऐसा माना जाता है कि प्राचीन त्रिपुरा का भौगोलिक विस्तार विस्तृत था। "यह तथ्य है कि प्राचीनकाल में त्रिपुरा का सीमा-विस्तार बंगाल की खाड़ी तक था, जब उसके शासकों का प्रभुत्व गारो हिल्स से अराकान तक था... गौरतलब है कि आज भी पहाड़ी लोग तिपरा शब्द का उच्चारण करते हैं न कि त्रिपुरा का।"[1] त्रिपुरा का सम्बन्ध प्राचीन राजा द्रूहायु, त्रिपुर और त्रिलोचन से भी जोड़ा जाता है। जो भी हो इतना तो तय है कि महाभारत समय तक इस प्रदेश की एक स्पष्ट पहचान स्थापित हो चुकी थी। इसीलिए भारतीय सभ्यता और संस्कृति को जानने के लिए पूर्वोत्तर भारत को भी जानना होगा। हमें लगता है कि पूर्वोत्तर हमसे बहुत दूर है किन्तु जब हम इसका ऐतिहासिक व सांस्कृतिक अध्ययन करते हैं तो हम पाते हैं कि यहाँ के रहवासियों का संबंध भारत के शेष भाग से सदियों से रहा है। अपने प्राकृतिक सौन्दर्य, ऐतिहासिक,सांस्कृतिक व आध्यात्मिक विशिष्टताओं तथा सामरिक व वाणिज्यिक विशिष्टता के कारण त्रिपुरा हमारे लिए विशेष महत्त्व रखता है।

भाषायी दृष्टि से पूर्वोत्तर भारत एक विलक्षण चित्र प्रस्तुत करता है। हक़ीकत तो यह है कि "उत्तर-पूर्व भारत के एक विस्तृत एवं जटिल नृजातीय व सामाजिक भाषायी बनावट में विभिन्न भाषा परिवारों की लगभग 420 भाषाएँ एवं बोलियाँ बोली जाती हैं। उपर्युक्त तथ्य इस क्षेत्र की भाषा संबंधी समस्याओं की एक विलक्षणता एवं विशिष्टता प्रदान करता है। यह विस्तृत नृजातीय क्षेत्र सात राज्यों की 209 अधिसूचित जनजातियों और गैर-जनजातियों की विषमांग आबादी को समाहित करता है।"[2] पूर्वोत्तर भारत में स्थित तथा 10491.69 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला वर्तमान त्रिपुरा भारत का छोटा-सा प्रदेश है, जिसकी सीमाएँ बांग्लादेश, मिज़ोरम एवं असम से लगी हुई हैं। यहाँ की कुल जनसंख्या 36,71,032 में से जनजातियों की जनसंख्या 11,66,813 है।[3] यहाँ विभिन्न प्रकार की उन्नीस मूलजनजातियों का अधिवास है। यहाँ की मूलजनजातियों की भाषाओं को तीन मुख्य भाषायी वर्गों में बाँटा गया है- बोडो वर्ग, कूकी चीनी वर्ग तथा अराकान वर्ग। बोडो वर्ग के अंतर्गत आठ जनजाति वर्ग हैं- त्रिपुरी, जमातिया, रियांग, नोआतिया,उचाई,

कोलाई, मुडासिंह और रूपिणी। ये सभी जनजातियाँ बोडो वर्ग के अंतर्गत मानी जाती हैं और इनका मूल मंगोलाइड है। इनकी भाषा को चीनी-तिब्बती वर्ग के अंतर्गत तिब्बती-वर्मी समूह में वर्गीकृत किया गया है। इन्हीं आठ आदिवासियों की सम्मिलित भाषा को 'कॉकबरक' कहा जाता है। कूकी-चीनी वर्ग के अंतर्गत डारलोंग, कुकी, हलम, लुसाई, मालसोम,कईपेंग, बोंग आदि आदिवासी आते हैं। यह कूकी-चीनी वर्ग मूलतः चीनी मूल से संबंध रखते हैं और तिब्बती-बर्मी भाषा बोलते हैं। मोग और चकमा आदि आदिवासी अराकान वर्ग के अंतर्गत माने जाते हैं क्योंकि ये मूलतः अराकान जनजातियों से संबंधित हैं और इनकी भाषा अराकानी मानी जाती है। इन मूल निवासियों के अतिरिक्त त्रिपुरा में कुछ अप्रवासी आदिवासियाँ भी हैं जो सदियों पहले रोजगार की तलाश में यहाँ आए अथवा लाए गए और यहीं बस गए हैं। इन आदिवासी समूहों में मुंडा, संथाल, उड़ाऊँ, भील, लेपचा, खसिया तथा भूटिया आदि विशेष उल्लेखनीय हैं।

त्रिपुरा की वर्तमान भाषायी स्थिति के संदर्भ में यह तथ्य अवलोकनीय है कि कुछ ऐतिहासिक कारणों से बँगला भाषा इस प्रदेश की महत्त्वपूर्ण एवं प्रभावशाली भाषा रही है। "राज्य के तत्कालीन शासकों ने बंगला को राजकीय एवं प्रशासनिक भाषा के रूप में संरक्षण दिया। अब तो यह जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में स्वयं को स्थापित कर चुकी है। करीब अस्सी फीसदी लोग अपने दैनिक जीवन में बंगला भाषा का इस्तेमाल करते हैं। यहाँ तक कि त्रिपुरी (कॉकबरक) बंगला लिपि में लिखी जाती है। यही कारण है कि त्रिपुरी लोग बंगला समझ एवं बोल लेते हैं। त्रिपुरियों के प्रबुद्धवर्ग की बंगला भाषा पर महारत हासिल होती है। ये बंगला भाषा पर मातृभाषा जैसी पकड़ रखते हैं। इनकी बौद्धिक एवं सांस्कृतिक उपलब्धियाँ उतनी ही उच्च हैं जितनी किसी अन्य उन्नत समुदाय की।"[4] यहाँ यह उल्लेख करना अप्रासंगिक नहीं होगा कि कॉकबरक भाषा वर्तमान में बंगला अथवा रोमन लिपि में लिखी जाती है क्योंकि इसकी अपनी कोई लिपि नहीं रही है।

वर्तमान में त्रिपुरा में बंगला, कॉकबरक और अंग्रेजी राजकीय भाषा के रूप में प्रचलित है और कहना न होगा कि यही बंगला, कॉकबरक और अंग्रेजी भाषाएँ पठान-पाठन के माध्यम भी हैं। यहाँ हिंदी भाषा शिक्षा का माध्यम नहीं है बल्कि एक भाषा विषय के रूप में कुछ विद्यालयों, पाँच महाविद्यालयों (चार सरकारी तथा एक प्राइवेट) तथा त्रिपुरा विश्वविद्यालय (केन्द्रीय विश्वविद्यालय) में पढाई जाती है। महाविद्यालय स्तर पर हिंदी पाठ्यक्रम डिग्री स्तर पर तीन स्तरों पर निर्धारित किया गया है। प्रतिष्ठा के रूप में, ऐच्छिक विषय के रूप में तथा एम.आई.एल के रूप में। जबकि त्रिपुरा विश्वविद्यालय (केन्द्रीय विश्वविद्यालय) में आई.एम.डी. और स्नातकोत्तर स्तर पर हिंदी एक विषय के रूप में पढ़ाई जाती है साथ ही पी-एच.डी. पाठ्यक्रम भी हिंदी में उपलब्ध है। त्रिपुरा विश्वविद्यालय का हिंदी विभाग हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए एक वर्षीय अनुवाद में स्नातकोत्तर डिप्लोमा पाठ्यक्रम भी चलाता है।

वस्तुतः इन्हीं परिस्थितियों में त्रिपुरा में हिंदी का प्रचार-प्रसार, अनुवाद व रचनात्मक लेखन को समझा जा सकता है। रवीन्द्रनाथ ठाकुर का यह विचार था कि कई भाषाओं के प्रयोग के कारण राममनोहर राय सभी धर्मों को समझ पाए और इसलिए वे देश के सच्चे प्रतिनिधि हैं। वस्तुतः कोई भी भाषा अच्छी तरह सीखना आज के समावेशी जातीय आत्मपहचान, उच्चतर सौन्दर्यबोध, विश्लेषण क्षमता और संवेदनशीलता के उन्मेष की प्रक्रिया है। वस्तुतः त्रिपुरा के नवयुवक अधिकाधिक संख्या हिंदी को अपनाते हैं तो उनके सर्वांगीण विकास के लिए उपयुक्त माध्यम सिद्ध होगी। एक संपर्क भाषा के रूप में इसकी उपयोगिता स्वयंसिद्ध है। सबसे बड़ी बात यह है कि हिंदी आज रोजी-रोटी पाने का माध्यम भी बन चुकी है। इसकी प्रयोजनीयता का क्षेत्र विस्तृत हो चुका है। यह प्रशासन, कार्यालय, वाणिज्य, विधि, विज्ञान एवं तकनीकी, संगणक, विज्ञापन, जनसंचार, मनोरंजन आदि क्षेत्रों की भाषा बन चुकी है।

अपने विशाल शब्द भण्डार, वैज्ञानिकता, शब्दों और भावों को आत्मसात करने की प्रवृत्ति के साथ ज्ञान-विज्ञान की भाषा के रूप में अपनी उपयोगिता पूरी दुनिया में साबित कर रही है। यह दुनिया के एक कोने से दूसरे कोने तक बोली, पढ़ी-लिखी और समझी जाती है। वास्तव में, हिंदी की जड़ें गहरी हैं। 'भाषा महज अभिव्यक्ति का साधन नहीं है भाषा में मनुष्य की अस्मिता स्वर पाती है। उसमें सामाजिक-सांस्कृतिक चेतना की अभिव्यक्ति भी होती है। समय के साथ होने वाले सामजिक-सांस्कृतिक परिवर्तनों की अनुगूँज उसमें सुनाई पड़ती

है।' हिंदी की इसी महत्ता को आत्मसात करते हुए त्रिपुरावासी हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए आगे आ रहे हैं। त्रिपुरा राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, धर्मानगर केश्री रमेंद्र कुमार पाल, डॉ. शुभ्रांशु धाम; त्रिपुरा राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, अगरतला के श्री हरिपद देब तथा सुश्री अपर्णा देब तथा त्रिपुरा विश्वविद्यालय के आचार्य प्रो. विनोद कुमार मिश्र आदि लोग हिंदी के प्रचार-प्रसार तथा इसके संवर्धन में जुटे हुए हैं।

जहाँ तक त्रिपुरा प्रदेश में हिंदी भाषा में रचनात्मक साहित्य का प्रश्न है तो इसमें कोई संदेह नहीं कि इसका अभाव है। इस क्रम में प्रायः बत्तीस से अधिक वर्षों से पूर्वोत्तर भारत में अध्ययन-अध्यापन से जुड़े प्रो. विनोद कुमार मिश्र का भी मानना है कि त्रिपुरा में हिंदी भाषा में रचित रचनात्मक साहित्य की कोई परम्परा अभी तक विकसित नहीं हो पाई है लेकिन अनुदित साहित्य धीरे-धीरे विस्तार पा रहा है।[5] यद्यपि स्व. रमेंद्र कुमार पाल का एक उपन्यास "देवी माँ" के नाम से हिंदी में प्रकाशित हो चुका है इसके साथ ही उन्होंने कुछ कविताएँ तथा कहानियाँ भी हिंदी में लिखी हैं किन्तु दो-एक को छोड़कर अधिकांश रचनाओं का प्रकाशन नहीं हो पया है।[6] डॉ. शुभ्रांशु दाम ने कुछ कविताएँ एवं लेख हिंदी में लिखे हैं जिसका प्रकाशन 'समन्वय पूर्वोत्तर', 'लहक', 'शब्दनील', 'कंचनजंघा','राष्ट्रभाषा' आदि पत्र-पत्रिकाओं के विभिन्न अंकों में हुआ है। श्री शुभ्रांशु दाम द्वारा लिखित तथा प्रकाशित कुछ महत्त्वपूर्ण कविताओं के नाम हैं- अभिजात्य,अभिलाषाएँ,नारी हूँ मैं, गणतंत्र दिवस, मुझे प्यार है, अकेला हूँ मैं , कविता, दर्पण, वसंत, हिंदी हमारी शान आदि।

वस्तुतः त्रिपुरा में बंगला और कॉकबरक भाषा में लिखित साहित्य से हिंदी में अनुवाद कार्य अवश्य हो रहे हैं। इस कार्य में केन्द्रीय हिंदी निदेशालय महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही है जो अनुदान देकर, कार्यशालाओं का आयोजन कर कॉकबरक भाषा में लिखित साहित्य का अनुवाद हिंदी में करने को प्रोत्साहित करती रही है,जैसे कॉकबरक लोक साहित्य (2016), हिंदी-कॉकबरक अध्येता कोश आदि। इसी प्रकार 'समन्वय पूर्वोत्तर' पत्रिका के माध्यम से यहाँ के लेखक विविध विषयों पर आलेख लिख कर हिंदी भाषा व साहित्य को समृद्ध कर रहे हैं। अभी हाल ही में सुधन्य देबबर्मा द्वारा कॉकबरक भाषा में लिखित उपन्यास का हिंदी अनुवाद (2021) 'पहाड़ की गोद में' नाम से प्रो. चंद्रकला पाण्डेय और मिलन रानी जमातिया ने किया है। यह उपन्यास त्रिपुरा के जनजातीय जीवन पर आधारित प्रथम प्रकाशित उपन्यास के रूप में मान्यता प्राप्त है। इसी तरह त्रिपुरा के जनजातीय देवता गाँरिया पर हिंदी भाषा में एक पुस्तक "त्रिपुरा के गाँरिया लोकगीत" नाम से वर्ष 2019 में प्रकाशित हुआ है। वाणी प्रकाशन द्वारा प्रकाशित तथा कृपाशंकर चौबे द्वारा संपादित 'हिंदी और पूर्वोत्तर' नामक पुस्तक में भी त्रिपुरा के कुछ लेखकों के लेख संगृहित हैं।

यह सही है कि त्रिपुरा प्रदेश में हिंदी भाषा में रचनात्मक साहित्य का सृजन बहुत कम हुआ है लेकिन अनुदित साहित्य से हिंदी क्रमशः संवर्धित हो रही है। साथ ही यहाँ के युवाओं में बोल-चाल की भाषा के रूप में हिंदी धीरे-धीरे काफी लोकप्रिय हो रही है। वस्तुतः जैसे-जैसे हिंदी की महत्ता स्थापित हो रही है और उसका प्रचार-प्रसार हो रहा है,यहाँ के रचनाकार हिंदी में साहित्य सृजन की ओर अवश्य उन्मुख होंगे और हिंदी का रचनात्मक साहित्य क्रमशः संवर्धित होता जाएगा।

संदर्भ:

1. त्रिपुरा डिस्ट्रिक्ट गजेटीयर, गवर्मेंट ऑफ़ त्रिपुर, अगरतला, पृष्ठ1
2. सैम्युल जान, 'लैंग्वेज एंड नेशनलिटी इन नार्थ-ईस्ट इंडिया', इकोनोमी एंड पोलिटिकल विकली, खंड XXV III, नं. 3-4 (जनवरी 1993), पृष्ठ 91-92
3. trci.tripura.gov.in
4. त्रिपुरा,एस.एन.गुहा ठाकुराता (अनुवाद संजय सिंह), पृष्ठ 47, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, प्रथम संस्करण, वर्ष 2013
5. पूर्व महासचिव, विश्व हिंदी सचिवालय तथा अध्यक्ष, हिंदी विभाग त्रिपुरा विश्वविद्यालय
6. डॉ. शुभ्रांशु दाम, त्रिपुरा राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, धर्मानगरसे हुई वार्ता पर आधारित

❖

सहायक प्राध्यापक हिंदी विभाग त्रिपुरा विश्वविद्यालय सूर्यमणिनगर, त्रिपुरा
पिन- 799022 मोबाईल नम्बर- 7005299729
ईमेल- jhakalicharan44@gmail.com

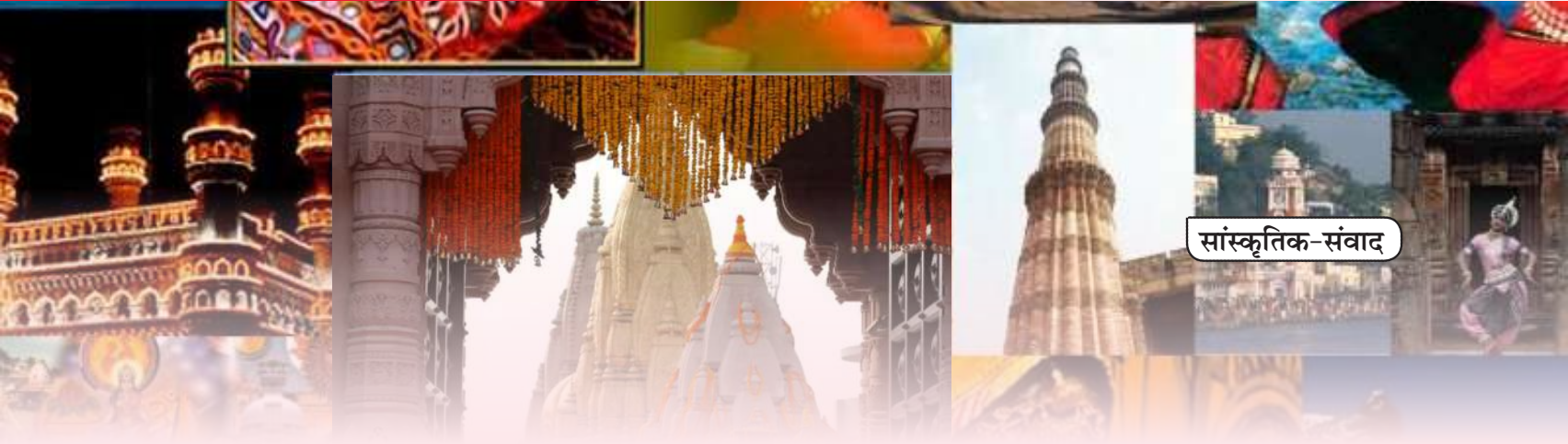

सांस्कृतिक विरासत का धनी मेरा प्रिय भारत

डॉ. प्रीति खरे

वर्तमान में लखनऊ अत्यंत साफ, सुन्दर इमारतों पार्कों सहित सांस्कृतिक स्तर पर बहुत धनी है। यहाँ के सांस्कृतिक कार्यक्रम नृत्य, गीत, साहित्य, पत्रकारिता और मेले, महोत्सव से महफिलों, फिल्मों, नाटकों से खूब फल-फूल रहे हैं। यहाँ पर्यटन पर विशेश कार्य होने हेतु वार्तालाप विकास पर है। उत्तर प्रदेश में 'फिल्म सिटी हब' का शुभारम्भ हो चुका है। अयोध्या को सांस्कृतिक 'हब' बनाने की तैयारी है जहाँ पर भगवान राम के भव्य मन्दिर का निर्माण हो रहा है। लखनऊ एकीकरण की संस्कृति का सलोना रूप है उर्दू का अदब शीरी जुबान और हिन्दी का उत्तम संस्कार, फैशन और मिली-जुली भाषा का मीठा मंजर, नजाकत और नफासत का उत्कृष्ट नमूना, हस्तशिल्प, चिकनकारी विश्वबाजार में एक बड़ी लोकप्रियता है।

ओ मेरे प्रिय भारत, तुम्हारे धरा की सोंधी सुगन्ध, उत्ताल भाल पर विराजते असंख्य सूरज और चाँद, तुम्हारी बलिष्ठ भुजाओं में आबद्ध क्षितिज और आकाश सुगन्धित हवा का झोंका, तुम्हारे वक् पर खेलता गहन नीला समुन्दर, अठखेलियां करती मनचली नदियां, पीठ पर उत्तल हिमालय, कन्धों पर आकाश को निहारती पहाड़ियों की पंक्तियाँ, इत्र से सुगन्धित तुम्हारे केशों से उछाह भरती, पावन गंगा, तुम्हारे आस-पास हरियाली के उत्ताल नजारे, चीड़, देवदार, साइकस, पीपल, नीम, यूकेलिप्टिस और ढेर सारे इन वृक्षों के सम्बन्धी, तुम्हारी खिलखिलाती मनोहारी हँसी का झरना, तुम्हारे नयनों में अनेक भ्रमकों का झुण्ड। वीर बहूटी, भुनगे, सतरंगी कीटों की प्रजातियाँ, गिलहरी, खरगोश, नेवले, तुम्हारी हथेलियों पर चहचहाती चिड़ियों की शृंखलाएँ, तुम्हारे नयनों में प्रवेशती सुगन्धित प्राणवायु, हरसिंगार, मधुमालती, रजनीगन्धा, जूही, चमेली और केसर की मतवाली आत्मगन्धा वायु का झोंका।

बलिष्ठ समुन्दर की बाहों पर अठखेलियाँ करते रंग-बिरंगे पंखों वाली चिड़ियों के झुण्ड। हंस, कबूतर, कोयल, ललमुनिया, कटफोड़वा, नीलकंठ, बाज, चील, गौरैया, और जाने कितने मनमोहक वनवृक्ष, वनफूल और हरीतिमा की बेपनाह हरियाली बिखेरती धरती का मुलायम मखमली बिछौना।

नाले सलेटी, सफेद रूई जैसे बादलों का जमघट, क्षितिज और धरा का मिलन बिन्दु। तन और मन को गुदगुदाती तुम्हारी बासन्ती-रेशमी पवन का अलमस्त झोंका।

लक्का कबूतरों का टोलियों में आकाश में विचरण, मोर, हंस और कोयल का नृत्य मृदु ल मीठ-मीठा संगीत, तुम्हारा सांस्कृतिक, लोक कलाओं से भरपूर चैतन्य मस्तिष्क, मृदुल, सुवासित, संस्कारवान वाणी, तुम्हारी इन्द्रधनुशी पोशाकें, शृंगार, शिक्षा, धर्म, वेद, पुराण, सत्य ऋचायें, स्वस्थ जीवन शैली और पारम्परिक बहुमूल्य जीवन शैली, सब कुछ तो प्रणम्य है।

प्रिय भारत तुम्हारी संस्कृति संभवतः विश्व की अन्य देशों की संस्कृति से प्राचीन भी है। अनमोल मणियों, सांस्कृतिक हीरे-पन्नों से जड़ित भारतीय संस्कृति धनी गहन और वैविध्यपूर्ण भी है। इतना कुछ है, लिखने कहने को , स्याही शेष हो जाए कागज भी कम पड़ जाए।

शेष भाग पृष्ठ 30 पर

देश बड़ा या घर

कोमल

क्या करने गई थी माधुरी और यह क्या हो गया। देश की सेवा के लिए ट्रेनिंग पर गई थी पर उसने तो वहाँ जाकर अपना ही देश बनाने को सोच लिया। आखिर ऐसी भी क्या जल्दी थी माधुरी को शादी की। अभी तो किसी ने घर में से दबाव भी नहीं डाला था। इतनी उत्सुकता शादी के लिए क्या हम इसको युवावस्था की चंचलता कहें कि एक ही क्षण में मोहक छवि देखकर माधुरी अपना दिल दिमाग सब दे बैठी या फिर माँ बाबा के कंधों पर से अपना बोझ हल्का करने के लिए एक परिपक्व मानसिक अवस्था। क्या हो सकता है ? क्या एक स्त्री के जीवन का लक्ष्य अपने परिवार को बसाना ही होता है, क्या परिवार में ही उसकी पूरी दुनिया सिमट गई होती है ? हाँ एक बात यह भी है कि एक स्त्री के बिना परिवार नहीं हो सकता। सृजन शक्ति का प्रतीक स्त्री है तो क्या स्त्री को केवल सृजन शक्ति के प्रतीक के रूप में ही देखना चाहिए

पुरवइया हवा के झोंके में हल्की-हल्की मालती की खुशबू घुल मिलकर वातावरण को सुरम्य बना रही थी। दूर तक खेतों में लहलहाते गेहूं ऐसा प्रतीत करा रहे थे जैसे धरती ने स्वर्ण चादर ओढ़ लिया हो। पक्षियों के कलरव और कठफोड़वा का खटखट एक नए तरह के संगीत को उत्पन्न कर रहे थे जिसमें रोमांच भी था और उल्लास भी। जेठ की दुपहर में नीम की डाल पर बैठी घुग्घू पक्षी अपने घूँ-घुँघुँ-घूँ के स्वर से इसमें और रस मिला देती है। वहीं बीच-बीच में आने वाली कोयल की कूक और मोर की कुहू कुहू जीवन में उमंग भरकर हमें संघर्षों से दो चार हाथ करने की शक्ति देती है।

अगली सुबह नुक्कड़ पर आम की आमराइयों के नीचे गाँव का मुखिया चौपाल लगाए बैठा था जहाँ गाँव के सभी बुढ़ऊ बाबू बने बैठे थे। पास में छोटे पोखर के किनारे बगुले ध्यान लगाए बैठे थे और और दुनिया भर की जिम्मेदारियों को ढोते शहर गांव के लोग अपने-अपने काम से निकल पड़े थे।

वहीं कुछ दूरी पर खेत में सरसो के फूल खिले हैं, ऐसा लगता है जैसे चारों दिशाओं को देखकर फूल मुस्कुराते हैं, हवा के साथ झूमते हैं, गुनगुनाते हैं, भंवरों को आकर्षित करते हैं और तितलियों को कहते हैं मेरा पराग अपनी राग के साथ ले जाओ ताकि सृष्टि के अन्य स्थानों पर भी मेरी सुगंध की आभा फैलती रहे लेकिन फूलों की नियति ही है वो स्वयं झड़ कर गिर जाते हैं या फिर किसी मंदिर में ईश्वर को चढ़ा दिए जाते हैं। फूलों के लिए और कुछ विकल्प भी होते हैं। कोई जयमाला बनकर दो हृदय को मिला देते हैं, कोई वीर सपूतों की राहों में आकर बिछ जाते हैं, कोई अंतिम यात्री का साक्षी बन कर अपने जीवन को पूर्ण कर देते हैं परंतु हर स्थिति में फूल, फूल ही रहता है खुशबू ही बिखेरता है। खुशबू के लिए जीता है और खुशबू में ही मर जाता है।

सरसो के लहलहाते खेतों के बीच बाबा को ढूँढते हुए माधुरी का प्रवेश होता है।

- बाबा ! क्या यश इस इतवार को भी नहीं आया आपका हाथ बटाने?

- वो आता कब है बेटा। केवल इतवार को हम खेत में आते हैं। एक दिन तो आ सकता है लेकिन उसे किसकी चिंता है।

- भैया को कितना भी समझा लो सब बेकार है।

- तेरे नसैड़ी भैया से तो मुझे अब कोई उम्मीद नहीं है। म्हारी लड़कियां ही करेंगी म्हारा नाम।

- हाँ बाबा ! तुम चिंता मत करो। जो यश नहीं कर सकता तुम्हारे लिए, वो मैं और सुषमा करेंगे।

- सुषमा किधर है?

- वो घर पर है बाबा। उसके इम्तिहान आने वाले हैं। उसी की तैयारी में लगी है।

- तुम दोनों कुछ बन जाओ तो मैं और तेरी माँ गंगा नहालें।

पता नहीं गांव में आज भी ऐसी सोच रखने वाले कितने लोग हैं कि बेटी के विवाह की बजाय बेटी के आत्मनिर्भर होने पर गंगा नहाए। लगता है समय ने आखिर करवट बदल ही ली। समय ने तो अपना रुख बदल लिया पर बंधु ! क्या

स्त्री भी कभी समय के अनुरूप बदलती है? हाँ, बदलती है। कभी माँ के रूप में, कभी बहन, कभी पत्नी, कभी बेटी का रूप धारण कर समय को थाम लेती है।

दोनों बाप बेटी को जब खेतीबाड़ी करते-करते सांझ हो जाती है तब अचानक माधुरी को दूर से मोटरसाइकिल भगाता हुआ यश दिखा पर इस बार माधुरी बाबा को नहीं बताती कि वह घूम रहा है। आखिर कैसे बताएं दोनों बहनों में सबसे बड़ा बेटा ही जब नालायक निकल जाए जिसको माँ परिवार की रीढ़ की हड्डी समझती है तो क्या बीतेगी उन पर। माँ-बाप जिस को बड़ा करने के लिए दिन रात श्रम कर रहे हैं उसे उनकी चिंता तक नहीं है। यह कैसे कहती माधुरी।

- माधुरी! कहाँ रह गई थी बेटा ?

- हाँ माँ वो आज खेतों में घना काम था।

- चल जल्दी अपने बाबा संग हाथ मुंह धोले। मैं खाना लगाती हूँ।

- नहीं माँ। पहले बाबा को दे दो। मैं अभी रवि को पढ़ाऊगीं थोड़ी देर। कल भी नहीं समझा पाई थी उसको गणित के सवाल। आज थोड़ा समझा दू फिर खा लूंगी।

- घर का सारा जिम्मा तूने अपने ही कंधों पर उठा रखा है क्या ?

- माँ रवि वैसे भी कमजोर हैं पढ़ने में। उसके साथ मुझे मेहनत करनी पडेगी वरना फिर इस बार अच्छे नंबर नहीं आऐगें।

- कुछ अपने भैया को भी समझा देकर। पढ़ाई लिखाई तो वो कक्षा पाँच से ही छोड़ कर बैठा है। कोई छोटी मोटी नौकरी ही कर ले।

- माँ उनको क्या समझाऊं मैं। कभी होश में रहते भी हैं भैया।

- दोनों माँ बेटी बात ही करती रहोगी या कुछ खिलाओगे भी। लगता है आज रात गुड़ चना खा कर ही सोना पड़ेगा।

- हाँ ला रही हूँ। सब्र करना सीखो। कोई मशीन ना हूँ मैं।

- तो मशीन बन जा फिर।

- तुम आज तक कपड़े धोने वास्ते मशीन तक तो लाए ना। सारी जिंदगी बीत गई मेरी सबका करते-करते लेकिन मुझे कभी सुख नहीं मिला और मैं मशीन बन जाऊं।

- चल अब चुप रह तू। तुझे पता तो है घर का हाल। हूँ क्या मैं? तहसील में छोटा बाबू ही तो हूँ। एक दिन भी मुझे फुर्सत नहीं मिलती। इतवार को भी खेत में चला जाता हूँ।

- हाँ-हाँ, मुझे ना बताओ। मुझे मालूम है सब।

- तुझे ज्यादा दिख रहा है तो तू ही अपनी स्कूल की कमाई से ले आया।

- सब मैं ही करूँ। तुम्हें पता है घर कैसे चला रही हूँ मैं।

- तो यश से कह कुछ कमाना सीखे। तेरे नालायक से तो बदनामी के अलावा और कुछ मिलने से रहा।

- मैं तो बहुत समझाती हूँ पर उसे अब हम सब उसको बोझ लगते हैं।

बताओ कैसे विकट स्थिति है पति पत्नी मिलकर गृहस्थी बसाते हैं। परिवार को आगे बढ़ाते हैं। संसार के नित्य कर्म में सक्रिय भागीदारी निभाते हैं और उपहार स्वरूप पुत्र रत्न भी प्राप्त करते हैं पर इसके बदले उन्हें मिलता क्या है? बुढ़ापे में सुख, आराम या कुछ और भी ? नाम भी देखो कैसा रखा है यश। यश को सुनते ही लगता है अंधेरी काली रातों में कोई दियासलाई से प्रकाश बिखेरेगा पर मिला क्या। नाम ही तो केवल यश है। यह कठोर सत्य है उनके परिवार का, मिला तो उससे केवल अपयश ही है। इतना अपयश मिलने के बाद भी यश के सामने कोई नहीं कहता कि उसने उनको समाज में अपयश दिलाया है।

अगली सुबह माँ जल्दी उठकर स्कूल जाने से पहले रात के झूठे बर्तन राख से घिस-घिसकर धोने में लगी थी तभी अचानक यश का प्रवेश होता है।

- यश ! यश ! बेटा कहाँ था तू रात भर और तुझ में से ये दारु की बदबू क्यों आ रही है ?

- यहीं था माँ।

- कहाँ यहीं था। कोई ठिकाना भी तो होगा तेरा। तूने उस दिन वादा किया था तू अब पियेगा नहीं।

- माँ ! मैंने नहीं पी। अब सवेरे ही शुरू मत हो जाओ।

- देख बेटा, तेरे बाबा से अब इतना काम नहीं होता। तुझे पता है ना तेरी दो बहनें भी हैं। अभी तो स्कूल में हैं लेकिन तू ऐसे ही पीता रहेगा, कुछ नहीं करेगा तो कल को उनसे कौन शादी कर लेगा और कभी सोचा है, रवि पर क्या असर पड़ेगा तेरे इस आचरण का ? वह तो अभी बहुत छोटा है।

- हाँ, क्या असर पड़ेगा ?

- वह भी तेरी तरह बिगड़ जाएगा। देख बेटा मैं चाहती हूँ तू कोई नौकरी कर बड़ा आदमी बन और बहू ले आ मेरे लिए।

- चलो माँ मुझे माफ करो और अब सोने दो। जाड़ा बहुत हो रहा है। नींद आ रही है मुझे बहुत।

जाडा तो एक बहाना है सच से मुंह फेरने का। क्या स्थिति रही होगी उस समय माँ की भी। पहले दो ननदों की शादी की, देवर के फटे चिथड़े धोए, सास ससुर के ताने सुने, बच्चों को पढाया लिखाया बड़ा किया, स्वयं भी नौकरी की, दुनिया भर की जिम्मेदारी ढोई। पूरे परिवार को जोड़ा और अब खुद ही भीतर ही भीतर टूट रही है। परिवार का चिराग जो माँ का सबसे दुलारा है पर उसने तो पहले ही माँ की समस्त उम्मीदों पर पानी फेर दिया। अब क्या होगा कोई नहीं जानता। यश की इस हालत को देखते ही देखते छः महीने बीत गए। कोई सुधार नहीं हुआ।

- माधुरी ! तेरी माँ किधर हैं ?

- बाबा ! माँ तो सो रही है।

- सांझ हो रही है उठा उसे। यह कौन सा समय है सोने का।

- बाबा स्कूल में बच्चों की परिक्षा चल रही है। बहुत थक गई होगी माँ। कुछ देर और सोने दो।

- फिर चौका बर्तन कौन करेगा ?

- मैं और सुषमा कर लेंगे।

- नहीं तू अपनी कोचिंग की तैयारी कर। घर का काम तेरी माँ कर लेगी।

- बाबा करने दो ना आराम माँ को कुछ देर।

- चल ठीक है....

- आपको पता है बाबा! अब मैं पहले से भी लंबी छलांग लगा लेती हूँ। तेज दौड़ लगा लेती हूँ। कल मास्टर जी भी मुझे शबाश कह रहे थे।

- हाँ बेटा ! अब तुझसे ही मेरी उम्मीद है इसलिए मैंने तेरी एन.डी.ए. में दाखिले के लिए कोचिंग लगवाई। बेटा तुझे ठीक लगता है ना वहाँ सब ?

- हाँ बाबा मुझे बहुत मजा आता है उछल कूद करने में, तेज दौड़ने में। आप देखना दुश्मनों को मार कर सीमा पर देश की रक्षा मैं कैसे करूंगी।

- हाँ बेटा मुझे पता है तू ही पूरे करेगी मेरे सपनों को। यश तो कुछ करेगा नहीं। ऐसे लड़कों से तो लड़की भली। बस तू लग जाए एन. डी. ए. में तो बेड़ा पार हो जाए।

- हाँ बाबा ... सब हो जाएगा। आप चिंता मत करो। अभी मैं हूँ, सुषमा है और रवि भी तो है।

- सुषमा को तो यह सब पसंद ही नहीं। दौड़ भाग करना उसके बस की बात कहाँ है।

- हाँ बाबा! उसको पसंद नहीं है यह सब इसलिए उसने एन.डी.ए. में जाने के लिए कोचिंग भी नहीं ली। बाबा सुषमा ना सही रवि भी तो है।

- हाँ बेटा रवि तो है लेकिन इतना पढ़ने के बाद भी इम्तिहान में उसके नंबर कहाँ आते हैं। बेटा... देश की रक्षा के लिए केवल शरीर का बल ही नहीं बल्कि दिमाग की भी जरूरत होती है।

- अरे बाबा अभी बहुत समय है। अभी रवि कक्षा आठ में ही तो पढ़ता है। अभी वो छोटा है। बड़े होते-होते अपेक्षित परिणाम आने लगेगा उसका भी। आप परेशान क्यों होते हो ? हम सब है ना।

अगले दिन गांव में जश्न था। सब को दावत का न्योता आया था। खेतों से लगती सड़क पर नुक्कड़ वाले घर में बन्नो का ब्याह था। बन्नो और माधुरी स्कूल में साथ पढ़ती थी लेकिन बन्नो को पढ़ाई छोड़कर ब्याह करने की जल्दी थी इसलिए रचा लिया ब्याह। दावत में सब गए। ब्याह बन्नो का था पर निगाह सबकी माधवी की तरफ थी।

श्वेत वर्ण, भाल पर बिखरे घने लट, अरुण कोमल कपोल, गुलाब की पंखुड़ी से अधर, मोरनी सी बड़ी-बड़ी आंखें और आंखों में लगा काला सुरमा। रूप, रंग और समय का ऐसा संयोग की जो पहली नज़र देखे देखता ही रह जाए। सादा नीले रंग का सलवार कमीज पहनकर माधुरी जब आती है उसकी काया कंचन कामिनी-सी लगती है। सादे कपड़ों में उसका सौंदर्य ऐसे निखर कर आता जैसे ईश्वर ने उसे फुर्सत में गढ़ा हो।

छोटी बहन सुषमा सुंदर तो वो भी है लेकिन माधुरी की बात कुछ और ही है। उसका रूप सबको आकर्षित करता है। उस दिन ब्याह में माधुरी ने कमाल कर दिया। माधुरी को बचपन से ही ढोल पर नाचने गाने का बहुत शौक था। तितलियों के संग, कभी उनके पीछे भागने में उसे बड़ा आनंद आता था। बारिश में झूम जाना, सूफियाना संगीत सुनना, गालिब की गजल पढ़ना उसको बड़ा अच्छा लगता था इसीलिए बात-बात पर माधुरी कहती भी थी -

" हजारों ख्वाहिशें ऐसी कि हर ख्वाहिश पे दम निकले

बहुत निकले मिरे अरमान लेकिन फिर भी कम निकले। "

उस दिन भी बन्नो की शादी में माधुरी खूब नाची दिल खोलकर। उम्र में भले ही अठारह की हो गई हो लेकिन भीतर से तो अभी भी वो मासूम बच्ची ही है। अभी तो उसके अलमस्त यौवन के दिन हैं। वह खिल जाना चाहती है गुलाब की तरह अपने पसंद के बाग में।

अगली सुबह सब बैठक में चाय पी रहे होते हैं। माधुरी दादी के संग खाट पर टांग पर टांग चढ़ाकर बैठी है तभी माधुरी कहती है -

- मां ! कल बन्नो की शादी में कितना मजा आया। पकवान भी बहुत बढ़िया बने थे न।

माँ ने कोई जवाब नहीं दिया तभी दादी बोलती हैं

- बन्नो की तो हो गई अब इसकी कब करेगी तू ?

माँ का जवाब माधुरी देते हुए कहती हैं

- माँ मैं तो खूब जमकर इश्क करूंगी फिर करूगीं शादी-वादी।

बाबा अचानक कहते हैं

- पहले पढ़ लिख ले। देश की सेवा कर ले फिर करियो अपना इश्क विश्क।

- बड़ा प्रधान बनाएगा तू इसे। देश की क्या सेवा करनी है। उससे क्या होता है पति की सेवा करेगी म्हारी मध्धो।

माँ मौन साधे हुए हैं।

- अरे माँ तुम्हें नहीं पता। मैं इतनी मेहनत इसके साथ इसलिए कर रहा हूँ कि माधुरी देश की सेवा करे।

- फिर घर बार कौन देखेगा। पति की सेवा, परिवार की सेवा कौन करेगा ?

तभी माधुरी माँ से पूछती है

- माँ ! तुम ही बताओ आखिर मुझे किसकी सेवा करनी है ? देश की या घर की। देश बड़ा कि घर ? माँ मुझे तो कुछ समझ नहीं आ रहा। मैं तो सोच रही हूं घर बार की ही सेवा करूं। मुझे तो खूब जमकर इश्क करना है।

अभी माधुरी यौवन के उमंग से बाहर कहाँ निकली है। अभी-अभी तो उसकी आंखों में इश्क करने की खुमारी छाई है। अभी तो वह इश्क करने के सुनहरे सपने देख रही है। मन ही मन अपने राजकुमार की मोहक छवि गढ़ रही है। कौन जाने आगे क्या होगा।

माँ बाबा ने पाई-पाई जोड़ कर कुछ पैसे इकट्ठे किए थे। बच्चों की पढ़ाई के लिए, उनके शादी ब्याह के लिए लेकिन किसको पता था जिस प्रयोजन से पैसे संचित किए थे वह तो कहीं और ही लगाने पड़े। कहाँ लगाने पड़े, ऐसी क्या मजबूरी आ पड़ी थी। नशा मुक्ति केंद्र में पैसे भरने पड़े थें। यश की हालत दिन-प्रतिदिन बद से बदतर होती जा रही थी। उसकी शराब पीने की लत को कम करने के लिए बूढ़े माँ बाप को उसे नशा मुक्ति केंद्र में भर्ती कराना पड़ा। यश को भर्ती कराने के बाद बाबा भी बहुत कमजोर हो गए थे। अक्सर परिवार के बारे में सोच कर चिंतित हो जाते थे। अब उन्होंने बातचीत करना भी बहुत कम कर दिया था। कुछ दिन बाद बाबा अपने मौन को तोड़ते हुए बोले:

- माधुरी ! तेरी वो कोचिंग का क्या हुआ ? तू उस दिन कुछ कह रही थी तैयारी के लिए कोई कैंप वैंप जाना पड़ सकता है।

- हाँ बाबा ! मास्टर जी अगले महीने दिल्ली ले जाने को कह रहे थे। वहाँ कैंप लगेगा एक हफ्ते स्टेशन का। ट्रेनिंग के लिए मेरा नाम भी चुना गया है।

- अच्छा ठीक है बेटा तो फिर मैं भी चलूंगा तेरे साथ।

- ठीक है बाबा। (प्रसन्न होकर)

- तेरी बुआ जी के यहाँ गए हुए भी बहुत दिन हो गए। वहीं रुक जाएंगे।

- हाँ बाबा। यह सही रहेगा।

आहिस्ता आहिस्ता करते-करते अगला महीना भी आ गया और बाप बेटी दिल्ली के लिए रवाना हो गए। अगले दिन से माधुरी की ट्रेनिंग शुरू हो जाती है। माधुरी खूब जमकर कैंप में ट्रेनिंग करती है। लंबी उछल कूद, पहले से भी तेज दौड़, सीमा पर सैनिक को कैसे कम साधनों के साथ जीवन यापन करना है इन सब में माधुरी निपुण हो जाती है। रोज शाम को माधुरी जब वापस घर पर आती है तब वो घर के सामने वाले नवयुवक को मोटरसाइकिल से आते हुए देखती है।

चौड़ा सीना पाँच फुट दस इंच कद, सावला रंग, तीखे नैन नक्श, आकर्षक व्यक्तित्व, सुंदर सुव्यवस्थित घर ये सब मिलकर एक ऐसा वातावरण बना रहे थे जो मन को बहुत ही भा रहा था और कहीं ना कहीं उस लड़के के प्रति माधुरी को आकर्षित भी कर रहा था । बातचीत तो नहीं हुई थी पर देखने से ऐसा लगता है कि शायद व्यवहार में भी अच्छा ही होगा। कुल मिलाकर छवि ऐसी कि माधुरी पहले दिन ही उसको देखकर मोहित हो गई थी। सच्चाई भी यही है कि जब किसी को कोई अच्छा लगना होता है तो लग ही जाता है। न दिन देखता है न समय, न मुहूर्त तभी से माधुरी के मन में अनेक विचार उगने और बढ़ने लगे थे।

जब माधुरी उस नवयुवक को देखती तो वह भी देखता यानी आंखों ही आंखों में बात हो गई थी और ऐसा प्रतीत होता है कि शायद वह नवयुवक भी माधुरी को चाहने लगा था। वो भी माधुरी की प्रतीक्षा में ही वहाँ खड़ा रहता। वह भी रोज माधुरी के आने के समय उसको अपलक निहारता। देखते ही देखते सात दिन कब में बीत गए, पता ही नहीं चला और माधुरी को आधे मन से ही गांव लौटना पड़ा।

- बेटा ट्रेनिंग कैसी रही तेरी दिल्ली में ?

- माँ ! सब ठीक रहा।

- कोई दिक्कत तो नहीं हुई बेटा।

- नहीं माँ कोई दिक्कत नहीं हुई।

- क्या बात है माधुरी, तू कुछ उदास लग रही है।

- नहीं माँ सब ठीक है।

- बेटा तेरा चेहरा कुछ मुरझाया-सा लग रहा है। मैं माँ हूँ तेरी। सच-सच बता क्या हुआ है ?

- कुछ नहीं माँ। कहा तो सब ठीक है।

- अजी सुनो ! माधुरी उदास क्यों है ? क्या तुमने कुछ कहा है ?

- नहीं रे ... मैंने तो कुछ भी नहीं कहा।

- माधुरी बेटा क्या हुआ ? क्या बात है ?

- बाबा ! कुछ नहीं।

- बेटा जो भी बात है खुलकर बता। तुझे मालूम है ना चारों बच्चों में हमने सबसे ज्यादा तुझे ही प्यार दिया है। अब तू भी बात नहीं बताएगी तो हम तो बैठ ही जाएंगे।

- बाबा! वो बुआ के घर के सामने वाला लड़का मुझे पसंद है। शायद उसका नाम मदन है।

माधुरी के मुंह से यह सुनकर बाबा बिल्कुल अचंभित हो गए और बोले :

- बेटा तू तो वहाँ ट्रेनिंग पर गई थी। यह कब हो गया ?

- बाबा बात थोड़ी हुई है कुछ। बस मैंने उसको देखा है। वो भी मुझको पसंद करता है।

- फिर नाम कैसे पता तुझे उसका ?

- मैंने एक औरत को उसे मदन कहते हुए सुना था। शायद वह उसकी माँ थी। उन्होंने उसको मदन कहकर पुकारा था। बाबा ! आप मेरी बात उससे और उसके घर वालों से करो।

क्या करने गई थी माधुरी और यह क्या हो गया। देश की सेवा के लिए ट्रेनिंग पर गई थी पर उसने तो वहाँ जाकर अपना ही देश बनाने को सोच लिया। आखिर ऐसी भी क्या जल्दी थी माधुरी को शादी की। अभी तो किसी ने घर में से दबाव भी नहीं डाला था। इतनी उत्सुकता शादी के लिए क्या हम इसको युवावस्था की चंचलता कहें कि एक ही क्षण में मोहक छवि देखकर माधुरी अपना दिल दिमाग सब दे बैठी या फिर माँ बाबा के कंधों पर से अपना बोझ हल्का करने के लिए एक परिपक्व मानसिक अवस्था। क्या हो सकता है ? क्या एक स्त्री के जीवन का लक्ष्य अपने परिवार को बसाना ही होता है, क्या परिवार में ही उसकी पूरी दुनिया सिमट गई होती है ? हाँ एक बात यह भी है कि एक स्त्री के बिना परिवार नहीं हो सकता। सृजन शक्ति का प्रतीक स्त्री है तो क्या स्त्री को केवल सृजन शक्ति के प्रतीक के रूप में ही देखना चाहिए ? क्या उसे केवल परिवार

बसाने और परिवार बढ़ाने के रूप में ही देखना चाहिए या फिर हम परिवार से इतर भी कोई दुनिया है स्त्रियों की ? कोई लक्ष्य है उनके भी ? कुछ सपने हैं उनके भी ? क्या वह कुछ करना चाहती हैं अपनी प्रतिभा के बल पर ? क्या वह भी समाज में आत्मनिर्भर होना चाहती हैं ? वीरांगना रानी लक्ष्मीबाई, अहिल्याबाई, सावित्री जैसी स्त्रियों ने इतिहास में अपने पराक्रम की अविस्मरणीय छाप छोड़ी। वीरांगनाओं के इन अद्वितीय शौर्य से भारत का इतिहास भरा पड़ा है तो फिर माधुरी इनमें से किस श्रेणी में आती है ? वह तो अभी अपने प्रेमी को ढूँढने के लिए नज़र दौड़ा रही है। वह तो अभी भरपूर उमंग में है।

ख़ैर माधुरी की बात को सब ने घर में गंभीरता से लिया और पत्नी के आग्रह पर बाबा शहर चल दिए, मदन के मम्मी पापा से मिलने के लिए। बाबा चाहते थे पहले माधुरी देश के लिए कुछ करें, अपने पैरों पर खड़ी हो जाए पर पत्नी के आगे आज तक किसकी चली है जो आज चलेगी। आखिरकार बाबा दिल्ली चले ही गए। दिल्ली जाने पर पता चला मदन एकलौता लड़का है। बैंक में नौकरी करता है। एक छोटी बहन भी है उसकी, जो दसवीं में पढ़ती है। पिताजी हाई स्कूल में शिक्षक हैं और माँ गृहणी है। बाबा को घर बार बहुत अच्छा लगा। मदन भी शरीफ लड़का लगता है। बातचीत करने पर पता चलता है वो लोग भी कई दिनों से मदन के लिए अच्छी लड़की की तलाश में हैं। बाबा मन ही मन सोचते हैं शायद माधुरी के लिए इससे बढ़िया लड़का और घर बार नहीं मिलेगा। आखिर अभी तीन बच्चे और ब्याहने हैं, जल्दी-जल्दी करके सबका घर बस जाए और क्या चाहिए बाबा को। देश की सेवा तो माधुरी शादी के बाद भी कर सकती है। बाबा मदन के बारे में सब पड़ताल करते हैं तभी मदन के पिता जी भी इस बात को स्वयं ही कहते हैं :

- भाई साहाब! केवल माधुरी ही नहीं मदन भी माधुरी को चाहता है।

- इससे अच्छी बात और क्या हो सकती है दोनों बच्चे एक दूसरे को पसंद करते हैं।

- हाँ जी। यह भी अच्छी बात है कि आप लोग शाकाहारी हैं। आजकल शाकाहारी लड़की, परिवार मिलते ही कहाँ है।

- जी हम तो शुरु से ही बालाजी के भगत हैं। मांस मच्छी को तो हम देखते तक नहीं।

बाबा गांव वापस आते हैं और मदन के घर बार से, मदन के व्यक्तित्व से प्रसन्न होकर शादी पक्की कर देते हैं। कुछ दिनों बाद बाबा परिवार समेत माधुरी की परीक्षा के प्रयोजन से दिल्ली आते हैं और सगाई कर देते हैं। सगाई के दिन मदन के घरवाले ने बिना कोई विशेष कारण बताए सगाई अभी और दो साल बाद शादी करने को कहा लेकिन माधुरी के घरवाले माने नहीं। वह इतना इंतजार नहीं कर सकते थे क्योंकि माधुरी के अलावा अभी और भी बच्चे हैं। उन्हें जल्दी थी सब को निपटा कर गंगा नहाने की। अंत में लड़के वाले मान गए और तीन महीने बाद शादी का अच्छा योग बना।

बड़े धूमधाम से मदन-माधुरी की शादी हो गई। दोनों विवाह के पवित्र बंधन में बंध गए और दोनों एक हो गए सदा के लिए। शादी के उपरांत जो भी माधुरी को देखने आता सभी उसके रूप-रंग, कार्यकुशलता से प्रभावित होता। माधुरी घर के कामों में बिल्कुल निपुण होकर आई थी। पिताजी सबसे अधिक प्रभावित माधुरी के शाकाहारी होने से थे। वहीं माधुरी की सास उसके खाने बनाने की कला को बहुत पसंद करती थीं। क्या जादू है माधुरी के हाथों में। अहा ! क्या गुड़ के खजूर बनाती हैं माधुरी। कोई जवाब नहीं उसका। गुड़ के खजूर तो आप जानते ही होंगे ना। ये वही खजूर हैं जिसे भोजपुरी में ठेकुआ कहते हैं, मगही में खामौनी कहते हैं और राजस्थान, हरियाणा एवं गुजरात वाले इसे सोहाली कहते हैं।

घर में सब अच्छा है लेकिन घर छोटा है। मदन माधुरी को रहने के लिए एक अलग कमरा चाहिए था इसलिए मदन दूसरा घर ले लेता है और वह दोनों फिर वहीं रहते हैं। दो महीने बाद माधुरी गर्भ धारण करती है और इसी दौरान उसकी पढ़ने की इच्छा वापस से जागृत होती है। पढ़ने में वह पहले से ही दक्ष थी और अब वह अपनी शुष्क पड़ी पढ़ने की लोलुपता को फिर से दिल्ली विश्वविद्यालय में स्नातक में दाखिला लेकर सिक्त करती है।

शनैः-शनैः माधुरी के दिन चढ़ने लगते हैं और प्रसव के दिन नजदीक आने लगते हैं। इस दौरान माधुरी अपनी पढ़ाई जारी रखती है और अंतिम दिनों में पाती है कि मदन के व्यवहार में कुछ परिवर्तन आने लगा है। मदन उससे पहले की तरह प्यार से पेश नहीं आता। बात-बात पर चिल्लाने लगता है और बातचीत भी कम ही करता है। ऐसे समय में माधुरी को सबसे ज्यादा जरूरत अपने पति की होती है और वही उस से दूरी बनाने लगता है। एक दिन माधुरी कहती है :

- मदन क्या हो गया है तुम्हें ?

- कुछ नहीं।

- अरे कुछ तो बताओ। तुम पहले तो ऐसे नहीं थे। अचानक तुम इतना क्यों बदल गए हो।

- बोला तो, कुछ नहीं।

- मदन ! इस समय मुझे सबसे ज्यादा जरूरत तुम्हारी है। आज दिन में मम्मी जी भी आई थीं। कह रही थीं बेटा ही होगा। तुम्हें क्या चाहिए मदन, बेटा या बेटी ?

- मुझे कोई नहीं चाहिए।

- कोई नहीं चाहिए मतलब ?

- हमें अभी रुकना चाहिए था माधुरी। बच्चे के लिए हमें इतनी जल्दी नहीं करनी चाहिए थी।

- मदन तुम यह क्या कह रहे हो

- हाँ माधुरी, मैं अभी इस बच्चे को नहीं चाहता।

इस संवाद से घर में अवसाद छा गया। माधुरी पहले से ही इन दिनों पीड़ा में थी। मदन से यह सब सुनकर मानो उसके सिर पर घने काले बादल मंडराने

लगे। विपत्ति का पहाड़ आ गिरा। मानो किसी ने उसे गहरी खाई में धक्का दे दिया हो फिर भी माधुरी अपने मन को समझाती है। मन ही मन सोचती है कि बच्चे के जन्म के बाद मदन पहले जैसा ही हो जाएगा और अपनी छोटी सी गृहस्ती में रम जाएगा। किंतु कुछ दिन बाद मदन उससे बातचीत बिल्कुल ही बंद कर देता है फिर भी माधुरी मदन को लेकर सकारात्मक बातें ही सोचती है। आखिर और करे भी क्या ?

- मदन! तुम बैठो मैं खाना लगाती हूँ।

- मत लगाओ। मुझे भूख नहीं है।

- क्यों भूख नहीं है ? कल रात भी तुमने नहीं खाया था।

- हाँ तो क्या हुआ।

- कहीं बाहर खाकर आ रहे हो क्या?

- हाँ।

- अच्छा। अरे वाह! तो फिर कहाँ लजीज खाना खाया मेरे कृष्ण कन्हैया के पापा ने।

- चुप करो माधुरी। यह क्या लगा रखा है कृष्ण कन्हैया, ये वो।

- तुम इतने उखड़े-उखड़े से क्यों रहते हो मेरे साथ।

- मैने कितनी बार कहा है तुम्हें माधुरी, मुझे नहीं चाहिए कोई बच्चा वच्चा। मैं तैयार नहीं हूँ अभी इसके लिए।

- तो वही तो मैं पूछ रही हूँ क्यों नहीं चाहते तुम हम दो से तीन हो जाए। हमारे भी घर से बच्चे की किलकारी गूंजे।

- बस नहीं चाहता माधुरी मैं... और कुछ मत पूछो अब।

- क्या तुम जिम्मेदारी उठाने से डर रहे हो। तुम फिक्र मत करो मदन हम सब कर लेगें।

उस रात माधुरी सपना देखती है। माधुरी बहुत पीड़ा में है। वो चीख रही है, उसकी कोई सुन नहीं रहा। चारों तरफ अँधेरा ही अँधेरा है। अंधेरे में से अचानक नर्स आती है और उसे उसके जुड़वा बच्चे देती है। एक बेटा और एक बेटी और फिर नर्स भी चली जाती है। माधुरी फिर अकेली हो जाती है अपने बच्चों के साथ, तभी अंधेरे में से हल्का सा प्रकाश माधुरी को दिखाई देता है। उसी प्रकाश में से मदन आ रहा होता है। मदन के आते ही चारों तरफ रोशनी हो जाती है। मदन आकर उसका हाथ थाम कर माथा चुनता है और कहता है :

" माधुरी मैंने तुम्हारे साथ बहुत बुरा व्यवहार किया। मुझे माफ कर दो। अब मैं ऐसा कभी नहीं करूँगा। देखो माधुरी मेरी बेटी बिल्कुल मुझ पर गयी है और बेटे के गाल तो देखो वो तुमपर पर गए हैं।"

माधुरी मदन को पहले जैसा कर बहुत खुश होती है और उसकी आंखों से खुशी के आंसू बहने लगते हैं।

अगली सुबह जब माधुरी उठती है तब वह स्वयं को समझाती है और मन ही मन यह मान लेती हैं कि बच्चों के होने पर मदन, मेरे पहले वाले मदन के जैसा ही हो जाएगा।

दो दिन बाद माधुरी बेटे को जन्म देती है। बच्चा नार्मल डिलीवरी से हुआ है इस बात से मदन की माँ बहुत खुश होती है और आसपास में लड्डू बटवाती हैं। बेटे की जन्म की ख़बर सुनकर मदन अस्पताल से दवाई लेने जाता है किंतु वापस नहीं आता। कोई नहीं जानता मदन कहाँ गया है, किससे मिलने गया है, कहाँ गायब हो गया है, जिंदा है भी या नहीं ? कई दिन बीत गए पर मदन की कोई ख़बर नहीं मिली। माधुरी की व्यथा बढ़ती गई। पुलिस में रिपोर्ट भी लिखाई गई। मदन की खोज जारी है पर मदन नहीं मिला।

- माँ जी ! ऐसी भी क्या भूल हो गई मुझसे, जो वह एक बार गए कि आए ही नहीं। अरे मुझ से ना सही अपने बेटे से तो मिलते। उसको देखा तक नहीं।

- बहु ! होगा वही जो नियति ने लिखा है। तेरे मेरे चाहने से मदन नहीं आएगा। नियति के आगे हम सब माड़े हैं।

- (रोते हुए) माँ जी मैं तो कभी किसी भी मामले में उनके खिलाफ भी नहीं गई फिर भी पता नहीं क्यों मेरे गर्भवती होने के कुछ दिन बाद से ही वो बदले-बदले से थे।

- बहु, छोटी मोटी कमियाँ सब में होती हैं।

- कौन सी कमियाँ माँ जी।

- (बात को टालते हुए) कोई सी नहीं। चल मैं अब घर जा रही हूँ। तू ख्याल रख अपना और मेरे लाल का।

सारी रात माधुरी सोचती रही आखिर कौन सी कमी और कैसी कमी की माँ जी बात कर रही थी। इसी उधेड़बुन में उसे नींद कब में आ गई पता ही नहीं चला।

अगली सुबह जब माधुरी उठी तो उसने देखा कि बेटा तो बुखार में तप रहा है। अकेली माँ कैसे संभाले उसको। माधुरी बच्चे को लेकर शीघ्र ही पास के अस्पताल लेकर जाती है। वहाँ डॉक्टर को दिखाने के बाद जब माधुरी अस्पताल से निकल रही होती है तो वहाँ उसने जो देखा वह देखकर माधुरी भौचक रह गई। सामने पहली मंजिल पर मदन रेलिंग पकड़कर खड़ा था पर मदन यहाँ क्या कर रहा है ? माधुरी कई बार मदन को आवाज देती है मगर मदान सुनता नहीं है। वह तो पता नहीं कहाँ खोया है। कुछ देर बाद मदन की दृष्टि माधुरी पर पड़ती हैं तो वह माधुरी को नजरअंदाज करता है। बहुत कोशिश के बाद भी माधुरी मदन के पास तक नहीं पहुँच पाई क्योंकि परिस्थितियाँ ऐसी होती हैं कि माधुरी बच्चे को संभाले या पति को ढूंढे। इस बीच मदन गायब हो जाता है। माधुरी मदन को ढूँढने का बहुत प्रयास करती है पर मदन नहीं मिलता।

घर आकर माधुरी ने सारी कहानी अपनी सास को बताई लेकिन उन्होंने भी कोई खास दिलचस्पी नहीं ली कि मदन मिल गया है तब माधुरी को शक होने लगता है कि आखिर यह हो क्या रहा है मेरे साथ ? परंतु माधुरी का लक्ष्य इस समय केवल अपने बेटे को स्वस्थ देखना था। बच्चों को निमोनिया हुआ था।

कई दिनों की परेशानी के बाद कम से कम डेढ़ महीने के होने पर बच्चा पूर्ण रूप से स्वस्थ होता है। माधुरी नहीं चाहती कि मदन और उसके बीच आई खटास उसके बेटे तक पहुँचे इसलिए माधुरी भीतर से चाहे जितनी भी टूटी हो पर बच्चे के सामने हमेशा खुश रहने का नाटक करती है और स्वयं ही उसका नामकरण कर देती है - 'पल्लव'।

माधुरी के संज्ञान में अब यह बात ठीक से आ गई है कि मदन की खोज तेजी से नहीं हो रही है और उसके ससुराल से भी मदन को ढूंढने में कोई खास सहायता नहीं मिल रही है। कुछ दिन बाद उसे उसकी पड़ोसन से पता चलता है कि मदन तो इस बीच अपने घर कई बार आता जाता रहा है। यह सुनकर माधुरी अचंभित हो जाती है और अवसाद में चली जाती हैं। मदन जब घर आता है तो उससे और अपने बेटे से मिलने क्यों नहीं आता ? क्या मदन को इतनी नफरत हो गई है अपनी पत्नी और बच्चे से ?

अगले दिन माधुरी के पास उसकी सास आती है और उसे खर्चा देकर माधुरी के बार-बार पूछने पर इस बात को स्वीकार कर लेती है कि मदन का घर पर आना जाना है। बिना कोई कारण बताए माधुरी की सास उसे जिंदगी में आगे बढ़ने की नसीहत देती है।

- बहू, तू अब मदन के पीछे अपनी जिंदगी मत खराब कर। तू आगे बढ़। अपने और अपने बच्चे के बारे में सोच।

- माँ जी! यह क्या कह रही हैं आप। मदन मेरे पति हैं, मेरे सब कुछ हैं। पल्लव के पापा हैं। आपको उन्हें समझना चाहिए वो अपने घर लौट आएँ। आप उल्टा मुझे ही समझा रही हैं।

- बहू मैं तेरे भले के लिए ही समझा रही हूं। मेरा एक ही चिराग है। मैं उसके खिलाफ नहीं जा सकती। तू अब अपनी जिंदगी में आगे बढ़। पल्लव को पढ़ा लिखा बड़ा कर।

- माँ जी कम से कम एक बार मेरी उनसे बात तो करवा दो। बस एक बार।

- अब बात हाथ से निकल गई बहू। अब तो भोले बाबा ही तेरी सुन सकते हैं।

माधुरी का जीवन संघर्षों से घिर जाता है। लगभग डेढ़ महीने तक तो सास-ससुर खर्चा देने आते हैं। उसके बाद वो खर्च देने भी नहीं आते। माधुरी को कुछ समझ नहीं आता वह क्या करे। अकेली माँ नवजात शिशु का लालन पोषण कैसे करेगी ? जब घर में कोई आमदनी नहीं है। कोई कमाने वाला नहीं है। जो भी है माधुरी है, उसी को सब कुछ करना पड़ेगा घर चलाने के लिए, मगर क्या करें।

ऐसी विकट स्थिति हो गई है कि घर में खाने का भी सामान नहीं है। घर में जरूरत की चीजें भी खत्म हो गई हैं। नमक चीनी को खत्म हुए हफ्ते भर हो गया है। बेचारी दाल में सेंधा नमक डालकर और फीकी चाय पी कर काम चला रही है। घर का राशन बचाते-बचाते फिर एक दिन वह आता है जब घर में तेल भी खत्म हो जाता है माधुरी अपने किस्मत पर फूट-फूटकर रो रही है, बिना तेल के खाना कैसे बने। उसे याद है पिछली बार डॉक्टर ने कहा था अच्छा खाना पीना रहेगा तभी दूध सही उतरेगा पर यहाँ तो अच्छा तो दूर दो वक्त की रोटी ही बन जाए वही बहुत है। माधुरी को याद आता है उसकी सास बता रही थी घर के पास में एक आंगनवाड़ी भी है। माधुरी आगनवाड़ी से पल्लव के बहाने दो बड़े-बड़े कटोरे दलिया और खिचड़ी भरकर ले आती है। चार पाँच दिन तो माधुरी वहीं खाकर गुजारा करती है लेकिन अभी इससे बुरा समय भी आना था। पल्लव के सर में खुश्की आ गई है तब माधुरी को लगता है अब घर में तेल का बंदोबस्त करना ही पड़ेगा। माधुरी अपनी शादी में मिली सोने की चैन को सुनार से सही दाम लगाकर बेच आती है और उन पैसों से घर में जरूरत का कुछ सामान जुटा लेती है।

घर में आय का कोई स्रोत नहीं है। माधुरी बच्चे को संभाले या बाहर जाकर कुछ काम करे। दोनों काम एक साथ संभव नहीं है। माधुरी अपने माँ बाप को नहीं बताना चाहती लेकिन अंत में माधुरी को बताना पड़ता है। ऐसी प्रतिकूल स्थितियों का जब माधुरी के माँ-बाप को पता चलता है तो वह गांव से आते हैं। वो बच्चे को संभालने की कोशिश करते हैं और कहते हैं :

- बेटा ! तू अपनी पढ़ाई जारी रख। पल्लव को हम देख लेंगे।

- हाँ बाबा अब पढ़ना ही होगा। घर में कोई नहीं है कमाने वाला।

- वो निकम्मा मदन, वो कहाँ मर रहा है।

- बाबा वह तो अपने घर ही है। हम से मिलने तक नहीं आए और पल्लव की तो सूरत तक नहीं देखी।

- जरूर दूसरी लुगाई का चक्कर होगा। जभी बेटा होने पर भी नहीं आया।

- पता नहीं बाबा क्या चल रहा है उनके दिमाग में।

- और क्या वरना घर में कमी क्या है। कोई कमी छोड़ी है हमने तेरी शादी करने में। अपनी हैसियत से ज्यादा ही किया है। पल्लव भी चाँदी की चम्मच मुंह में लेकर पैदा हुआ है। घर में सब कुछ है। कोई कमी नहीं है लेकिन उसे ही ज्यादा गर्मी आ रही है तो चिंता मत कर मैं ठीक कर दूंगा साले को।

- नहीं बाबा आप कुछ मत करिए। अब कुछ नहीं हो सकता। मैंने जान लिया अब मदन के लिए हम मर गए हैं।

पढ़ाई के लिए माधुरी फिर से अपने मन को शांत करती हैं। मदन के ख्यालों से बाहर निकलने की बहुत कोशिश करती है लेकिन पढ़ नहीं पाती है फिर भी किसी तरह से दिल्ली विश्वविद्यालय से पेपर देती है और स्नातक हो जाती है द्वितीय श्रेणी से। साथ में बच्चों को ट्यूशन पढ़ाना शुरू करती है ताकि खुद भी कुछ अर्जन कर सके। देखते ही देखते लगभग डेढ़ गुजर गए। डेढ़ वर्ष का बेटा हो गया लेकिन मदन लौटकर नहीं आया। एक दिन माधुरी शाम को कॉलेज से आने के बाद पल्लव को आइसक्रीम खिलाने ले जाती है। पल्लव को आइसक्रीम बहुत पसंद आती है। वह बड़े चाव से खाता है। कुछ दिन बाद माधुरी के महीने भर की ट्यूशन की आमदनी खत्म हो जाती है। बड़ा खींच खींच कर घर चलाने के बाद भी उसके सारे पैसे खत्म हो जाते हैं। बाबा के दिए पैसों से भी वह परास्नातक में प्रवेश परीक्षा के लिए अपने लिए कुछ किताबें लेती है। आज के जमाने में पढ़ना कोई आसान थोड़ी है। अच्छे पैसे खर्चने पड़ते हैं

अच्छे विश्वविद्यालय में पढ़ने के लिए। किताबें खरीदने में माधुरी को आने में देर हो जाती है। पल्लव को उसकी नानी-नाना संभाल रहे होते हैं। कल रविवार है माँ बाबा को गांव लौटना है।

अगली सुबह माँ बाबा गांव चले जाते हैं। घर में केवल माधुरी और पल्लव रह गए हैं। पल्लव के सोने के बाद अकेला घर माधुरी को काटने को दौड़ता है। माधुरी को अचानक याद आता है आज तो पल्लव को टीका लगना है। वह पल्लव को टीका लगवाने निकलती है तभी पल्लव आइसक्रीम का ठेला देखकर उसको लेने की जिद करता है। माधुरी पल्लव को रोता देख व्यथीत होती है लेकिन अभी महीना खत्म होने में पाँच दिन बाकी हैं और पाँच दिन बाद ही ट्यूशन से बच्चों की फीस आएगी। माधुरी पल्लव को रोते देख उसे समझाती है, वह चीख रहा होता है।

- आइसक्रीम, आइसक्रीम..

- बेटा आज नहीं कल दिलाऊंगी पक्का।

- नहीं माँ आइसक्रीम दिलादो। दिलादो...

- मेरा पल्लव बहुत अच्छा है, सारी बात मानता है। कल पक्का दिलवाऊगीं। आज घर चल सीधा।

- नहीं, अभी आइसक्रीम दिलाओ। मुझे आइसक्रीम खानी है।

माधुरी पल्लव को समझाते हुए घर लाती है। यह दृश्य उसकी पड़ोसन देखती है और तभी वह पल्लव को अपने पास से पैसे देकर आइसक्रीम दिलाती है। माधुरी की आंखों में आंसू हैं और सोचती है कि क्या आज की दुनिया में भी कोई ऐसी स्त्री है जो दूसरी स्त्री के दर्द को समझे। उसे अपना दुश्मन ना मानकर उसे सहारा दे।

एक रात मदन के विरह में माधुरी को स्वप्न आता है।

भारत की सीमाओं पर दूसरे देशों की तरफ से संकट खड़ा किया जाता है और लगातार गोलियां चल रही है, बमबारी हो रही है। माधुरी एन.डी.ए. की अफ़सर है और वो आगे कमान लेकर रणभूमि में उतर जाती है। अपने देश के लिए जान की बाजी लगाकर सैनिकों के छक्के छुड़ा देती है। इसे देखकर उसके बाबा बहुत खुश होते हैं।

अगले दिन जब माधुरी उठती हैं तो उसकी आँखों से झर-झर आँसू बहने लगते हैं। माधुरी पल्लव के लिए कोशिश फिर से करती है कि शायद उसके बेटे को देखकर मदन का हृदय परिवर्तन हो जाए। वो फिर ससुराल जाती है लेकिन मदन के घर वालों ने माधुरी और पल्लव के लिए घर के किवाड़ खोलने के बजाय बंद कर दिए। उसने फोन उठाने बंद कर दिए और पल्लव तक को स्वीकार नहीं किया। साफ कह दिया अब हमारा तुम्हारा कोई संबंध नहीं है। उसकी सास बहुत भावुक होकर कहती है :

- बेटा हमें ज्यादा प्यारा है इसलिए हम ऐसा कर रहे हैं। हमें माफ कर दो।

ऐसा बोल कर वो माधुरी को टाल देती हैं और माधुरी माँ जी, माँ जी.... कहती रह जाती है लेकिन कोई नहीं आता।

धीरे-धीरे माधुरी इस बात की अभ्यस्त हो जाती है कि शायद मदन अब मुझे नहीं मिलेगा और वह जीवन के एक नए रास्ते को चुनती है। अपनी खोई जिजीविषा को, अपनी उमंग को फिर से जगाती है। जब वो देश की सेवा करना चाहती थी लेकिन दुर्भाग्यवश अब वो समय निकल गया है। एन.डी.ए. में वो नहीं जा सकती क्योंकि उसकी उम्र निकल गई है। इन परिस्थितियों से लड़ने में माधुरी अपने को फिर से जीने के लिए तैयार करती है और स्वयं को एक सफल व्यक्ति के रूप में समाज में सिद्ध करने की कोशिश करती है। उसकी रूचि शुरू से ही साहित्य-संगीत-कला में थी। प्रेमचंद, रेणु, अमृता प्रीतम को पढ़ना उसको अच्छा लगता था। उसका मन सूफियाना संगीत को सुनने में लगता था। ग़ज़लें पढ़ना उसे आज भी पसंद है। माधुरी अंग्रेजी सुनकर बहुत प्रभावित होती थी इसलिए कभी-कभी अंग्रेजी बोलने का प्रयास भी करती है।

माधुरी बाबा की आर्थिक मदद से परास्नातक में दाखिला लेती है। कुछ दिनों बाद धीरे-धीरे माधुरी का ट्यूशन चल पड़ता है और वो दो पाली में पढ़ा कर हजार दो हजार से लेकर सात आठ हजार तक कमाने लगती है। माधुरी को गाड़ी का बहुत शौक था। वह बाबा से कहती है :

- मैं बस में नहीं जाऊंगी। मेरा दम घुटता है। बहुत भीड़ होती है बस में। मैं अपनी कार से कॉलेज जाऊंगी.... ।

माधुरी जिद पर अड़ी रहती है और बाबा की आर्थिक मदद और अपने ट्यूशन के कुछ पैसे मिलाकर किस्तों में एक छोटी पुरानी गाड़ी खरीदती हैं। बाबा बेटी की इच्छा पूरी कर देते हैं और उसकी माँ बच्चे को संभालती है। माधुरी कॉलेज जाती है। विपरीत परिस्थितियों में भी माधुरी अपने शौक को नहीं मारती है। अपनी उमंग को नहीं खोती है और देखते ही देखते वो परास्नातक पास कर लेती है प्रथम श्रेणी से। आज पहली बार माधुरी के दिमाग में नौकरी ढूंढने की बात आती है और वह अपने पिताजी से कहती है :

- मुझे किस क्षेत्र में आगे जाना चाहिए बाबा ?

बेटी का उत्साहवर्धन करते हुए बाबा कहते हैं :

- एक सेवा वो होती है जो सीमा पर की जाती है और दूसरी सेवा वो होती है जिसमें राष्ट्र को शिक्षित किया जाता है। माधुरी तुम अभी भी देश की सेवा कर सकती हो। तुम शिक्षक बन जाओ।

अब शिक्षक बनने की बात माधुरी के मन- मस्तिष्क में उमड़ने घुमड़ने लगती है। वो बी. एड. के बारे में सोचती हैं और भी कई चीज सोचती हैं। इसी बीच उसकी सोच को विराम देते हुए माँ कहती है :

- माधुरी ! तुमने जीवन में इतना संघर्ष किया है तो तुम छोटी मोटी बातें सोचना बंद कर दो। तू सीधा प्रोसेसर के बारे में सोच।

तभी बाबा हँसते हैं और कहते हैं :

- तू तो ऐसे कह रही है जैसे प्रोफेसर न बनना हो, खिचड़ी बनाना हो।

- अरे खिचड़ी बनाना भी कोई आसान नहीं है। जरा सा अनुपात गलत हो जाए तो उसको चिड़िया भी नहीं खाती इसलिए खिचड़ी बनाने में तुम्हें ऐसा लगता है कि मैं खिचड़ी बना देती हूँ। यह तो बड़ा सरल है। तुम जरा खिचड़ी बना कर देखो फिर तुमको पता चलेगा कि इसके स्वाद में क्या फर्क है।

जीवन होता क्या है ? अरे जीवन भी तो खिचड़ी ही होती है। तुम मुझसे मिले, मैं तुमसे मिली जब दोनों मिले तो खिचड़ी बन गई।

तभी माँ माधुरी को संबोधित करती हुई कहती हैं -

- अरे खिचड़ी को इतना सरल और सहज मत समझना तुम भी माधुरी। तुम्हारी नानी को भी खिचड़ी बनाना और खाना बहुत पसंद था। वह कहती थीं खिचड़ी तो संपूर्ण जीवन का सार है। खिचड़ी हमारे जीवन का विस्तार है। खिचड़ी में क्या नहीं है ? खिचड़ी में स्वाद है, खिचड़ी में संतोष है, खिचड़ी में सामंजस्य है और सबसे बड़ी बात खिचड़ी में संतुलन होता है। जीवन के यथार्थ को अगर देखो तो जीवन भी खिचड़ी जैसा ही होता है।

हम कब, कहाँ, किस से मिलते हैं, कौन से विचार हम में मिल जाते हैं और हमारे कौन से विचार समाज में मिल जाते हैं कहना मुश्किल। अगर उसमें संतुलन है तो संतोष है और अगर संतुलन नहीं है तो विषाद है रोष है।

- माधुरी बेटा खिचड़ी प्रतीक है हमारे मन के संतुलन का, हमारे मस्तिष्क के संतुलन का और हमारी भूख का।

जानती हो खिचड़ी में मसालों का अनुपात भी कमाल का होता है। साधारण मसाले जैसे जीरा और हरी मिर्च से भी खिचड़ी में अद्भुत स्वाद उत्पन्न होता है तो कई बार खिचड़ी के स्वाद को अविस्मरणीय बनाने के लिए कुछ गरम मसालों का भी उपयोग किया जाता है। यह मत समझना कि खिचड़ी सिर्फ बीमारों का खाना है। असल में जीवन में स्वस्थ रहना है तो खिचड़ी खाना हमेशा लाभप्रद रहता है । खिचड़ी में गरम मसालों का उपयोग सिर्फ स्वाद को ही नहीं बढ़ा देता है बल्कि उसकी गुणवत्ता को भी बढ़ा देता है। दालचीनी का महत्त्व खिचड़ी में अत्यंत रुचिकर होता है वहीं लौंग और बड़ी इलायची खिचड़ी को समृद्धि देती हैं। देसी घी में तैयार तेजपत्ता और सरसों का छौंक, अहा ! क्या बताऊं, इस छौंक से ही मोहल्ले को पता चल जाता है कि आज हमारे घर में खिचड़ी बना है। वैसे माधुरी क्या तुम जानती हो खिचड़ी खाते कैसे हैं ?

- माँ क्या मतलब है तुम्हारा ?

- अरे मेरे कहने का मतलब है जैसे हम सब कुछ खाते हैं वैसे ही खिचड़ी भी खाते हैं परंतु खिचड़ी को हमेशा गर्म खाना चाहिए। एक पुरानी कहावत है ना-

'खिचड़ी के हैं चार यार

घी, पापड़, दही, अचार।'

अगर यह चार यार खिचड़ी के साथ हो तो खिचड़ी खाने का मजा अद्भुत हो जाता है। वैसे खिचड़ी सिर्फ हम और तुम ही नहीं खाते बल्कि कान्हा को भी खिचड़ी बहुत पसंद है। तुम्हें पता है माधुरी, उनके यहाँ भी खिचड़ी का भोग लगता है और प्रसाद में तो खिचड़ी ही बंटता है। तुम्हें एक और चीज बताती हूँ कि खिचड़ी हमारे यहाँ एक त्यौहार भी है जिसे मकर संक्रांति वाले दिन ही मनाया जाता है। हमारे यहाँ तो मकर संक्रांति वाले दिन खिचड़ी खाने की परंपरा रही है।

असल में खिचड़ी संपूर्ण जीवन का दर्शन है, सिर्फ भोजन नहीं है इसलिए मैं तो हमेशा कहती हूँ कि खिचड़ी बनाना इतना सरल नहीं है। कम से कम स्त्रियों को तो खिचड़ी बनाने में दक्ष होना ही चाहिए ताकि जीवन के यथार्थ में संतुलन और समन्वय का स्वाद वह बनाए रख सकें। तुझे भी तो मैंने खिचड़ी बनाना सिखाया था। तू बनाती है ना पल्लव के लिए खिचड़ी।

फिर माधुरी सोचती है अगर प्रोफेसर बनना है तो नेट देना होगा, जे.आर.एफ देना होगा। माधुरी तैयारी करती है और नेट की परीक्षा में बैठती है लेकिन सफलता नहीं मिलती है। विश्वविद्यालय में लोग उसे कहते हैं :

- माधुरी जे.आर.एफ. इतना आसान नहीं है। इसके लिए बहुत मेहनत करनी पड़ती है।

- कोई बात नहीं मैं अगली बार फिर दूंगी।

माधुरी अगली बार फिर परीक्षा देती है उसका फिर नहीं होता। माधुरी थोड़ी सी टूटती है, बिखरती है। कुछ और करने के लिए सोचने लगती है क्या मैं टीचर ही बन जाऊं ? प्राइवेट स्कूल में पढ़ाना शुरू कर दू ? आखिर ट्यूशन के पैसों से तो ज्यादा ही आमदनी हो जाएगी प्राइवेट स्कूल में पढ़ा कर भी लेकिन फिर उसके पापा कहते हैं :

- माधुरी! बेटा बड़ी सफलता के लिए बड़े संघर्ष करने पड़ते हैं इसलिए एक बार फिर दे।

और तीसरे प्रयास में माधुरी जे.आर.एफ. उत्तीर्ण हो जाती है और कुछ जानकार प्रोसेसर की सहायता से पीएचडी में दाखिला ले लेती है।

माधुरी अब नए जीवन की शुरुआत करती है। अब वो शोधार्थी बन गई है। स्कॉलरशिप का कुछ पैसा घर में आने लगता है। उसने अपने और पल्लव की जरूरत की चीजों से घर भर दिया है। उसने ट्यूशन पढ़ाना भी बंद कर दिया है। और बाबा की लगातार सलाह के मुताबिक काम करते हुए अपने जीवन की छूटी पटरी को वो फिर से पकड़ती है और आगे चल बढ़ती है। यह उसके जीवन का अनूठा संघर्ष है जिसमें वो पहले गेस्ट प्रोफेसर के रूप में पढ़ाती है।

गेस्ट में कैसे संघर्ष होते हैं, किस तरह से सीनियर टीचर अपने काम उनसे करवाते हैं। यह कर दो, वह कर दो। क्लर्क की तरह उनसे व्यवहार करते हैं। माधुरी इन सब अनुभवों से होकर गुजरती है। माधुरी का भाग्य प्रबल होता है और लगभग दो साल तक संघर्ष करने के बाद माधुरी दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रतिष्ठित महाविद्यालय में एडहॉक पर पढ़ाने लगती है। वह महिलाओं का महाविद्यालय होता है। वहाँ पर माधुरी देखती है कि एडमिशन से लेकर नौकरी तक और नौकरी से लेकर विवाह तक लड़कियां किस तरह के संघर्ष और कितने तरह के संघर्ष से जूझती हैं।

संघर्ष के कई अर्थों का माधुरी को अनुभूति करने का अवसर मिला जब वह महाविद्यालय में स्वयं पढ़ाने पहुंची। संवेदनशीलता के कई नए झरोखे खुलने

लगे और संवेदनाओं की नए-नए आयाम और लक्ष्य दोनों देखने को मिलने लगे।

कोई लड़की अर्थ से जूझ रही है, कोई कमरे के लिए जूझती है, कोई खाने के लिए जूझती है, कोई कपड़ों के लिए जूझती है, कोई फैशन के लिए जूझती है, कोई सैंडल के लिए लड़ते हुए दिखाई देती है, कोई लिपस्टिक के लिए झगड़ा मोल लेती है तो ऐसी परिस्थितियों की लड़कियों की मानसिकता क्या होती है इसको माधुरी बहुत गंभीरता से देखती है।

इस महिला महाविद्यालय में माधुरी को कई नयी अनुभूति हुई कि कॉलेज के जीवन में स्टूडेंट और टीचर में मौलिक अंतर क्या होता है ? विद्यार्थियों का संघर्ष अपनी जगह है परंतु शिक्षकों के जीवन में भी एक संघर्ष होता है। छात्र शिक्षक को किस स्तर पर जाकर स्वीकार करते हैं। महाविद्यालय के दिन प्रतिदिन की राजनीति में एक व्यक्ति को कैसे सामंजस्य बिठाना चाहिए, समय का सदुपयोग और समय पर काम करने का क्या महत्त्व होता है आदि-आदि। ऐसा नहीं है कि माधुरी ने कॉलेज के छात्र जीवन को नहीं देखा है परंतु उस समय की दृष्टि और दृष्टिकोण में बहुत फर्क होता है। आज स्वयं जब वह शिक्षक बन गई है तो उसकी दृष्टि और दृष्टिकोण में जो बदलाव और विस्तार हुआ है, वह अभूतपूर्व है।

आदर्श स्थिति यही है दृष्टि को विद्यार्थी समझ ले और दृष्टिकोण को शिक्षक। माधुरी अब समझने लगी थी कि जीवन के यथार्थ के धरातल पर किन चुनौतियों से उसे संघर्ष करना है और किन चुनौतियों को छोड़ कर आगे बढ़ जाना है। चुनौतियों का चुनाव भी अपने आपमें किसी बड़ी चुनौती से कम नहीं है। कक्षा में छात्राओं के साथ संवाद की चुनौती, किसी विषय पर विवाद की चुनौती इन चुनौतियों की भी तो कई श्रेणियां हैं।

माधुरी अब यह ठीक से समझने लगी थी कि पढ़ाने की चुनौतियों के साथ-साथ छात्राओं के मनोविज्ञान को भी ठीक से समझना होगा जो उसके जीवन के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। माधुरी ने भी अपने छात्र जीवन में संघर्ष तो किया था परंतु अब छात्राओं के संघर्ष के विविध रूपों से वह महीन रूप से परिचित हो रही थी।

महाविद्यालय भी किसी छोटे भारत से कम नहीं होता। वह भी तब जब देश की राजधानी में महाविद्यालय हो। संपूर्ण देश का प्रतिनिधित्त्व करने वाली यह महाविद्यालय राष्ट्रीय मनोविज्ञान का एक महत्त्वपूर्ण चिंतन पड़ाव भी होता है। देश के अलग-अलग क्षेत्र से आने वाली छात्राएँ अलग-अलग विचार और मनोभूमि को लेकर आती हैं। ऐसा नहीं है कि सब का लक्ष्य पढ़ना ही होता है।

पढ़ाई के लिए संघर्षरत लड़कियों की तो बात ही क्या करना, उनका तो लक्ष्य ही है कुछ बन जाना परंतु हॉस्टल ना मिलने की स्थिति में पेइंग गेस्ट और रूम के लिए संघर्षरत लड़कियों की चिंताएँ भी कम नहीं थीं। जहाँ रहना है वह स्थान कितना सुरक्षित है? आने-जाने में कितना समय लगेगा और साथ में कितने पैसे खर्च होंगे? आसपास खाने लायक खाना मिलता है या नहीं आदि-आदि। अनेक चिंताओं में घिरी हुई लड़कियों को माधुरी ने देखा। जिन्हें हॉस्टल मिल रहा था वह कुछ अन्य परेशानियों से जूझ रही थीं। उनमें से कुछ को हॉस्टल का खाना पसंद नहीं था कुछ को कमरा। बहुत कम ऐसी थीं जो खाना और कमरा दोनों पसंद करके समय के साथ समझौता कर पा रही थी और पढ़ाई में ध्यान लगा रही थीं। छोटे शहरों से आने वाली लड़कियों की अलग चिंता थी। उनको ऐसा लगता था कि उनको भी बड़े शहरों वाली लड़कियों जैसी दिखना चाहिए। उनके जैसे ही कपड़े, वेशभूषा, रंग-रूप होना चाहिए। यह एक अलग तरह का संघर्ष था। जो हम नहीं है वह देखना चाहते हैं और जो हम हैं उसे हम स्वयं दिखना नहीं चाहते।

इस तरह की मनोविज्ञान वाली लड़कियाँ भी महाविद्यालय में पढ़ रही थी।

गरीबी और अमीरी का सामंजस्य भी देखने लायक था। कोई महाविद्यालय की फीस चुकाने के लिए संघर्षरत थी तो कोई सैंडल से लेकर लिपस्टिक तक के कलर मैच करने में परेशान। किसी को फर्स्ट शो फर्स्ट डे देखने की लालसा थी तो कोई मोहल्ले में ट्यूशन ढूँढती हुई देखी गई। संघर्ष की अनूठी पराकाष्ठा का अनुभव माधुरी कर रही थी जो उसने अपने छात्र जीवन में नहीं किया था।

एक विशेष बात और थी कि कोई प्रेम के अनुभव बढ़ाना चाहती थी, कोई साथी ढूँढ रही थी और कोई ऐसा मित्र जो उन्हें घूमाए फिराए कुछ शॉपिंग करा लाए, सिनेमा दिखा लाए, रेस्टोरेंट में खिला लाए आदि-आदि। चाहतों की कोई सीमा नहीं होती। कुछ का लक्ष्य बस इतना था कि कॉलेज पास करते ही विवाह हो जाए और फिर जैसा नीति में लिखा हो वैसे जिंदगी जिएंगे। माधुरी सब समझ रही थी। अपनी कक्षा की एक-एक छात्राओं के जीवन को समझने का प्रयास कर रही थी। एक विशेष बात पर माधुरी ने गौर किया कि जैसे उसकी माँ ने उसे समाज सोसाइटी परिवार के बारे में सिखाया था, धर्म-कर्म के बारे में बताया था उस तरह की रुचि इस पीढ़ी में बिल्कुल नहीं दिखाई दे रही थी। कुछ लड़कियाँ थी जो मंदिर पूजा पाठ के बारे में चर्चा करती हुई सुनी गईं परंतु अधिकांशतः देश, धर्म, कर्म-कांड आदि से दूर होती हुई दिखाई पड़ रही थीं। माधुरी के लिए यह भी एक चिंता का विषय था।

माधुरी स्वयं को एक मनोवैज्ञानिक के रूप में देख रही थी और यह समझने का प्रयास कर रही थी कि एक स्त्री के भीतर कितने तरह के मनोवेग का प्रवाह एक साथ बना रहता है।

उसके बाद वो दिन भी आता है जब विश्वविद्यालय में परमानेंट वैकेंसी निकलती है। रंग रूप, नैन नक्श, विद्या, भूषण इन सब से सुसज्जित यह माधुरी साक्षात्कार देती है और चयनित हो जाती है। दिल्ली विश्वविद्यालय के एक प्रतिष्ठित महाविद्यालय में उसको परमानेंट नौकरी मिल जाती है। जब तक माधुरी को नौकरी मिलती है तब तक पल्लव धीरे-धीरे बड़ा हो रहा होता है। गंगा बोर्डिंग स्कूल में बारहवीं कक्षा में पढ़ रहा होता है और उसको भी भारतीय संस्कृति में बड़ी रूचि रहती है।

पल्लव बैडमिंटन खेलने में उस्ताद होता है। उसको टेबल टेनिस खेलने में भी बड़ा आनंद आता है। छुट्टियों के दिन जब वो घर आता है तब घर में माँ बेटे दोनों बड़े चाव से कैरम बोर्ड खेलते हैं। माधुरी उसको खेलते वक्त कहती है :

- पल्लव ! बेटा यह कर्म का बोर्ड है जो हम कर्म करेंगे, यह उसका बोर्ड है।

बेटा इस बात को बड़े ध्यान से सुनता है और याद रखता है कि कैरम बोर्ड में हम जहाँ निशाना लगता, लगाते हैं और जिन लक्ष्यों पर हम अपनी गोटी को पहुँचाते हैं, वह हमारे कर्म का बोर्ड होता है। पल्लव सही निशाना लगाना सीख जाता है और कहता है :

- माँ मैं संघर्ष नहीं करूंगा। मैं जल्द ही किसी अच्छी नौकरी में आ जाऊँगा या अपना व्यापार करूंगा। मैं जल्द ही तुम्हें इस मुसीबत से बाहर निकाल लूंगा। तुम किसी बात की चिंता मत करना माँ।

पल्लव अभी इतना बड़ा नहीं हुआ है कि उसे यह बात समझ आ जाए कि अब उसकी माँ किसी पर निर्भर नहीं है। अब वह आत्मनिर्भर हो चुकी है। वह विश्वविद्यालय के बड़े प्रतिष्ठित महाविद्यालय में प्रोफेसर है। क्या आर्थिक रूप से सशक्त होने पर स्त्री अकेले परिवार चला सकती हैं ? क्या पैसा हाथ में आने पर स्त्री अकेले जीवन व्यतीत कर सकती है ? क्या आत्मनिर्भर होने पर सभी शक्तियाँ स्त्री को मिल जाती हैं? आज भी लोग अपनी संतान को संस्कार देते समय देवी सरस्वती के रूप को याद करते हैं, गृह प्रबंधन की कुशलता के लिए देवी लक्ष्मी को पूछते हैं और दुष्टों के अन्याय का प्रतिकार करते समय माँ दुर्गा की आराधना करते हैं। हर रूप में, सभी कार्यों में स्त्री ही तो है तो क्या स्त्री के बिना पुरुष अधूरा है या पुरुष के बिना स्त्री अधूरी है या फिर दोनों एक दूसरे के पूरक हैं ?

तलाक के लिए मदन माधुरी से कभी संपर्क नहीं करता है। न ही जीवन पर्यंत उससे कभी मिलता है। किसी दूर के रिश्तेदार से पता चलता है कि मदन ने दूसरी शादी कर ली है। जिस लड़की को मदन चाहता था माँ बाप ने पहले उस लड़की को स्वीकार नहीं किया था क्योंकि वह दूसरी बिरादरी की थी इसलिए उसकी मदद माधुरी से जबरदस्ती शादी करा दी पर बाद में माधुरी के साथ जब उसकी पटरी नहीं जमी तब घरवाले मान गए और उसकी उसी लड़की से शादी करा दी।

बहुत कोशिश के बाद भी मदन ने तलाक के लिए कभी संपर्क नहीं किया। अंत में एकल निर्णय के अनुरूप माधुरी मदन से मुक्ति के लिए न्यायालय की शरण में जाती है और मन में यह विचार करती है कि परिवार बड़ा या देश ? और एकल निर्णय के अनुरूप ही तलाक ले लेती है।

अब माधुरी का हाथ थोड़ा खुला हो जाता है। वह नया घर खरीद लेती है। उसकी सास-सज्जा करती है। नई गाड़ी खरीदती है। बहुत तरह की सुख सुविधाओं को वह अकेले ही जुटा लेती है पर फिर जब वह अकेली होती है तब वही कमी उसे खलती है कि आज मेरे पास सब कुछ है, घर है, गाड़ी है, नौकरी है, पैसा है, बेटा है पर पति नहीं है, मदन नहीं है इससे अच्छा तो यही होता कि मैं इश्क ना करके देश की सेवा करती।

आज भी माधुरी इस मानसिक उधेड़बुन से बाहर नहीं निकल पाई है। उसे हमेशा अपने पिताजी की बात याद आती रहती है और वह सोचती रहती है कि सचमुच में देश की सेवा क्या है ? क्या सीमा पर देश की रक्षा करना ही देश सेवा है या फिर भारत के विविधताओं में जो रंग हैं उनके उन रंगों को सहेजना देश सेवा है जिनके ऊपर सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और शैक्षणिक रंग कभी नहीं चढ़ा।

माधुरी हमेशा इस उधेड़बुन में लगी रही कि राष्ट्रीय भावना को मन के भीतर जागृत करने के लिए क्या किसी व्यक्ति को एकल जीवन ही व्यतीत करना चाहिए। एकल जीवन के बिना राष्ट्र के प्रति किसी बड़े दायित्त्व का निर्वहन या राष्ट्रीय सेवा भावना को स्थाई रूप से जागृत रखना क्या संभव नहीं होता है ? क्या गृहस्थ जीवन में रहते हुए कोई व्यक्ति राष्ट्र के प्रति संपूर्ण दायित्वों का निर्वहन नहीं कर सकता चाहे क्षेत्र कोई भी हो, माधुरी के जीवन में रोज आते जाते ऐसे प्रश्न उसे चिंतनशील बनाए रखते थे और उसके मानस पटल को विचलित करते हैं, खंडित करते हैं और कई बार व्याकुल भी कर देते हैं।

स्वयं माधुरी यह तय नहीं कर पाती है कि सचमुच में राष्ट्र सेवा है क्या ? क्या शिक्षा के माध्यम से नई पीढ़ी को जागृत करना राष्ट्र सेवा नहीं है ? लेकिन दूसरी तरफ उसके मन में यह भी विचार आता है कि यह सब तो वह अपने लालन-पालन अपने जीवन के भरण-पोषण के लिए करती हैं। इसके बदले में वह पूरा मूल्य लेती है फिर मूल्य लेने के पश्चात किसी कार्य का मूल्यांकन कैसे होता है ? माधुरी खुद से प्रश्न करती है खुद ही उत्तर देती है। न ही कभी उसके प्रश्न खत्म होते हैं और न ही अपने उत्तरों से स्वयं को संतुष्ट कर पाती है। उसके मानस पटल पर हमेशा उन लोगों के चित्र उभरते रहते हैं, उगते और डूबते रहते हैं जिन्होंने राष्ट्र के लिए स्वयं को अविवाहित रखा।

सांस्कृतिक परिदृश्य में देखें तो अनेक संत, महात्मा, योगी, अविवाहित ही तो रहते हैं। क्या यथार्थ में यही लोग संस्कृति के संरक्षक होते हैं ? यही संस्कृतियों और राष्ट्रीयता की भावना को अगली पीढ़ी के लिए संप्रेषित करते हैं ? सवाल पर सवाल, प्रश्न पर प्रश्न और उत्तर देने वाला कोई नहीं।

यही सब सोचते-सोचते माधुरी अनंत विचारों की आकाशगंगा में खो जाती है और यह तय नहीं कर पाती है कि परिवार बड़ा या देश ? एक प्रश्न और उसके मन में हमेशा तैरता रहता है कि साधारण व्यक्ति जो अपने घर परिवार के प्रति समर्पित है उसके भीतर भी देश के प्रति उतना ही प्रेम है जितना राष्ट्र के प्रति समर्पित निष्ठावान किसी बड़े व्यक्ति के मन में होता है।

प्रश्न इतना भी कठिन नहीं है परंतु उत्तर भी इतना सरल नहीं।

एक साधारण व्यक्ति क्या निर्णय करे परिवार के लिए जिये या देश के लिए खुद को समर्पित कर दे?

❖

युवा कवयित्री एवं कहानीकार
सी- 56 वेस्ट ज्योति नगर एन्कलेव, लोनी रोड, शाहदरा, दिल्ली-110094
मो. 7859926773 ईमेल komal43587@gmail.com

पृष्ठ 18 का शेष...

किन्तु करूं क्या ? तुम्हारे प्रति हमारा प्रेम, लगाव, शुभेच्छा, स्वास्थ्य, प्रसन्नता, विकास और प्रत्येक क्रिया-कलापों की अक्षुणता से हम बेहद प्रसन्न होकर खिलखिलाते हैं, किन्तु जब कभी तुम्हारे दर्द और विवशताओं पर ध्यान जाता है, रूदन, क्रन्दन करती हूँ।

प्रिय भारत तुम्हारी सांस्कृतिक चेतना लोकमंगल और वसुधैव कुटुम्बकम की भावना ही तो अनमोल और भारतीय संस्कृति का मूल मंत्र है। तुम्हारी सांस्कृतिक छवि विश्व के दर्पण में चमकीली, उदार और दया, सत्य, क्शमा, श्रम से भरपूर और सर्वमान्य भी है।

तुम्हारी उदारता असीम है, अब तक जाने कितनी बाहरी संस्कृतियाँ समय–समय पर तुम्हारे पास आईं। आपने अपने दया और उदारतावश उन सभी को बिना किसी वर्गभेद, धर्मभेद के आधार पर अपनी विशाल, सशक्त भुजाओं में समाकर विलय कर लिया।

यही विलय की प्रक्रिया, उदारता, ही तो हमारी सहिश्णुता है। अपरिमित भारतीय सांस्कृतिक धरोहर ही तो हमारे संस्कृति की आत्मा है, सार है।

भारत छोटे-बड़े राज्यों को मिलाकर कुल 29 पुष्पों का गुलदस्ता है। इस गुलदस्ते में रंग-बिरंगे, विभिन्न प्रजातियों, रंगों के पुष्प तो हैं किन्तु सबकी खुशबू एक जैसी है। इसीलिए तो विभिन्नता में भी एकता के सन्देश की वाहक है, हमारी संस्कृति।

हमारे सांस्कृतिक पण्डितों ने इसी एकता के मूल मंत्र को भारत, तुम्हारी शक्ति कहा है। यही एकता अखण्डता भारत की सांस्कृतिक चेतना भी है।

इन सभी राज्यों में पारम्परिक रीति-रिवाजों के साथ आधुनिकीकरण का तड़का भी भरपूर है। आज के कालखण्ड में प्रत्येक राज्य अपनी विरासत को संजोये रखने तथा नये-नये की प्रक्रिया को अपनाकर, प्रत्येक क्षेत्र मे अपनी संस्कृति के संरक्षक बन रहे हैं।

इस दिशा में विभिन्न सांस्कृतिक संस्थाएँ, स्वयंसेवी संस्थाएँ सरकारी गैरसरकारी स्तर पर निपुणता और मेहनत से कार्य कर रही हैं।

जहाँ एक ओर हमारे प्राचीन धरोहरों को सुन्दर सुरक्षित और दर्शनीय रख पा रहे हैं, वहीं नये कलेवर विषय और क्रिया कलापों से श्रेष्ठता प्रदान कर रहे हैं। शिक्षा, मानवीय मूल्य, स्वास्थ्य, नाटक, नौटंकी, फैशन शोज़, मेले, महोत्सव, नृत्यसंगीत, गायन, शास्त्रीय हो या लाइट गीत, गजलें, हस्तशिल्प हो या प्रदर्शनीय, सबका उद्देश्य भारतीय सांस्कृतिक धरोहर को अक्षुण बनाना ही है।

भारतीय संस्कृति, जनमानस अर्थात लोकमंगल को साथ लेकर चलती है। उदारता और सहृदयता यहाँ तक कि हमारी संस्कृति वृक्षों को, नदियों को, पत्थर में ढ़ले काल्पनिक प्रभु आकृतियों की भी पूजा अर्चना करती है। तुलसी हो या पीपल, गंगा हो या गोमती हम इनके पवित्र जल का आचमन करते हैं, पूजन करते हैं। वटवृक्ष का पूजन देश के कई हिस्सों की भारतीय नारियाँ, सावित्री पूजन कर प्रति के दीर्घ जीवन की कामना करती, गंगाजल जीवन और जीवन के अन्त समय में भी तुलसीदल के साथ अन्तिम स्वांस के समय दिया जाता है।

भारत तुम्हारे माटी का तिलक लगाकर सैनिक रणक्षेत्र में उतरते हैं। यही तो हमारी सांस्कृतिक आस्था है।

भारत के राज्यों का एक विहंगम, किन्तु सूक्ष्म दृष्टिपात करें तो विविधता एक एकता के दर्शन होते हैं।

सर्वप्रथम महाराष्ट्र एक विशाल प्रदेश सांस्कृतिक क्षेत्र में बेहद सक्रिय कारोबार के अतिरिक्त यहाँ की मीठी भाषा शिवाजी छत्रपति का प्रसिद्ध वीरता का स्थल। भारतीय सिनेमा का सम्भवतः विश्व में सर्वलोकप्रिय 'हब', एक उद्योग के रूप में फीचर फिल्मों तक, हैंगिग गार्डेन, टेलीविजन के माध्यम से भी भारतीय संस्कृति के संवर्धन, मनोरंजन का बड़ा जरिया है।

समुद्र का विशालय रूप, गुफाएं, गेटवे ऑफ इण्डिया और सबसे बड़ी विशेषता यहाँ का जनसमूह। यहाँ कलाकारों का मान सम्मान और क्षेत्रीय संस्कृति में पहरावा, लावनी तथा लोककलाओं का विशाल जमघट, फिल्मी हस्तियों के अतिरिक्त दूसरे राज्यों से पलायन कर आने वालों की भीड़ भी है। यहाँ भी एक मिलीजुली संस्कृति देखने को मिलती है। गोवा हो या पुणे, अपनी संस्कृति और गतिविधियों हेतु तथा पर्यटन हेतु भी लोकप्रिय है।

गुजरात सौन्दर्य, सफाई और शानदार गुजराती खान-पान, फाफड़ा, जलेबी, थेपला, गुजराती बोली, व्यंजन रंगीली पोशाकें और सम्पन्नता, विकास, सांस्कृतिक विविधता मिलती है। हमारे लोकप्रिय

प्रधानमंत्री जी का क्षेत्र, जो उनेक व्यक्तित्व में परिलक्षित होता है। गरबा, डाण्डिया गुजरात की पहचान है।

पंजाब का नाम आते ही एक दमदार राज्य का आभास होता है। भगत सिंह की धरती, विशेष वेश-भूषा सर पर पगड़ी और मस्ती के साथ लस्सी, सरसों का साग और मक्के की रोटी। गिद्दा, भांगड़ा की प्रस्तुति, स्वर्णमन्दिर या गुरूद्वारे, गुरूनानक का प्रांजल प्रदेश जहाँ सतश्री अकाल और वाहे गुरूजी की अरदास है। पंजाबी कुड़ी की प्रान्दी मोहक और संस्कृति का दृष्टान्त भी है। परम्परागत संस्कृति और आधुनिता का मेल दिखता है।

दक्षिणी प्रदेशों में भी प्राकृतिक सौन्दर्य, दर्शनीय स्थल, भाशा थोड़ी कठिन, हर प्रदेश की तरह आस-पास के क्षेत्रों में रीति-रिवाजों, खान-पान, बोली और वेश-भूषा में कुछ अलगाव है।

इडली, डोसा, उपमा यहाँ के भोज्यपदार्थ अब विश्व स्तर पर लोकप्रिय हैं। साहित्य, अनुवाद और थियेटर श्रेष्ठ स्तरीय हैं। फिल्म निर्माण का कारोबार खूब फल-फूल रहा है।

बिहार का नाम आते ही एक अविकसित प्रदेश का आभास होता है। छोटे-बड़े जाने कितने स्थल, पर्यटन के बेहतर स्त्रोत, आस-पास के स्थलों पर नक्सली प्रभाव जिस पर अभी और प्रभावशाली कार्य होना है। खान-पान में लिट्टी-चोखा प्रचलित है। लोकनृत्य गीत में गहन सांस्कृतिक चेतना है, मधुबनी हस्तशिल्प विश्व में लोकप्रिय है। आदिवासी क्षेत्रों में अलग संस्कृति का समायोजन है।

राजस्थान देश का वह राज्य जहाँ रजवाड़ों का दबदबा रहता है। अब राजघरानों ने अपने महलों को टूरिज्म का केन्द्र बनाकर विश्व में पर्यटन और अपनी धनी संस्कृति, हस्तशिल्प, बंधेज, लाख के आभूषण, खिलौने, गायन, वादन का ईश्वरीय देन लोकरंग में रंगे कलाकार गीत-संगीत और लोकनृत्य के रूप में कालबेलिया नृत्य विश्व प्रसिद्ध है। मूंग की दाल का हलवा, चूरमा, गट्टे की सब्जी और कई हस्तशिल्प के नायाब नमूने, कठपुतली नृत्य लोकप्रिय धरोहरें हैं। यहाँ की बोली मीठी लगती है। यह लुभावना राज्य जोधपुर, उदयपुर, चित्तौड़गढ़, राणाप्रताप की भूमि सुन्दर, सभ्य और सजावटी राज्य है। अपनी संस्कृतिक क्रिया-कलापों से पर्यटक आकर्शित होते हैं।

उत्तर प्रदेश एक बड़ा राज्य भारत का विशेष सहोदर, पूर्वी पश्चिमी उत्तर प्रदेश बोली का कड़क अंदाज पूर्वी इलाके में आते-आते भोजपुरी चाश्नी में खुल जाता है। आज भोजपुरी फिल्में हों या नृत्य, गायन, नौटंकी, नाटक, साहित्य और शिक्षा कुछ नये कलेवर के साथ आंचलिक और परम्परिक लोक रंगों का इन्द्रधनुष लोकप्रियता पा रहा है।

सोहर, विवाह गीत, बन्ना-बन्नी अवधी कलेवर आल्हा, धोबी नृत्य, कजरी, सांस्कृतिक रूप से धनी प्रदेश लुम्बिनी (कुशीनगर) भगवान बुद्ध की निर्वाण स्थली, गीताप्रेस, संतकबीर की निर्वाण स्थली, गोरखनाथ का मन्दिर, मिर्जापुर की कालीन, टेरीकोटा, बांस का हस्तशिल्प, पूर्वी क्षेत्र से भी गिरमिटया एक झुण्ड में 'लालारूख' पहला पानी की जहाज में लदकर, मॉरिशस, सुरीनाम आदि देशों में गये थे। आज उन्हीं वंशज वहाँ अपनी संस्कृति के वाहक हैं।

बनारस का मणिकर्णिका घाट, गंगा का पावन घाट बिस्मिल्ला खान की शहनाई, बनारसी पान की गिलौरी, मिठाइयाँ, बनारस के पण्डे, बनारसी साड़ी, बाबा विश्वनाथ का मन्दिर, महामनामालीय विश्वविद्यालय वाराणसी। सहारनपुर के लकड़ी का हस्तशिल्प, साड़ियाँ, मिर्जापुर वादन का सांस्कृतिक स्थल।

सूरदास, कबीरदास, रैदास, तुलसीदास और इनकी कृतियाँ हमारी सांस्कृतिक सम्पदा हैं। प्रेमचन्द्र की लेखनी का जादू, लखनऊ में स्वतंत्रता सेनानियों का स्थल, रेलीडेन्सी, इमामबाड़ा, बारादरी, अमीनाबाद, रूमीदरवाजा, हजरतमहलपार्क, भूलभुलैया, सतखण्डा इत्यादि।

वर्तमान में लखनऊ अत्यंत साफ, सुन्दर इमारतों, पार्कों सहित सांस्कृतिक स्तर पर बहुत धनी है। यहाँ के सांस्कृतिक कार्यक्रम नृत्य, गीत, साहित्य, पत्रकारिता और मेले, महोत्सव से महफिलों, फिल्मों, नाटकों से खूब फल-फूल रहे हैं। यहाँ पर्यटन पर विशेष कार्य होने हेतु वार्तालाप विकास पर है। उत्तर प्रदेश में 'फिल्म सिटी हब' का शुभारम्भ हो चुका है। अयोध्या को सांस्कृतिक 'हब' बनाने की तैयारी है जहाँ पर भगवान राम का भव्य मन्दिर का निर्माण हो रहा है। लखनऊ एकीकरण की संस्कृति का सलोना रूप है उर्दू का अदब शीरी जुबान और हिन्दी

का उत्तम संस्कार, फैशन और मिली-जुली भाषा का मीठा मंजर, नजाकत और नफासत का उत्कृष्ट नमूना, हस्तशिल्प, चिकनकारी विश्वबाजार में एक बड़ी लोकप्रियता है।

फिल्म निर्माण हेतु बेहतर लोकेशन हन्ट तो हैं ही। यहीं फिल्में बनाई जा रही हैं। सांस्कृतिक उपक्रमों का खूब विकास हो रहा है। नैनीताल हो, गढ़वाल, उत्तराखण्ड में भी सांस्कृतिक स्तर पर भरपूर विकास हो रहा है। यहाँ आंचलिक कलाकारों को प्रश्रय मिलता है।

बंगाल प्रदेश का नाम आते ही एक मिठास-सी मुँह में घुलने लगती है। मशहूर रसगुल्ला और संगीत की मिठास, मोहक और विश्व विख्यात भी है। बोली की मिठास, बंगाली साड़ी विवाह की रीति-रिवाज, रविन्द्र संगीत, बाउल संगीत के साथ रवीन्द्र नाथ टैगोर का साहित्यिक और संगीत में योगदान। विक्टोरिया पैलेस, हाबड़ा ब्रिज, तांत की बंगाली साड़ी, शंख की चूडियाँ, लाल सिन्दूर, मस्तक का लाल टिका एक सांस्कृति परिवेश। मछली खान-पान में शुभ कार्यों में आवश्यक, कलकत्ता में हाथ वाले रिक्शे अमानवीय से अब सुधार की ओर अग्रसर हैं। अन्य साधन भी प्राप्त हैं।

मिजोरम, मेघालय, आसाम, चेरापूंजी की बारिश। आसाम की बोली, बंगाली से मिलती-जुलती सांस्कृतिक चेतना का अलग मंजर है। पिहू नृत्य, भूपेन्द्र हजारिका और प्राकृतिक खजना। अपना अलग संस्कार, व्यापार का प्राविधान, सादगी और परम्परा का भरपूर निर्वाहन।

भारत कश्मीर से कन्याकुमारी तक अपने सौष्ठव अलंकृत संस्कृति, प्रकृतिक छटा, लोकमंगल, लोकरंजन और लोकवाणी का नगीना है। यह भारत का सौभाग्य है कि पड़ोसी देशों के साथ हमारी मित्रता के विकास और सौहार्द की ओर है। जिस प्रकार गहन सागर को बूंद में रख पाना कठिन है वैसे ही भारतीय संस्कृति का भी सम्पूर्ण बखार कर पाना कठिन है।

एक खास बात निरन्तर चिंतित करती है क्या हमारी पारम्परिक संस्कृति में सेंध लगाना प्रारम्भ हो गया है? आज की पीढ़ी को कुछ सतर्क रहकर सोचना विचारना होगा। हम विश्व के किसी भी देश में जाएँ किन्तु अपनी परम्परा संस्कार और धनी संस्कृति को संजोकर रखने का प्रयास अवश्य ही करें।

हमारा भारत अनेकता में एकता का दृष्टांत हैं। यही एकता हमारी शक्ति है। यही एकजुटता हमें सदैव बड़े-बड़े विघ्नों से डटकर मुकाबला करने की ऊर्जा देगा।

एकता अखण्डता के साथ प्रेम, संस्कार, दया, क्षमा, जैसे पारम्परिक गुणों को साथ रखें। भारत से प्रेम करें और सबल राष्ट्र के निर्माण में अपनी संस्कृति को ऊर्जावान रखें। इसी सन्दर्भ में माननीय अटल विहारी बाजपेयी जी का यह कथन दृष्टांत के रूप में प्रस्तुत है:-

''भारत जमीन का टुकड़ा नहीं, जीता जागता राष्ट्र पुरुष है।
हिमालय इसका मस्तक है, गौरी शंकर शिखा है,
कश्मीर इसकी रीढ़ है, पंजाब और बंगाल दो विशाल कंधे हैं,
विध्यांचल कटि है। नर्मदा करधनी है, इसका हृदय अमृत है,
जो परम व्योम में सत्य द्वारा ढका है।
पूर्वी और पश्चिमी घाट दो विशाल जंघायें हैं।
कन्याकुमारी इसके चरण हैं, सागर इसके पंख पखरता है,
पावस के काले मेघ, इसके कुन्तल केश हैं,
चाँद और सूरज इसकी आरती उतारते हैं।
यह वंदना की भूमि है।
यह अर्पण की भूमि है।
इसका कंकर कंकर शंकर है।
इसका बिन्दु बिन्दु गंगाजल है।
हम जियेंगे तो इसके लिए।
हम मरेंगे तो इसके लिए।"
पूर्व प्रधानमंत्री जी श्री अटलबिहारी वाजपेई जी!

❖

पता-4/151, विशाल खण्ड, गोमती नगर, लखनऊ पिन 226010
मो0नं0-9838661663

रूम हीटर

श्यामल बिहारी महतो

बाहर ठंड का कड़ा पहरा था। कुत्तों ने जोर-जोर से भौंकने शुरू कर दिये थे। शायद ठंड से बचने का उनके पास यही एक मात्र विकल्प था। इस मामले में गली के कुत्ते और शरद बाबू में बहुत ज्यादा फर्क नहीं था। तो क्या पत्नी को साथ सुलाने के लिए कुत्तों की भांति शरद बाबू को भी रोना शुरू कर देना चाहिए ? या फिर पत्नी के बिस्तर पर खुद जाकर उसे सो जाना चाहिए ! बड़ी विडंबना वाली बात थी। ऐसी बात नहीं थी कि शरद बाबू ने इसके लिए कोशिश नहीं की थी। उस रात की पत्नी की फटकार शरद बाबू आज तक नहीं भूलें हैं। वो भी एक शरद रात थी। बाहर घना अंधेरा था। शरद बाबू अपने कमरे में बैठे-बैठे उंघ रहे थे। जाने क्या सूझी। अचानक वह कमरे से बाहर निकले और सीधे पत्नी के बिस्तर में जा घुसे। मालूम हुआ पत्नी बिन कपड़ों के है। देह स्पर्श से ही शकुंतला देवी उछल पड़ी थीं।

शीत लहरी से पूरा क्षेत्र कांप रहा था। ठंड ने समस्त प्राणियों में अपना दबदबा कायम कर लिया था। किसान बड़ी मुश्किल से खलिहान तक पहुँच रहे थे और मजदूर हिलते डुलते काम पर जाने को मजबूर थे। जिस पर नजरें पड़ती वही कपड़ों में लिपटे नजर आ रहे थे। शरद बाबू भी जवानों की तरह बदन पर जैकेट डाले ऑफिस के लिए निकल पड़े। ऑफिस तो पहुँच गया पर लगा मन घर में ही छोड़ आया है।

उस दिन पहली बार ठंड ने उसे ठिठुरा दिया था, कहिए तो डरा दिया था। बढ़ती उम्र का असर था या पूस की ठंड का प्रभाव! शरीर एक दम से उनका कांप उठा था। लगा ठंडी हवा हड्डियों के बीच से पूरे शरीर के रोमरोम में समाती जा रही है। आफिस में बैठे-बैठे, उसके कांपते मन ने पहली बार "रूम हीटर" का नाम लिया, जैसे मरता हुआ आदमी "राम" का नाम लेता है और चोर घुसखोर थानेदार का।

तब जीवन में पहली बार शरद बाबू रूम हीटर लेने बाजार पहुँचे थे। तभी एक साथी ने रूम हीटर पर उसे एक लम्बा सा लेक्चर दे डाला- " जिस घर में गरम मिजाज की बीवी हो,उस घर में कभी रूम हीटर की जरूरत नहीं पड़ती है, वो घर सदा ही गरम रहता है ..।"

" फिर भी कोई लेना चाहे तो..?" दूसरे साथी ने टोका था।

" लिख लो, आग लगने की संभावना बनी रहेगी...!"

" जिसके घर में पत्नी हो, उसे रूम हीटर की क्या जरूरत..?" तीसरे साथी का तीर चला।

" इसका जवाब तो शरद बाबू ही दे सकते हैं...!"

शरद बाबू कोई जवाब नहीं दे सके। केवल खोखली हँसी हंस दिये थे। कितनी पेच है जीवन में ! हर पेच में कितने जीवन उलझे पड़े हुए हैं। एक ढूंढो लाखों करोड़ों शरद बाबू उलझे मिलेगें जीवन की इस पहेली में।

शरद बाबू अभी तक खुद को बड़ा गबरू जवान समझते आ रहे थे। आज पहली बार उसे अर्ध बूढ़ा होने का एहसास हो रहा था। सोच रहेथे, उन लोगों के बारे में जब दुनिया में रूम हीटर नहीं हुआ करता था तब लोग ठंड का मुकाबला कैसे करते होंगे ? आज उसे माँ की कही एक बात बहुत याद आ रही थी। ऐसे ही किसी बात पर उसकी मां ने कहा था-" आदमी अंदर से मजबूत हो, तो वो ठंडी-गरमी-बरसात सभी

का मुकाबला कर सकता है .. पर कमजोर आदमी बरसात के पानी में भी ठिठुर कर मर जायेगा..!"

मतलब कि अंदर से आदमी कमजोर हो तो हाथी का खाल भी ओढ़ ले तब भी उसे ठंड से नहीं बचा सकती है, ऊर्जा अंदर से पैदा होती है बाहर से तो सिर्फ तड़क भड़क दिखाई देती है। कमोवेश शरद बाबू का यही हाल था। खैर जो हो सो हो, साथी की पसंद से उसने एक रूम हीटर लिया और घर आ गया। उसके मन को तसल्ली हो रही थी कि अब वह ठंड से मुकाबला कर सकता है। लेकिन रास्ते भर वह यही सोचता आ रहा था-" जो आदमी आज तक पत्नी का मुकाबला नहीं कर सका,वो रूम हीटर से ठंड का मुकाबला करने की सोच रहा है -" शरद बाबू खुद पर हँस पड़े थे।

उसकी पत्नी को पता चला तो रूम हीटर से ज्यादा वो गरम लगी -" यह रूम हीटर -पिटर तुम अपने रूम में ही रखना, मुझे इसकी जरूरत नहीं है...!"। उसने पति से सख्त लहजे में कही थी।

" तुम तो खुद एक रूम हीटर हो, तुम्हें इसकी क्या जरूरत..?..यह तो मैं अपने लिए लाया हूँ। " शरद बाबू ने धीरे से कहा था।

" क्या कहा...?" पत्नी पलटी थी

" कुछ नहीं .. कुछ नहीं .!" वह कहते रह गये थे।

जब भी पत्नी उसके सामने आती या खुद वह पत्नी के सामने जाता समय जैसा भी होता,चाहे जिस रूप में भी- पत्नी सदैव एक रूम हीटर की तरह नजर आती और उसकी ताव में शरद बाबू का मन और तन दोनों झुलसते रहते। कभी चीखना चाहे-चीख न सके, रोना चाहे - रो न सके। उसकी चाहत की गरमाहट को पाने के लिए शरद बाबू का दिल हमेशा तड़पते रहता लेकिन पत्नी के आगे उसके दिल की आवाज कभी मंदिर का लाउडस्पीकर न बन सका कैदी की तरह सदा दबे-दबे रहता। वहीं दाम्पत्य जीवन के तीस साल बीत जाने के बाद भी शकुंतला देवी गरम तावे की तरह तपी-तपी सी रहती थीं। और शरद बाबू की जरा जरा सी बात पर पानी की तरह छन छना उठती थीं।

रात के आठ-सवा आठ का वक्त था। घर में अपने रूम में रूम हीटर लिए खड़े शरद बाबू खड़े सोच में डूबे हुए थे। रूम हीटर पर कही एक दोस्त की बात बार-बार कानों में गूँज रही थी -" जिसके घर में बीवी हो उसे रूम हीटर की क्या जरूरत। साथ दोनों सो जाएँ। रूम हीटर की जरूरत ही नहीं पड़ेगी..!"

" हर किसी की बीवी रूम हीटर नहीं होती, कोई कोई गरम चूल्हा भी होती है और चूल्हा को साथ लेकर सोया नहीं जाता ..!' उसने कहना चाहा था पर कह नहीं सका। उन्हें कैसे बताता कि मेरी बीवी रूम हीटर नहीं-गैस सिलेंडर है..जलती कोयला का चूल्हा है..कोयले से चलने वाली रेल इंजन है ...!"

सच बात तो यह थी कि शरद बाबू और उसकी पत्नी शकुंतला देवी ये दोनों पति पत्नी के रूप में कभी साथ सोए ही नहीं। शादी के बाद से ही शकुंतला देवी ने दोनों के बीच एक लक्ष्मण रेखा खींच दी थी, न जाने क्यों ? आज तक शरद बाबू को पता न चल सका था। किसी से सुना था शकुंतला देवी शरद बाबू के साथ शादी के पक्ष में नहीं थी। शादी के बाद से ही उसे शरद बाबू से चिढ़ थी। सो जब उसे पति नाम के प्राणी की जरूरत महसूस होती थी तब पेटीकोट की डोर खींच देती,लक्ष्मण रेखा कुछ समय के लिए मिट जाता। और शरद बाबू रिमोट की तरह खींचे चले आते थे। जरूरत पूरी करते, फिर पेटीकोट की डोर बंध जाती और लक्ष्मण रेखा खिंच जाती। इसी लक्ष्मण रेखा को मिटाने के लिए अब तक किए गए शरद बाबू के सारे प्रयास बेकार साबित हुए थे। रूम हीटर उसका एक आखरी प्रयास था।

बाहर ठंड का कड़ा पहरा था। कुत्तों ने जोर-जोर से भौंकने शुरू कर दिये थे। शायद ठंड से बचने का उनके पास यही एक मात्र विकल्प था। इस मामले में गली के कुत्ते और शरद बाबू में बहुत ज्यादा फर्क नहीं था। तो क्या पत्नी को साथ सुलाने के लिए कुत्तों की भांति शरद बाबू को भी रोना शुरू कर देना चाहिए ? या फिर पत्नी के बिस्तर पर खुद जाकर उसे सो जाना चाहिए ! बड़ी विडंबना वाली बात थी। ऐसी बात नहीं थी की शरद बाबू ने इसके लिए कोशिश नहीं की थी। उस रात की पत्नी की फटकार शरद बाबू आज तक नहीं भूलें हैं। वो भी एक शरद रात थी। बाहर घना अंधेरा था। शरद बाबू अपने कमरे में बैठे-बैठे उंघ रहे थे। जाने क्या सूझी। अचानक वह कमरे से बाहर निकले और सीधे पत्नी के बिस्तर में जा घुसे। मालूम हुआ पत्नी बिन कपड़ों के है। देह स्पर्श से ही शकुंतला देवी उछल पड़ी थीं। देखा शरद उसके बिस्तर पर लेटा हुआ है। वह नागिन की तरह फुफकार उठी-" तुम्हें मेरे बिस्तर पर आने की हिम्मत कैसे हुई ? मेरी इच्छा के विरुद्ध मेरे शरीर तो क्या मेरे बिस्तर पर दुबारा आने की सोचना भी नहीं ..!"

" मैं तुम्हारा बिहाता पति हूँ। कोई पराया नहीं...!" शरद बाबू अडे थे।

" पति गया पोदिना लाने..चल निकल..जो मिलता है वो भी बंद हो जायेगा, फिर हाट बाजार मुँह मारते फिरना...!"

शरद बाबू बड़े बे आबरू होकर निकल पड़े थे, उस रात कमरे से। तब से बिन बुलाए कभी उसने पत्नी के कमरे में कदम नहीं रखा।

गली में कुत्तों का भौंकना जारी था। और घर में शरद बाबू के अंदर भी एक संघर्ष जारी था। रूम हीटर का क्या करूं-क्या न करूं का संघर्ष ! रात के दस बज चुका था।

दस से ग्यारह बज गया ! और फिर बारह भी बज गया। गली के कुत्तों का भौंकना बंद हो गया। लगातार भौंकने से शायद उन्हें गर्मी का एहसास हो गया था और वे चुप हो गए पर कैदी की तरह शरद बाबू अब भी स्विचबोर्ड के सामने खड़े थे और पत्नी बगल के कमरे में रजाई ओढ़ बकरी बेचकर सो रही हो ऐसा प्रतीत होता था। मालूम होता उसे इस बात से कोई लेना देना नहीं था कि उसका पति इस वक्त किस हालत में है , जाग रहा है या सोया हुआ है। ऐसी निर्मोही पत्नी शायद ही संसार में कोई दूसरी हो, ऐसा आप सोच सकते हैं। लेकिन मैं ऐसा नहीं सोचता। हर औरत के लिए उसका पति राशनकार्ड की तरह होता है और उनके संबंधों का सार्वजनिक मुहर लगा होता है। जैसा कि हर औरत में एक दिल भी होता है, जैसे बकरी का भी होता है जो कभी न कभी धड़कता है! जब उनकी यौन भूख जाग उठती है, तब बकरी-बकरे के लिए मिमिया ने लगती है। यही मनोदशा हर औरतों में पाई जाती है, बस सामने वाला पति एक मर्द होना चाहिए और, तब उनमे चाहत की ज्वार-भाटा उमड़ पड़ती है और वह मिलन की आग में तड़प उठती है।

खड़े-खड़े शरद बाबू का दर्द बढ़ने लगा था। सोचता भी जा रहा था कि रूम हीटर का प्लग डाल स्विचऑन कर दे और रजाई ओढ़ खुद भी सो जाए। इतने सालों अकेले सोया है तो आगे भी सो लेगा। ऐसा कई बार सोचा भी उसने परन्तु न जाने आज उसका मन किस ज़िद पर अड़ा हुआ था कि पत्नी को अपने बिस्तर पर लाना है तो लाना है बस ! तभी बिजली चली गई। इनवर्टर चालू हो गया। शरद बाबू के दिमाग में भी,बिजली कौंध गई। शायद वह इसी पल का इंतज़ार कर रहे थे। और उसने रूम हीटर की तार का प्लग स्विचबोर्ड में डाला और स्वीचऑन कर दिया ..!

अगले ही पल " घुप्प " की आवाज के साथ घर में अंधेरा छा गया ...?

शकुंतला देवी चिल्लाई-" क्या हुआ ? बिजली चली गई तो इनवर्टर का क्या हुआ....?" शरद बाबू ने कोई जवाब नहीं दिया।

शकुंतला देवी कमरे से बाहर निकली, उसे टायलेट जाना था। अंधेरे में दो कदम आगे बढ़ीं। सामने शरद बाबू खड़े थे, उनसे जा टकराई-" तुम यहाँ खड़े क्या कर रहे हो। इनवर्टर का क्या हुआ..?"

" शायद इनवर्टर का फ्यूज -एस सी उड गया है..!"

" सुबह मेरी धारावाहिक का क्या होगा...?"

" यहाँ मेरा खुद का जीवन एक धारावाहिक बन चुका है वो किसी को नहीं दिखता ..!" शरद बाबू ने जोर से कहा और अपने बिस्तर में जा घुसे।

" अब मैं अकेले कैसे सोऊंगी.. अंधेरे से मुझे बहुत डर लगता है... अंधेरे में छिपकलियाँ बिस्तर पर दौड़ने लगती हैं..!" शकुंतला देवी खुद ब खुद बड़बड़ाने लगी थीं। पहली बार उसके अंतर्मन को पति की बातों ने झकझोर दिया था-" यहाँ खुद का जीवन एक धारावाहिक बन चुका है.....!"

सुबह शरद बाबू को जल्द उठने की आदत थी। आज देर तक सोते रहे। उधर कई सालों बाद शकुंतला देवी ने आज रसोई में कदम रखा था। गैस जला कर पहले उसने चाय बनायी फिर एक में दाल और दूसरे चूल्हे पर भात चढ़ा दी। पहले यह काम भी शरद बाबू के जिम्मे था।

दो कप चाय लेकर वह अंदर कमरे में गई और जीवन में पहली बार आवाज दी-" उठो, चाय पी लो..देर रात तक जागे हो, ..मूडफ्रेश हो जायेगा...!"

शरद बाबू के कानों को विश्वास नहीं हो पा रहा था !

यह भोर का सपना था या हकीकत!

❖

पोस्ट-तुरीयो, बोकारो, झारखंड, पिनकोड-829132
फोन नं 6204131994
ईमेल आईडी- shyamalwriter@gmail.com

गुरु जाम्भोजी : तत्त्व–चिंतन और उच्च जीवनादर्श का आग्रह

डॉ. आनंद पाटिल

यद्यपि आचार्य शुक्ल ने यह कथन कबीर (1398–1518) और नानक (1469–1539) के आविर्भाव की चर्चा करते हुए किया है किन्तु तत्त्व–चिंतन की समानता को यदि एक क्षण के लिए ध्यान में न भी लिया जाए तो जन्म और जीवनावधि की दृष्टि से विचार करने से ज्ञात होता है कि गुरु जाम्भोजी (1451–1536) कबीर और नानक के समकालीन हुए हैं। अतः जो कथन कबीर–नानक पर लागू होता है, वही जाम्भोजी पर भी यथावत लागू होता है। किन्तु साहित्येतिहास ग्रंथकारों ने जाम्भोजी के रचना और कर्म का संज्ञान नहीं लिया। बहरहाल, स्मरणीय है कि कबीर निर्गुण भक्ति के संवाहक थे तो नानक (कबीर से मिलने से पूर्व) की प्रवृत्ति एक भक्त की थी और जाम्भोजी सगुणोन्मुख निर्गुण भक्ति के संवर्धक थे।

आज इस भारत देश में दो भिन्न–भिन्न 'देश' बसते हैं। 'भारत' और 'इंडिया' अथवा 'भारत बनाम इंडिया' नहीं! एक वह, जो इस देश की प्राचीन समृद्ध धरोहर को लेकर पल्लवित होना तो चाहता है परंतु अन्य–अन्य (के के अवर1 अर्थात् कई कई और) व्यवधानों से जूझ रहा है और दूसरा वह, जो अपनी धरोहर से बहुत दूर निकल गया और भटक कर दिशाहीन हो गया है। 'परदेशीय' सैद्धांतिक चकाचौंध से उसका मन–मस्तिष्क इस क़दर चौंधियाया हुआ है कि उसे अपनी ज्ञान–परंपरा और सांस्कृतिक धरोहर पर एकदम विश्वास नहीं। वह अपनी साहित्यिक–सांस्कृतिक धरोहर पर संदेह करता है और अपनी ज्ञान–परंपरा का अध्ययन–अनुशीलन किए बिना ही उससे सदैव पलायन करने की जुगत में जुटा रहता है। उसे लगता है कि जो कुछ था, वह बहुत बुरा था; अतः अनुपयोज्य था और जो कुछ उसके माध्यम से घटित होगा, वह अनिष्ट, अहितकर एवं अपकारी ही होगा। यह भारत की वर्तमान स्थिति है। ऐसा क्यों हुआ इसके अनेकानेक उदाहरण तथा तत्संबंधी प्रमाण हैं। उन उदाहरणों और प्रमाणों की चर्चा इस संदर्भ और प्रसंग में सांयोगिक नहीं। वास्तव में जिन लोगों को ग़ुलामी में आनंदित रहने की आदत हो जाती है, वे प्रायः अपनी स्वतंत्रता के संबंध में न मनन–चिंतन करते हैं, न चिंतित ही होते हैं। अतः एक प्रश्न बारंबार मन–मस्तिष्क में आता है कि ऐसी ग़ुलामी मानसिकता वाले लोग–बाग अपनी धरोहर के संबंध में भला क्या (कुछ!) सोचेंगे? इस मामले में बिश्नोई समाज (संप्रदाय) ने इस नवऔपनिवेशिक समय में गुरु जाम्भोजी एवं उनके तत्त्व–चिंतन पर पुनः मनन–चिंतन करने का जो उपक्रम आरंभ किया है, वह सैद्धांतिक भटकाव और मुठभेड़ वाले इस समय में वांछित भी है और अत्यंत अनिवार्य भी! यह प्रयास अपनी धरोहर की ओर लौटने का यथेष्ट उपक्रम भी है और परदेशीय चिंतन से पल्ला छुड़ाने और अपने विचारों को आगे बढ़ाते हुए वैचारिक दृष्टि से स्वतंत्र और सुदृढ़ होने की अदम्य चाह का अप्रतीम उदाहरण भी।

इस प्रसंग में यह बताने में हमें नहीं हिचकना चाहिए कि हम भारतीयता की भर–भर कर (मन भर!) बातें तो करते हैं, परंतु भारत के विचार–चिंतन–दर्शन वैविध्य की बहुत कम जानकारी रखते हैं। इससे उत्पन्न ज्ञानांधकार की खाई को उत्तरोत्तर बढ़ाने के कार्य को अभी विराम नहीं मिला है। हम भारत और उसके इतिहास की बात तो करते हैं (कुछ लोग भारत का कोई इतिहास नहीं है भी कहते हैं) किन्तु इतिहास–पुरुषों (legend) की चर्चा तथा उनके तत्त्वज्ञान (philosophy) का संग्रह नहीं करते और उसे अगली पीढ़ी तक पहुँचाने का उपक्रम भी नहीं करते। स्वतंत्रता के बाद से लेकर वर्तमान तक सारी सरकारें इस संबंध में चूक गई हैं अथवा हमारी ज्ञान–परंपरा को सुविधाजनक दृष्टि से विस्मृत कर दिया गया है। एक दिन अचानक गुरु जाम्भोजी के संबंध में चर्चा आरंभ हुई किंतु उनके योगदान के संबंध में मेरे उस समय तक के अध्ययन के दौरान कोई ठोस बात प्रस्तुत नहीं हुई थी। केवल नाम सुना हुआ था और कभी उस संबंध में अन्वेषण करने (explore) की आवश्यकता का अनुभव ही नहीं हुआ था। जब मैंने गुरुजी के संबंध में अध्ययन आरंभ किया, तब जाना कि उनका तत्त्व–चिंतन बिश्नोइयों के लिए निर्धारित किए गए केवल 29 नियमों तक सीमित नहीं है बल्कि उनके तत्त्व–चिंतन के कई आयाम हैं। मेरे लिए गुरुजी एकदम उस 'पहाड़' की तरह थे, जो दूर से छोटा किंतु निकट पहुँचते–पहुँचते विशाल और विराट हो जाता है। जाम्भोजी का तत्त्व–चिंतन किसी भी अध्येता के लिए किसी विराट पहाड़ को देखने की तरह ही है, जो

एक ओर से देखने पर दूसरी तथा अन्य खंड–परिधि और ऊपर (aerial), भीतर–अंतःस्थल (inland) से छूट जाता है ; अछूता रह जाता है। वह हर कोण से अलग दिखाई भी देता है और निस्संदेह अलग होता भी है।

अतः गुरुजी के संबंध में मेरे अध्ययन का मूल्यांकन 'पहाड़ को देखा मैंने' अथवा 'पहाड़ देखा मैंने' के रूप में ही करने का हिमायती हूँ। बहुत कुछ है, जो अभी भी खोजने–सोचने के लिए शेष है। जब सामग्री मिलती गई तो गुरुजी के अनेक नाम भी सामने आए ; यथा – जम्भनाथ, जम्भे, जम्भै, जम्भेश्वर, जम्भेस्वराय, जम्भेस्वर, जम्भेस, जाम्भा, जाम्भूजी, जाम्भोजी, जाम्भैजी, जांभराज, जाम्भेश्वर, जाम्भोविसन, भांभ, भभै, भांभैसर, भांभा, भांभाजी, झांभराज इत्यादि। परंतु यह जानकर आश्चर्य और दुःख हुआ कि हिन्दी साहित्य के इतिहास में गुरुजी के नाम और काम की कोई चर्चा दिखाई नहीं दी जो कि गुरुजी के जीवन एवं दर्शन को पढ़ने–समझने के उपरांत यथोचित नहीं लगता। इतिहास लेखकों ने भक्तिकाल की बात करते हुए गुरुजी तथा उनके काम (रचनालोक और सुधारवादी दृष्टिकोण) को बिसरा दिया। अतः हिन्दी साहित्य के पाठकों और अध्येताओं में जाम्भोजी के संबंध में एक खालीपन (vacuum) है। जाम्भोजी उनके समकालीन संत कबीर एवं नानक के तत्त्व–चिंतन में बहुत हद तक समानता है। इन सभी तत्त्व–चिंतकों की सामाजिक–राजनीतिक परिस्थितियाँ एकसमान ही थीं। अतः जाम्भोजी को एकाएक छोड़ देना वांछित नहीं लगता। अगले कुछ परिच्छेदों में जाम्भोजी और कबीर–नानक के तत्त्व–चिंतन की तुलना के साथ इस कथन की पुष्टि हो जाएगी। बहरहाल, गुरुजी का आविर्भाव (genesis–appearance) ऐसे समय में हुआ, जब "शास्त्रों के पठन–पाठन का क्रम मुसलमानों के प्रभाव से प्रायः उठ गया था, जिससे धर्म और उपासना के गूढ़ तत्त्व समझने की शक्ति नहीं रह गई थी। अतः जहाँ बहुत से लोग जबरदस्ती मुसलमान बनाए जाते थे वहाँ कुछ लोग शौक से भी मुसलमान बनते थे।"[2]

यद्यपि आचार्य शुक्ल ने यह कथन कबीर (1398–1518) और नानक (1469–1539) के आविर्भाव की चर्चा करते हुए किया है किन्तु तत्त्व–चिंतन की समानता को यदि एक क्षण के लिए ध्यान में न भी लिया जाए तो जन्म और जीवनावधि की दृष्टि से विचार करने से ज्ञात होता है कि गुरु जाम्भोजी (1451–1536) कबीर और नानक के समकालीन हुए हैं। अतः जो कथन कबीर–नानक पर लागू होता है, वही जाम्भोजी पर भी यथावत लागू होता है। किन्तु साहित्येतिहास ग्रंथकारों ने जाम्भोजी के रचना और कर्म का संज्ञान नहीं लिया। बहरहाल, स्मरणीय है कि कबीर निर्गुण भक्ति के संवाहक थे तो नानक (कबीर से मिलने से पूर्व) की प्रवृत्ति एक भक्त की थी और जाम्भोजी सगुणोन्मुख निर्गुण भक्ति के संवर्धक थे। कबीर 'कागज की लेखी' की अपेक्षया 'आँखिन देखी' में विश्वास करते थे और शास्त्र–ग्रंथों के ज्ञान को निस्सार मानते थे – 'पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोय'। जबकि शास्त्र–ग्रंथों में गुरु जाम्भोजी की अगाध आस्था थी "पद कागल वेदूं शास्त्र शब्दूं, पदसुन रहया कछु न लहिया। नुगरा उमग्या काठ परवानूं, कागल पौथा न कछु थोथा, न कछु गाया गीऊँ।"[3] किन्तु जाम्भोजी का तत्त्व–चिंतन में निर्गुण और सगुण का सहज समन्वय दृष्टिगोचर होता है। उनके चिंतन में संत नामदेव (सौम्य विरोध) और कबीर (प्रखर विरोध) की ही भाँति मूर्तिपूजा का विरोध–निषेध दिखाई देता है। भक्ति के रूप–वैविध्य और उपासना–पद्धतियों को कुछ क्षणों के लिए परे रख कर देखा–सोचा जाए तो ज्ञात होगा कि नामदेव–कबीर–नानक की ही तरह गुरु जाम्भोजी के तत्त्व–चिंतन में वही गहराई, भक्ति–वैविध्य और उपासना, गुरु महिमा, ज्ञानोपदेश, कर्मशीलता, आत्मालोचन और आत्मज्ञान तथा लोकमंगल के लिए सुधारवादी दृष्टि दिखाई देती है –

संत नामदेव कहते हैं –

"एकै पाथर कीजै पाऊ, दूजै पाथर धरिए पाऊ
जै इहु देऊ तऊ उहु भी देवा, कहि नामदेव हम हरि की सेवा।"[4]

संत कबीर कहते हैं –

"मुझको क्या तू ढूँढै बंदे मैं तो तेरे पास में"[5]

"पाथर पूजै हरि मिलै तो मैं पूजूँ पहाड़"

"संतो धोखा कासूं कहिये।
गुण मैं निरगुण निरगुण मैं गुण है,
वाट छाड़ि क्यूं बहिये।।"[6]

"आपुहि देवा आपुहि पाती। आपुहि कुल आपुहि जाती।"[7]

गुरु जाम्भोजी कहते हैं –

"जंपों तो एक निरालंभशंभू, जिहिं के मांय न पीऊँ।"[8]

"मोरे छाया न माया लोही न मासूं, रक्तूं न धातूं। मोरे माई न बापूं।
आपन आपं, रोही न रापूं, कोपूं न कलापूं।
दुख न सरापूं, लोई अलोई त्यूह तृलोई।
ऐसा न कोई जंपा भी सोई जिहिं जपै आवागवण न होई।"[9]

"पाहन प्रीत फिटाकर प्राणी"[10]

"नवखण्ड पृथ्वी परगटियो, कोई बिरला जाने म्हारी आदिमूल का भेवों।"[11]

"मोरे धरती ध्यान वणासपति वासो, ओजू मंडल छायो।"[12]

"विष्णु विष्णु तू भण रे प्राणी, विष्णु भणंता अनन्त गुणूं, सहसे नावे सहसे ठावे, सहसे गावें।

गाजै बाजै हीरे नीरे, गगन गहीरे चवदा बवने, तिहूं तृलोके जम्बू दीपे सप्त पताले।"[13]

कबीर और जाम्भोजी के उपरोक्त कथनों में भगवान के रूप और उसकी स्वीकार्यता, सार्वत्रिकता, सर्वव्यापकता, सार्वकालिकता का सहज ही दर्शन होता है। दोनों उस विराट किन्तु अदृश्य सत्ता की चर–चर में उपस्थिति और क्रियाशीलता को देखते–रेखांकित करते हैं और 'हरि को भजै सो हरि का होई' (कबीर), 'सो सारंगधर जप रे प्राणी जिंही जपे हुए धर्म इसो'[14] (जाम्भोजी) की गुरुता स्वीकारते हुए उसी में जीवन का रस–सार–सत्त्व–तत्त्व और गंभीरता देखते हैं। संत कबीर कहीं मराठी संत ज्ञानदेव की तरह "भगवान क्या एक ही जगह है ; वे तो सर्वत्र है, सर्वव्यापक है"[15] की धारा के अनुयायी होते हैं और

'कठोपनिषद' के "वह (ब्रह्म) शब्द रहित, स्पर्श रहित, रूप रहित, रस रहित, गंध रहित है"[16] मानते हैं तो कहीं जाम्भोजी के सर्ववाद के अनुकूल "आपुहि देवा आपुहि पाती। आपुहि कुल आपुहि जाती"[17] के मंतव्य के साथ सर्ववाद में आश्वस्त दिखाई देते हैं। आचार्य शुक्ल ने इस संबंध में उचित ही कहा है – "यद्यपि कबीर की बानी 'निर्गुण बानी' कहलाती है पर उपासनाक्षेत्र में ब्रह्म निर्गुण नहीं बना रह सकता। सेव्य–सेवक भाव में स्वामी में कृपा, क्षमा, औदार्य्य आदि गुणों का आरोप हो ही जाता है।"[18] यह जाना–माना गया कि "जो व्यक्ति भक्तिहीन है, उसको राम नहीं मिल सकते। उसका जन्म और संसार में आना वृथा है।"[19]

जब ईश्वर तक पहुँचने का मामला प्रस्तुत होता है, 'बिनु गुरु होई न ज्ञान'[20] के साथ गुरु की महत्ता का बखान होता है। भक्तिकाल में गुरु की महिमा का लगभग सभी कवियों ने गुणगान किया है। सबने माना कि बिना गुरु के ज्ञान की सिद्धि नहीं हो सकती। जाम्भोजी द्वारा प्रस्तुत गुरु महिमा को इस प्रकार देखा जा सकता है –

"सद्गुरु मिलियो सतपंथ बतायौ, भ्रान्ति चुकाई, मरणे बहु उपकार करै।"[21]

बिना गुरु के भ्रान्तियों से मुक्ति नहीं मिलती। गुरु से ही सत् पंथ की प्राप्ति होती है। ध्यातव्य है कि संत–भक्तों ने बारंबार गुरु और सत्संग की बात की है। गुरु ही सत्पथ से साक्षात्कार कराता है और उद्धार करता है। गुरु जाम्भोजी ने गुरु के संबंध में कहा है –

"सत्गुरु ऐसा तत्त्व बतावै, जुग जुग जीवै बहुरि न आवै।"[22]

"गुरु न चीन्हों पंथ न पायो, अहल गई जमवारू।"[23]

"उत्तम संग सूं संगू, उत्तम रंग सूं रंगू। उत्तम लंग सूं लंगू, उत्तम ढंग सूं ढंगूं।
उत्तम जंग सूं जंगूं, तातै सहज सुलीलूं, सहज सुपंथू। मरतक मोक्ष द्वारू।"[24]

नामदेव ने गुरु के संबंध में कहा है –

"सुफल जन्म मोको गुरु कीना। दुख बिसार मुख अंतर दीना।
ज्ञान दान मोको गुरु दीना। राम नाम बिन जीवन हीना।।"[25]

गुरु नानक देव ने गुरु के संबंध में कहा है –

"गुरु किरपा जेहि नर पै किन्हीं, तिन्ह यह जुगुति पिछानी।
नानक लीन भयो गोबिंद सों, ज्यों पानी सँग पानी।।"[26]

संत कबीर ने गुरु के संबंध में कहा है –

"ग्यान प्रकास्या गुरु मिल्या, सो जिनि बोसरि जाइ।
जब गोबिंद कृपा करी, तब गुरु मिलिया आइ।।"[27]

"सतगुरु की महिमा अनँत, अनँत किया उपगार।
लोचन अनँत उघाड़िया, अनँत दिखावणहार।।"[28]

जाम्भोजी ने सबको सचेत करते हुए कहा है – "हे लोगों! गुरु को पहचानो! हे पुरोहित! गुरु को पहचानो! मैं अपने मुख से गुरु के स्वरूप का वर्णन करता हूँ। सहज, शील, नाद और बिन्दु (की साधना) गुरु के आभूषण जानने चाहिए (दूसरे शब्दों में, जो चित्तशुद्धि से सहज जीवन–पद्धति अपनाता है, जिसकी कथनी और करनी में पूर्ण सामंजस्य है और जो जितेन्द्रिय है तथा जो ब्रह्म और आत्मा को जानता है, वह गुरु है)।"[29]

जाम्भोजी इस संबंध में इस बात के हिमायती रहे हैं कि गुरु आडंबर रहित होते हैं, वह सहज और तत्त्वस्वरूप होते हैं। इस संदर्भ में राजस्थान की 'कछुआ–कछुवी की लोककथा' स्मरणीय है – "भारत में आज भी गुरु से दीक्षा लेने की परंपरा अस्तित्व में है। राजस्थानी लोककथा में कछुए का गुरु है (भगवान श्री कृष्ण) किन्तु कछुवी का नहीं है। अतः कछुआ उसे नुगरी (बदमाश) कहता है और उससे दूर रहने को कहता है। इस उपालंभी लांछन युक्ति से तंग आकर एक दिन कछुवी कहती है कि मुझे भी कोई गुरु बता दो और उससे नाम दिलवा (दीक्षा) दो। कछुवी का कहा मान कछुआ30 एक दिन साधु के वेश में आए कालबेलिया को गुरु समझ कर कछुवी को उससे दीक्षा लेने को कहता है। दोनों साधु के वेश में आए उस पाखंडी कालबेलिए से भ्रमित होकर उसका शिकार बन जाते हैं। वह बहरूपिया दोनों को अपनी झोपड़ी में ले जाकर हांडी में उबालने के लिए डाल देता है। तब कछुवी कछुए को कोसती है। कछुआ श्रीकृष्ण को स्मरण कर संकट से बचाने की गुहार लगाता है और अचानक तुफ़ान आता है और कालबेलिए की झोपड़ी उड़ जाती है। भारी वर्षा होती है और चुल्हे में लगी आग बुझ जाती है। हांडी बहकर टूट जाती है और इस तरह दोनों के प्राण बच जाते हैं।"[31] जाम्भोजी ऐसी ठगी से बचने के लिए कहते और सचेत करते हैं। वे कहते हैं – "शरीर ही कंथा है, जिसका मन ही मुद्रा है तथा जिसने अपनी देह के ही भीतर योगाग्नि प्रज्वलित कर ली है, वह वास्तविक जोगी है।"[32] हमें वेशभूषा नहीं बल्कि ज्ञान देखना चाहिए –

"खोज प्राणी ऐसा बिवाणी, केवल ज्ञानी। ज्ञान गहीरूं।
जिहीं के गुणे न लाभत छेहूं। गुरु गेवर गरबा शीतल नीरूं।
मेवा ही अति मेऊं।"[33]

"सत सत भाषत गुरु रायों, जरा मरण भय भाजूं।"[34]

जाम्भोजी सचेत भी करते हैं कि यदि हमारे कर्म अच्छे न हो तो भगवान को दोष देने में औचित्य नहीं।

"विष्णु को दोष किसो रे प्राणी आप ही खता कमानी।"[35]

रामचंद्र शुक्ल के उक्त उल्लिखित कथन "शास्त्रों के पठन–पाठन का क्रम मुसलमानों के प्रभाव से प्रायः उठ गया था, जिससे धर्म और उपासना के गूढ़ तत्त्व समझने की शक्ति नहीं रह गई थी। अतः जहाँ बहुत से लोग जबरदस्ती मुसलमान बनाए जाते थे वहाँ कुछ लोग शौक से भी मुसलमान बनते थे।"[36] के आलोक में जाम्भोजी के चिंतन को देखा–परखा जाए तो पता चलता है कि वे नामदेव, कबीर, नानक की ही तरह मध्यम मार्गी (समन्वयवादी/ secular) हैं। उन्होंने जीवनादर्शों से विचलित होने पर चेतावनी देते हुए कहा है – "इस कलियुग में तत्त्वज्ञान न हो पाने के कारण सभी भ्रम में पड़े दीखते हैं। ब्राह्मण वेदों को, काजी क़ुरान को और जोगी जोग को भुला बैठे हैं तथा मुण्डियों में तो अक़्ल ही नहीं रह गई है।"[37] वे कहते हैं – "मैं किसी का नहीं हूँ ; केवल सच्चे पुरुषों का हूँ। मैं तो सच्चे हिन्दू का देव और सच्चे मुसलमान का पीर हूँ।"[38] संत कबीर की ऐसी अनेकानेक उक्तियाँ प्राप्त हैं।

गुरुजी ने वेद, पुराण, शास्त्र, कुरानों के अध्ययन और चिंतन के महत्व को समझाया। निश्चय ही अध्ययनशीलता से चिंतन के नए आयाम खुलते हैं। परंतु मनन–मंथन न होने की स्थिति में ज्ञानार्जन, तत्त्व-ग्रहण और विस्तार संभव नहीं। जाम्भोजी कहते भी हैं – "कागळ पोथा नां कुछि थोथा, नां कुछि गा'या गीयों।"[39]

हीरालाल माहेश्वरी ने एक और तथ्य को रेखांकित किया है कि जाम्भोजी के इस दर्शन से जनसाधारण के साथ–साथ कई शासक प्रभावित थे। वील्होजी के एक छन्द का उल्लेख करते हुए जाम्भोजी से प्रभावित 6 शासकों के नाम गिनाए हैं – सिकंदर लोदी, मुहम्मद खाँ नागौरी, मेड़ता के राव दूदा, जैसलमेर के रावल जैतसी, जोधपुर के राठौड़ राव सांतल और मेवाड़ के राणा सांगा।[40] यह भी रेखांकित है कि गुरुजी के जीव–दया की बात से प्रभावित होकर तत्कालीन मुसलमान शासकों ने गौहत्या पर प्रतिबंध लगाया था।[41]

गुरु जाम्भोजी के तत्त्व–चिंतन में ब्रह्म और ब्रह्माण्ड के अनेकानेक विलक्षण तत्त्व उजागर होते हैं और 'सर्ववाद' (सार्वत्रिक उपस्थिति) व्यापक रूप से व्याख्यायित हुआ है। वे उच्च जीवनादर्शों के लिए हिंदू और मुसलमानों को प्रभावित करते हैं। इस्लाम की कट्टरता[42] के बावजूद जाम्भोजी ने तत्कालीन समय में सौहार्द और समरसता को बनाए रखने में सफलता पायी। जाम्भोजी ऐसे माहौल में भी "ॐ आदिशब्द अनाहद वाणी, चौदह भवन रहयो छल पाणी। इहं पानी से झण्ड उपन्ना, उपन्ना ब्रह्मा इन्द्र मुरारी।"[43] का तत्त्व–चिंतन प्रस्तुत करते हुए संसार की उत्पत्ति का स्रोत बताते हैं और "करि माला मुख जाप करि सोहिमोटियो कुथानं। पहलि कलछा परठियो सहय ब्रह्माण सिनान।"[44] के ज्ञानोपदेश के साथ बिश्नोई संप्रदाय (पंथ) का प्रवर्तन करते हैं। इतने वर्षों के बाद पुनः बिश्नोई पंथ गुरु जाम्भोजी के ज्ञानोपदेशों से पुनः जाग्रत हो उठा है और उनके रचनाकर्म से हिन्दी को संवर्धित करने का उपक्रम कर रहा है। इस उपक्रम के माध्यम से निश्चय ही गुरु जाम्भोजी का तत्त्व–चिंतन हिन्दी साहित्य के इतिहास में अपना स्थान प्राप्त कर सकेगा। यह हिन्दी साहित्य के इतिहास के पुनर्लेखन को प्रभावित करेगा।

संदर्भ

1 हीरालाल माहेश्वरी, जाम्भोजी, साहित्य अकादेमी 1981, पृ. 12
2 आचार्य रामचंद्र शुक्ल, हिंदी–साहित्य का इतिहास, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी 1942, पृ. 84
3 सं. छेगाराम सारण, जाम्भाणी सार संकलन, पृ. 31
4 विनयमोहन शर्मा, हिन्दी को मराठी संतों की देन, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना 1957, पृ. 113
5 वही, पृ. 79
6 कबीर ग्रन्थावली सटीक, पृ. 6
7 आचार्य रामचंद्र शुक्ल, वही, पृ. 77
8 सं. छेगाराम सारण, वही, पृ. 33
9 वही, पृ. 39
10 वही, पृ. 35
11 वही, पृ. 40
12 वही, पृ. 40
13 वही, पृ. 41
14 वही, पृ. 19
15 आचार्य रामचंद्र शुक्ल, वही, पृ. 67
16 कबीर ग्रन्थावली सटीक, पृ. 5 पर उद्धृत
17 आचार्य रामचंद्र शुक्ल, वही, पृ. 77
18 वही, पृ. 77
19 हीरालाल माहेश्वरी, वही, पृ. 25
20 आचार्य रामचंद्र शुक्ल, वही, पृ. 67
21 सं. छेगाराम सारण, वही, पृ. 36
22 वही, पृ. 36
23 वही, पृ. 36
24 वही, पृ. 38
25 आचार्य रामचंद्र शुक्ल, वही, पृ. 68
26 वही, पृ. 85
27 श्यामसुंदरदास, कबीर-ग्रंथावली, इंडियन प्रेस लिमिटेड, प्रयाग 1928, पृ. 2
28 वही, पृ. 1
29 हीरालाल माहेश्वरी, वही, पृ. 25
30 इस कथा में पाठभेद भी मिलता है। कहीं–कहीं कछुवी स्वयं ही बहरूपिए से प्रभावित होती है और उसे गुरु–स्वरूप मान उससे नाम लेने पहुँच जाती है। नाम लेना अर्थात् दीक्षा लेना।
31 राजस्थानी लोककथा
32 हीरालाल माहेश्वरी, वही, पृ. 35
33 सं. छेगाराम सारण, वही, पृ. 37
34 वही, पृ. 29
35 वही, पृ. 18
36 आचार्य रामचंद्र शुक्ल, वही, पृ. 84
37 हीरालाल माहेश्वरी, वही, पृ. 33
38 वही, पृ. 13
39 वही, पृ. 26
40 विस्तार के लिए देखिए, वही, पृ. 12
41 विस्तार के लिए देखिए, वही, पृ. 34
42 विस्तार के लिए देखिए. सं. छेगाराम सारण, वही, पृ. 10-11
43 वही, पृ. 63
44 वही, पृ. 7

❖

हिन्दी विभाग, तमिलनाडु केन्द्रीय विश्वविद्यालय, नीलक्कुड़ी
तिरुवारूर-610005
ईमेल : anandpatil.cutn@gmail.com मोबाइल : 9486037432

समकालीन संदर्भ में गुरु जाम्भोजी का पर्यावरण बोध

डॉ. सीमा रानी

गुरू जी अहिंसा के प्रबल समर्थक थे। इसीलिए उन्होंने जीव हत्या न करने के लिए सबसे अधिक बल दिया था। हरे वृक्षों को काटना एक तरह से जीव हत्या करना है। वृक्ष के बिना हमारे जीवन की कल्पना ही नहीं की जा सकती है। वर्षा को बुलाने वाले ये वृक्ष ही तो हैं। अगर हम निर्दयतापूर्वक वृक्षों की कटाई करते रहेंगे तो एक तरफ जहाँ मरूस्थल बढ़ता जायेगा, वहीं दूसरी तरफ प्राकृतिक विपदा बाढ़, अकाल इत्यादि की रोकथाम भी सम्भव नहीं हो पाएगी। इससे भूमि का उपजाऊ भाग कटाव स्वरूप बह जायेगा। वृक्ष और मनुष्य का तो अब चोली-दोमन का सम्बन्ध हो गया है। आज हरेक प्रदेश में सरकार वृक्षों को लगाने के महत्त्व पर बल देती है।

पर्यावरण शब्द परि-आवरण इन दो शब्दों से बना है। परि का अर्थ है चारों तरफ और आवरण का अर्थ है संरक्षण कवच। पर्यावरण हमारा संरक्षक कवच है। इसे शुद्ध रखने से सभी सजीवों का संरक्षण होगा। जैसे त्वचा, शरीर का संरक्षण कवच है। वैसे ही सृष्टि के सभी घटक जैसे जल, जंगल, जमीन, जानवर सभी सजीवों को संरक्षण प्रदान करते हैं। त्वचा बिना हम जीवित रहने की कल्पना भी नहीं कर सकते। वैसे ही इनके बिना हमारा जीवन संभव नहीं है भारत में जहाँ घर-घर गोमाता थीं दूध-दही की नदियाँ बहती थीं, डाल-डाल पर सोने की चिड़ियाँ बसेरा करती थीं। और आज अंधाधुंध औद्योगिकीकरण, आधुनिकीकरण, जनसंख्या वृद्धि, उपभोग की वृत्ति, जल, जंगल, जमीन, जानवर सबका विनाश हो रहा है। हवा में कार्बन डाईऑक्साइड का प्रभाव बढ़ रहा है। शहरों में साँस लेना मुश्किल हो गया है। मानव की रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो रही है। प्रकृति का प्रकोप बढ़ रहा है कहीं बाढ़, कहीं अकाल, कहीं अति ठंड, कहीं अति ऊष्ण। परिणामस्वरूप पर्यावरण प्रदूषण इस नश्वर वैज्ञानिक विश्व की एक जटिल समस्या है।

इस 21वीं सदी में पर्यावरण प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन, जीव/जैविक जगत से भिन्न-भिन्न वनस्पतियों और प्राणियों की प्रजातियों का विलुप्त होना आदि ऐसी समस्याएँ दिन प्रतिदिन भयानक होती जा रही हैं। अनेकों अन्तर्देशीय सम्मेलनों से निष्कर्ष निकलता है कि इसका मुख्य कारण वनों का काटना, जीव हत्या और व्यवसायों एवं आवागमन का अत्यधिक यंत्रीकरण और इनके ऊपर आधुनिक जीवन की अत्यधिक निर्भरता ही पर्यावरण प्रदूषण का मुख्य कारण है।

आज जितनी सुविधा हमारे जीवन में बढ़ी है। उतना ही पर्यावरण प्रदूषण हमारी धरती माता झेल रही हैं। पर्यावरण प्रदूषण की समस्या समस्त संसार के सामने चिन्ता का विषय है और इस समस्या के समाधन के लिए सभी प्रयासरत हैं। इस समस्या ने मानवजीवन के अस्तित्व को ही खतरे में डाल दिया है। अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए इस समस्या पर काबू पाना आवश्यक है। इसी कारण विश्व के सभी देश इस समस्या पर विचार विमर्श कर रहे हैं और मुक्ति का रास्ता ढूंढ रहे हैं। पर्यावरण प्रदूषण की समस्या का समाधान वृक्षों के माध्यम से हो सकता है। आज न केवल भारत में अपितु विश्व के सभी देश बड़ी मात्रा में वृक्षारोपण कर रहे हैं। प्राचीन भारत में मानव का सर्वप्रथम ध्येय प्राकृतिक व्यवस्था के साथ तारतम्यता रखना था। टैगोर ने लिखा है- ''वन व प्राकृतिक जीवन को एक निश्चित दिशा देती है। प्राचीन काल से प्रकृति हमारे लिए पूजनीय रही है। लेकिन हम पेड़ों को निर्दयता से काट रहे हैं तथा प्रकृति का निजी स्वार्थ के लिए विध्वंस कर रहे हैं। जबकि हमारे देश के पौराणिक ग्रंथों में प्रकृति को देवी के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। हमारे वेद, पुराण उपनिषद, इस तथ्य के ज्वलंत प्रमाण हैं कि हमने सदैव प्रकृति देवी की पूजा की है। पीपल, नीम, तुलसी, बड़, खेजड़ी की पूजा आज भी कुछ जन समुदायों द्वारा की जाती है। जिसका धार्मिक एवं सांस्कृतिक ही नहीं अपितु वैज्ञानिक महत्त्व भी है।

हमारा जीवन पवित्र हो, मंगलमय हो, कल्याणमय हो, आनन्दमय हो, इसीलिए गुरु जम्भो जी ने पर्यावरण शुद्धता पर बल दिया। आज से 500 वर्ष पहले ही धर्मगुरु जम्भोजी ने हरे वृक्षों को काटना और जीव हत्या का पूर्ण रूप से निषेध किया था।

''रहो रे मूरखा मुग्ध गंवारा, करो मजूरी पेट भराई।

हे हे जायों जीवन धाई ''

उनकी आज्ञा को स्वीकार करके अहिंसापूर्वक, खेंजड़ी के हरे वृक्षों के लिए अपने प्राणों का बलिदान देने वाले जोधपुर क्षेत्र के 363 बच्चे, स्त्रियों और पुरुष बिश्नोई ही थे।

जिस समय भारत वर्ष में सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक रूप से चारों ओर अराजकता फैली हुई थी, धर्म के नाम पर आडम्बरों का बोलबाला था। व्यर्थ के आडम्बरों से जनता त्रस्त थी, उस विकट समय में गुरु जम्भोजी ने भादो वही अष्टमी विक्रम संवत् 1508 को मरू प्रदेश के नागौर परगने के पीपासर गांव में ग्रामपति ठाकुर लोहट जी पंवार के घर माता हांसा देवी की पवित्र कोख से अवतार लिया।

राजस्थान के मरूभूमि का नागौर, नागौरी बैलों के लिए पूरे देश में प्रसिद्ध है। नागौर से पच्चास किलोमीटर उत्तर में पीपासर नामक गांव है। इसी गांव में किसी समय रोलो जी पवार रहते थे। उनके दो पुत्र थे बड़े पुत्र लोहट जी थे छोटे पुत्र पूल्ही जी थे। कृषि एवं पशु पालन लौहट जी का मुख्य व्यवसाय था। वे गांव के सबसे धनवान व्यक्ति थे सज्जनता एवं धार्मिक प्रवृत्ति के कारण गाँव के लोग उनका सम्मान करते थे। सब कुछ होने के उपरान्त भी लोहाट जी सुखी नहीं थे क्योंकि उनके यहाँ कोई संतान नहीं थी। अपने मन में दुःखी होकर उन्होंने घने जंगल में जाकर तपस्या प्रारम्भ कर दी। उनकी तपस्या से प्रभावित होकर भगवान ने उन्हें दर्शन दिए उसी समय भगवान ने लोहाट जी को पुत्र होने का आशीर्वाद दिया और कहा कि वह स्वयं उनके घर पुत्र रूप में अवतरित होंगे। पीपासर में सम्वत् 1508 की भादोवदी अष्टमी सोमवार को लोहाट जी के घर गुरू जाम्मो जी का अवतार हुआ।

गुरू जाम्भोंजी ने सात वर्ष बाल लीला में बिताए। 27 वर्ष तक पशु चराए और चैंतीस वर्ष की अवस्था में बिश्नोई की नींव रखी। गुरू जी सामान्य मनुष्य नहीं थे वे तो साक्षात् ईश्वर थे। इसलिए गुरू जाम्मो जी ने जन्म से ही अपनी आलौकिक शक्ति का परिचय देना प्रारम्भ कर दिया था। वह अपने माता पिता के इकलौते पुत्र थे। गुरू जी का खेलना-कूदना इत्यादि सामान्य बालक की तरह नहीं था। वे बहुत कम बोलते थे अपने में लीन रहते थे। गुरू जी ने कभी किसी पाठशाला में शिक्षा ग्रहण नहीं की उनके माता पिता ने उन्हें पढ़ाने का प्रयास किया था। किन्तु उनके दिव्य ज्ञान केा देखकर कोई भी गुरू उनको पढ़ाने का साहस न कर सका।

गुरु जम्भोजी का व्यक्तित्व एवं कृतित्व अत्यन्त विलक्षण एवं प्रभावशाली है। उनके समय में समाज की स्थिति अत्यन्त शोचनीय थी। समाज जीवन के सही मार्ग से भटक गया था। लोग नशीले पदार्थों का प्रयोग करते थे एवं मांस खाते थे। धर्म का रूप विकृत हो गया था और समाज के सामने उच्च आदर्श का अभाव था लोग भौतिक सुख के लिए बेचैन थे उसे पाने के लिए अनैतिक प्रयास कर रहे थे। गुरु जम्भोजी ने भटके हुए लोगों को जीवन का सच्चा मार्ग दिखाया और उन्हें भौतिक जीवन को सुखपूर्वक जीने एवं मृत्यु के बाद मोक्ष प्राप्ति का सरल मार्ग बताया था।

गुरू जी ने जन कल्याण के उद्देश्य से बिश्नोई पंथ की स्थापना की संवत् 1542 में कार्तिक वादि अष्टमी को सम्मराथल धोरे पर कलश की स्थापना करके 29 नियमों की आचार संहिता द्वारा बिश्नोई पंथ का प्रवर्तन किया। बिना भेद-भाव के सभी जाति के लोगों को इस सम्प्रदाय में शामिल किया। गुरूजी प्राणि मात्र का भला करना चाहते थे।

गुरू जम्मो जी द्वारा प्रतिपादित पर्यावरणीय मूल्य के कुछ नियम यहाँ प्रस्तुत हैं-

1.यज्ञ करना- प्रतिदिन प्रातः सांय यज्ञ करना भी आज के युग में उतना ही आवश्यक एवं प्रभावशाली है, यज्ञ में अग्निहोत्र को प्रमुख माना है। इसके करने से अद्भुत सुख-शान्ति की अनुभूति होती है, मन स्थिर होकर शक्ति को प्राप्त करता है गीता में भगवान श्री कृष्ण कहते हैं कि-

अन्नाद् भंवति भूतानि, पर्यन्यादन्न संभवः।

यज्ञाद भवति पर्जन्यों, यज्ञः कर्म समुद्भवः।

अर्थात्- अन्न से समस्त प्राणियों का पोषण होता है, वर्षा से अन्न उत्पन्न होता है, वर्षा यज्ञ से होती है, यज्ञ से ही समस्त कार्यों की उत्पत्ति होती है।

2.पाणी, वाणी ईन्धणी, दूध लीजै छाण- दूध पानी छानकर पीना, वाणी विचार बोलना, तथा स्वच्छ ईंधन का ही प्रयोग करना अति आवश्यक है। बिना छान कर पानी पीने से नाना प्रकार की बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। दूध का भी छानकर प्रयोग करना चाहिए।

चाणक्य नीतिः-दृष्टि पूतम् न्यशेष पादम् वस्त्र पूतम जलम पीवेत।

सत्य पूतम् वदेत वाचम् मनः पूतम समाचरेत।

अर्थात् देखकर के आगे कदम रखना चाहिए, वस्त्र से छानकर पानी पीना चाहिए, वाणी हमेशा सत्य एवं शुद्ध सोच विचार कर बोलनी चाहिए, शुद्ध मन से सभी कार्य करने चाहिए।

3.क्षमा- दयावान व्यक्ति के हृदय में ही क्षमा का भाव होता है। चाहे व्यक्ति कितना ही धनवान क्यों न हो अगर उसके दिल में क्षमा का भाव लेश मात्र भी नहीं है तो वह कहीं पर भी सम्मान-सत्कार नहीं पा

सकेगा। वृक्षजन फलों से लद जाते हैं तो वे नम्रता स्वरूप अपने आप झुक जाते हैं। और सब कुछ दूसरों को अर्पण कर देते हैं-

केशवदास-आमफले नीचे निवे, अरण्डऊंचों जाय।

समुर-नुगर रे पारखे, कह केशव समझाय।

इस प्रकार क्षमा की भावना से विवाद को बढ़ने से रोका जा सकता है। गुरू महाराज जाम्मो जी ने सबद वाणी में कहा है कि "जहाँ-जहाँ दया न धर्म, वहा-वहा विक्रम कर्म"।

4.जीव दया पालणी, रूखलीला नहीं धावै- जीवों पर दया करना अर्थात् जिस तरह प्राणी को अपने प्राण प्रिय होते हैं उसी भाव को जान पशु, पक्षी, व निर्दोष जीवों की रक्षा करनी चाहिए। इसी बात को ध्यान में रखकर आज-कल सरकारें जीव हत्या पर पाबन्दी लगाती हैं। हिरण, नीलगाय, तीतर इत्यादि वन्य जीवों के शिकार की मनाही, इसी नियम की सार्थकता को व्यक्त करती है। सरकार ने इस भावना को मध्य नज़र रखते हुए मोर जैसे सुन्दर पक्षी को राष्ट्रीय पक्षी घोषित किया है, जो इस बात का द्योतक है कि हमें वन तथा वन्य जीवों की रक्षा करनी चाहिए। जो बात गुरू जाम्मो जी ने कही थी, वह आज भी उतनी ही सार्थक है।

"सिर सांटे रूंख रहे, तो भी सस्तोजाण"

गुरू जी अहिंसा के प्रबल समर्थक थे। इसीलिए उन्होंने जीव हत्या न करने के लिए सबसे अधिक बल दिया था। हरे वृक्षों को काटना एक तरह से जीव हत्या करना है। वृक्ष के बिना हमारे जीवन की कल्पना ही नहीं की जा सकती है। वर्षा को बुलाने वाले ये वृक्ष ही तो हैं। अगर हम निर्दयतापूर्वक वृक्षों की कटाई करते रहेंगे तो एक तरफ जहाँ मरूस्थल बढ़ता जायेगा, वहीं दूसरी तरफ प्राकृतिक विपदा बाढ़, अकाल इत्यादि की रोकथाम भी सम्भव नहीं हो पाएगी। इससे भूमि का उपजाऊ भाग कटाव स्वरूप बह जायेगा। वृक्ष और मनुष्य का तो अब चोली-दोमन का सम्बन्ध हो गया है। आज हरेक प्रदेश में सरकार वृक्षों को लगाने के महत्त्व पर बल देती है।

मनुष्य प्रतिदिन 27000 श्वांस लेता है। जिसके लिए प्रतिदिन 15 किलो प्राणवायु लगती है। जिसको तैयार करने के लिए 7 पेड़ होने अनिवार्य हैं। वृक्षों की कटाई न करके पीछे जीवनाशक प्राणवायु की निर्मिति का विज्ञान छुपा है। प्रत्येक वनस्पति एक औषधि भी है। मनुष्य जन्म से मृत्यु तक वृक्षों पर निर्भर रहता है जीवन के सभी महत्त्वपूर्ण कार्य वृक्षों की सहायता से पूरे होते हैं। वृक्षों के बिना मानव का जीवन अधूरा है। यहाँ तक कि वृक्षों के बिना मनुष्य का जीवित रहना भी कठिन है। वृक्षों के इसी महत्त्व को देखकर गुरू जाम्भोंजी ने वृक्ष प्रेम की भावना पर बल दिया था। वृक्ष-प्रेम की भावना के प्रचार-प्रसार के उद्देश्य से उन्होंने भ्रमण करते समय स्थान-स्थान पर वृक्ष लगाए थे। वृक्षों की रक्षा के उद्देश्य से ही गुरू जम्भोजी ने सबदवाणी में वृक्ष काटने का विरोध किया है। "सिर सारे रूंख रहे तो भी सस्तो जाण" को बिश्नोई समाज ने अपने जीवन का आर्दश मान लिया था। इसी कारण वृक्षों की रक्षा के लिए प्राण- न्यौछावर करने की अनेक घटनाएँ इतिहास में देखी जा सकती है। बिश्नोई इतिहास के अतिरिक्त ऐसी एक भी घटना विश्व इतिहास में नहीं मिलती। वृक्षों की रक्षा हेतु प्राण न्यौछावर करने के प्रथम घटना जोधपुर के रामासड़ी गाँव की है। संवत् 1661 में श्रीमती करवा एवं श्रीमती गौरा बिश्नोई ने खेजड़ी की रक्षा हेतु रामासड़ी गाँव के चैराहे पर स्वेच्छा से अपने सिर सौंप दिये थे। उनके बलिदान को देखकर वृक्ष काटने वाले काँप उठे। इसी प्रकार तिलासणी गाँव की श्रीमती खीवणी खोखर, श्री मोटा जी खोखर ने वृक्षों की रक्षा के लिए अपने प्राण न्यौछावर कर दिए।

वृक्षों की रक्षा के लिए प्राण न्यौछावर करने की रोमांचकारी एवं विश्व प्रसिद्ध घटना 'खेजड़ली बलिदान' की है। यह घटना जोधपुर से 25 किमी. दूर खेजड़ली गाँव में घटित हुई थी। बिश्नोइयों के चैरासी गाँवों के 363 स्त्री पुरूषों ने वृक्षों से चिपक कर अपने प्राण न्यौछावर कर दिए थे। इस बलिदान की सूचना जब राजा के पास पहुँची तो उन्होंने इसी दिन वृक्षों की कटायी रूकवा दी। गुरू प्रदेश की तुलसी कही जाने वाली खेजड़ी, जो आज सुरक्षित है उसका श्रेय उन बिश्नोई शहीदों को है, जिन्होंने गुरू जाम्भोजी की शिक्षा से प्रेरित हो कर इसकी रक्षा के लिए हंसते-हंसते अपने प्राण न्यौछावर कर दिये थे। मरू प्रदेश के पर्यावरण संरक्षण में खेजड़ी का अत्याधिक योगदान है। पर्यावरण संरक्षण के जो भी उपाय गुरू जाम्भो जी ने बताए हैं वे पूर्ण वैज्ञानिक हैं। इन उपायों द्वारा आज भी पर्यावरण प्रदूषण की समस्या को हल किया जा सकता है। इसी आधार पर गुरू जी को पर्यावरण प्रेमी माना जाता है।

इस 21वीं सदी में पर्यावरण प्रदूषण, जलवायु, परिवर्तन, जीव/जैविक जगत से भिन्न-भिन्न वनस्पतियों और प्राणियों की प्रजातियों का विलुप्त होना आदि ऐसी समस्याएँ दिन प्रतिदिन भयानक होती जा रही हैं। बढ़ते औसत तापमान से हिमखण्ड भी पिघल रहे हैं। बढ़े हुए समुद्री तूफानों और बादल फटने जैसी वर्षा से अपार धन सम्पत्ति का नाश एवं जन हानि हो रही है।

आज से 500 वर्ष पहले ही धर्म गुरू जाम्भोजी ने हरे वृक्षों को काटना और जीव हत्या का पूर्ण रूप से निषेध किया था। यहाँ तक कि शिकारियों को भी जीव हत्या करने के लिए धिक्कारा था।

गुरू जम्मो जी ने कहा-

"हत्या करी परजीव की वन में अगन लगाय।

तीन जन्म दुःख देखकै, चैथे दोजक जाय।"

नवाई जलाने से अनगिनत जीव जन्तुओं की हत्या होती है। माँ-पिताजी कहने की परम्परा बच्चों में डालें। घर का वातावरण शुद्ध रखें। हमारे धर्म-त्योहारों गुरू महाराज ने सादगी से मनाने की परमपरा रखी है। शादी और अन्य त्योहार पर हम नशे-जुए की लत में लिप्त होते जा

रहे हैं। जबकि मद्यपान हमारे धर्म से कोसों दूर है।

"भांग तमाखू मदकूं, जो नर मूल रूखाय।

बिहा कहे हर दत कहे, निश्चैनरक पराय।।"

गुरू जाम्मो जी ने अपने जीवन में भंयकर अकाल देखे थे। बेघर मनुष्य, पशुधन की हानि इत्यादि देखकर गुरू जाम्भोंजी ने ऐसे उपाय किये थे जिससे मनुष्य को अकाल का सामना न करना पड़े। अकाल की समाप्ति हेतु उन्होंने एक और वृक्षारोपण पर बल दिया था और दूसरा हरे वृक्ष न काटने का नियम बनाया था।

प्रकृति के तीन प्रमुख घटक हैं- मनुष्य वनस्पति एवं मानवेत्तर प्राणी। इन तीनों में मनुष्य अपनी रक्षा करने में स्वयं सक्षम है और अन्य दोनों की रक्षा मानव की इच्छा शक्ति पर निर्भर है। मनुष्य का हित दोनों को सुरक्षित रखने में है। इन तीनों की सुरक्षा से प्रकृति के विभिन्न आयामों में संतुलन रह सकता है। गुरू जी ने अपने शिष्यों को पर्यावरण संरक्षण के लिए मूल मंत्र दिया था।

"जीव दया पालणी अर रूख लीलो नहीं धावै।''

अर्थात् जीवों पर दया करो तथा हरे वृक्ष मत काटो।

''होम हित चित प्रीत सूं होय''

अर्थात् नित्य प्रेमपूर्वक हवन करो।"

आज पूरे विश्व में पर्यावरण संरक्षण और संतुलन के लिए विचार शुरू हुआ है।योजनाएँ बनायी जा रही हैं। करोड़ों रूपये खर्च हो रहे हैं। फिर भी समस्या उग्रता की ओर बढ़ रही है। सारा संसार प्रदूषण से परेशान है। गुरूजी ने पहले ही इसकी चेतावनी दी थी इसे हम भूल गए।

जनसंख्या की वृद्धि जिस गति से हो रही है, उस गति से उत्पादन में वृद्धि नहीं हो पा रही है। निरंतर होने वाले वैज्ञानिक अनुसंधानों से अनेक ऐसे अविष्कार संभव हुए हैं जिनका दुरूपयोग प्रदूषण को बढ़ावा दे रहा है। यह रेडियो एक्टिवकण वायु के साथ-साथ दूर-दूर तक फैल जाते हैं और फिर धीरे-धीरे पृथ्वी की सतह पर लौटकर पृथ्वी के वायु, जल आदि को प्रदूषित करते हैं। अनियंत्रित औद्योगिक विकास पर्यावरण के प्रति हमारी लापरवाही का उदाहरण है।

1972 में स्टाक होम ने एक विश्व पर्यावरण सम्मेलन आयोजित किया और पर्यावरणीय संकट अर्थात् पर्यावरण प्रदूषण के खतरों पर विस्तार से चर्चा की गयी। वस्तुतः पर्यावरणीय संकट प्रदूषण से बचने के लिए सर्वप्रथम प्रदूषण के खतरों से जन-जन को अवगत कराना होगा और उनको जागरूक बनाना होगा ताकि प्रदूषण रोकने के लिए सचेष्ट हो जाएँ।

सर्वप्रथम वृक्षारोपण पर ध्यान केन्द्रित किया जाना चाहिए। वनों से न केवल इमारतें लकड़ी, गोंद कत्था तथा अन्य औषधियाँ प्राप्त होंगी बल्कि वायु को सुरक्षित रखने और ऑक्सीजन उत्पादन में पेड़-पौधों की बड़ी महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है, ध्वनि प्रदूषण को रोकने में पेड़-पौधे सहायक होते हैं।

चिपको आंदोलन के जनक चंडी प्रसाद भट्ट ने वन संरक्षण को जन आंदालन का रूप दिया। सुन्दरलाल बहुगुणा ने भी वन आंदोलन को जन आंदोलन बनाकर मानवता की सेवा में योगदान दिया है। ऐसे जन-आंदोलनों का प्रसार सारे भारत में होना चाहिए। शहरों में जल-मल को नदियों में न मिलाकर उसे किसी निचले स्थान में एकत्रित कर खाद उत्पादन के लिए उसका उपयोग किया जाना चाहिए। कल-कारखानों और खादानों के अवशिष्ट को नदियों अथवा समुद्र में बहाने की बजाय ज़मीन में गाड़कर रखने की व्यवस्था होनी चाहिए। परमाणु विस्फोटों पर रोक लगानी चाहिए। उनका भूमिगत विस्फोट किया जा सकता है। चिमनियों में जाली लगाना अनिवार्य कर देना चाहिए। ध्वनि विस्तार को भोंपुओं की यथाशक्ति से नियंत्रित किया जाना चाहिए। पर्यावरण की समस्याओं, उनके कारण एवं समाधान आदि के बारे में अधिकांश लोगों का ज्ञान अत्यंत सीमित है। यही कारण है कि हम अब तक पर्यावरण संबंधी विश्व दृष्टिकोण का विकास नहीं कर पाए हैं।

गुरू जाम्भोंजी के कहे मार्ग पर चलकर हम वैकल्पिक, सामाजिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक, राजकीय जीवन को पवित्र रख सकते हैं। आज सामाजिक पर्यावरण बिगड़ गया है। पूंजीवाद, कट्टरवाद इसी की देन है। भौतिक विकास के मॉडल ने जीवन बेकार बना दिया है। भौतिक विकास आध्यात्मिक विकास के साथ होना चाहिए। यह गुरू जी का संदेश है। यदि उनका कहना मानते तो आज संसार सुखी और समृद्ध होता । पर्यावरण संरक्षण के जो उपाय गुरू जाम्भोजी ने बताए हैं वे पूर्ण वैज्ञानिक हैं। इन उपायों द्वारा आज भी पर्यावरण प्रदूषण की समस्या को हल किया जा सकता है। इसी आधार पर गुरू जी को पर्यावरण प्रेमी माना जाता है।

संदर्भ ग्रन्थ-सूची

1. बिश्नोई पंथ और साहित्य- डॉ. बनवारी लाल सहू
2. गुरू जाम्भोजी का वैश्विक चिंतन-उदयराज खिलेरी
3. जम्भसागर ;सबदवाणी की हिन्दी टीका - कृष्णानन्द आचार्य
4. पर्यावरण संरक्षण के प्रेणता गुरू जाम्भोजी - डॉ. बनवारी लाल सहू
5. भगवद् रूप मीमांसा और गुरू जाम्भोजी - सं. डॉ. बनवारी लाल सहू, रोहतास कुमार, डॉ. आशा रानी बिश्नोई
6. हिन्दी भक्ति काव्यधारा और जांभाणी साहित्य-सं. डॉ. कृष्ण लाल बिश्नाई और डॉ. मांगीलाल बिश्नोई, सुरेन्द्र कुमार बिश्नाई
7. गुरू जाम्भोजी का जीवन दर्शन- सं. कृष्णलाल बिश्नोई

❖

एसोसिएट प्रोफेसर, दौलत राम कॉलेज

दिल्ली विश्वविद्यालय मो.न.- 9868409165

13 आराम गंज, रोशनारा रोड, पैलेस सिनेमा हॉल के पीछे रोशनारा रोड, दिल्ली-110007

आदिवासी समाज की संस्कृति

नवीन चन्द पटेल

आदिम समुदाय का एक अंग है, मुंडा जनजाति जिसकी खूबि_यों-खराबियों, परंपराओं और रीति-रिवाजों को लेकरआदिवा_सी कथाकार मंगल सिंह मुंडा ने 'छैला सन्दु' नामक उपन्यास लिखा है। अपने इस उपन्यास में वे आदिवासी संस्कृति का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि, ''वे क्यों न खुश हों ? खेत-खलि_हान के काम धन्धों से निवृत्त होते ही (इतने दिन की श्रम-सूद की अदायगी के ख्याल से मानो) आराम-तलब का दिन शुरू हो जाता है। अपने पूर्वजों,पितरों, देवी-देवताओं, सिंहबोंगा, बुरुबोंगा, इकिरबोंगा आदि सृष्टिकर्त्ता को नई फसल के अन्न, जल से खातिर की जाती है। घर-घर में सोमरस (हंडिया) चढ़ता है। मांस-मदिरा का दौर चलता है। लोग-बाग उन्हें खा-पीकर मस्त रात-रात भर अखाड़ा जमाते हैं।

आदिवासी समाज वह मानव समूह है, जो अपनी सांस्कृतिक विरासत को आज भी संभालकर एवं संजोकर रखा है। आदिवासी जीवन अपनी संस्कृति पर निर्भर है। जिस कारण से आज भी इनकी सांस्कृतिक विरासत इस आधुनिकता के दौर में भी जिंदा है। परंतु इस भूमंडलीकरण के दौर में कुछ आदिम जातियाँ विलुप्त हो गई हैं। उसका कारण वह अपनी सांस्कृतिक विरासत को बचा नहीं सके और वे जनजातियाँ भारतीय उपमहाद्वीप से विलुप्त हो गईं। इनकी संस्कृति इनकी पहचान है। आदिम युग से रामायण, महाभारत, वैदिक काल आदि युगों से इनकी संस्कृति चली आ रही है। जिन मूल्यों पर इनका जीवन बसता है वही इनकी संस्कृति है।

आदिवासी संस्कृति में 'आदिवासियत' है। आदिवासियत क्या है? इसको परिभाषित करते हुए आदिवासी कथाकार लेखिका वंदना टेटे जी लिखती हैं, 'आदिवासियत' यानी आदिवासियों के उस दर्शन से बनी है। जिसमें श्रम व सृष्टि आधारित सामूहिकता, सहअस्तित्व, सहभागिता जैसे जीवन मूल्य सर्वोपरि है।''[1] आदिवासी संस्कृति में 'जंगली' है या 'जंगलीपन' है। 'जंगली' शब्द को आदिवासी लेखकों एवं गैर आदिवासी लेखकों ने निम्न रूप में लिया है, गैर आदिवासी लेखकों ने 'जंगली' शब्द को सामान्यतः जंगल में रहने वाला के अर्थ में प्रयुक्त किया है। आज वर्तमान में 'जंगली' शब्द गाली के रूप में प्रयोग किया जाता है और 'जंगलीपन' असभ्यता के प्रतीक के लिए रूढ़ हो गया है। परंतु आदिवासी लेखकों ने 'जंगली' या 'जंगलीपन' को अपनी पहचान से जोड़ा है। जंगली या जंगलीपन को परिभाषित करते हुए आदिवासी लेखिका जोराम यालाम ने लिखा है, ''प्रकृति से जुड़ना उनके साथ स्वयं का अभिन्न अंग जानकर चलना। फूलों के साथ जो मुस्कुरा सके। नदी की बहती लहरों का गान सुन सके। हृदय के अंतरतम समुंद्र से जो सूक्ष्म पुकार आती है, उसे सुन सके। सूरज की स्वर्णिम किरणों-सा बिखर सके। एक हाथ तारों को छुए और दूसरा जमीन को। पथरीले शिखरों पर बिखरी चुटकी भर मिट्टी में भी उग-उग आना जिसकी कल्पना तक हम नहीं कर सकते। यह एक सतत यात्रा होती है। बिल्कुल नदी की तरह। नवीनतम चाल से चलने का साहस। भय का सामना करने का साहस। यही जंगलीपन है।'[2]

आदिवासी संस्कृति वह संस्कृति है, जिसमें जल, जंगल, जमीन, पहाड़, नदी, झरने आदि इनकी संस्कृति का वाहक हैं। इनके जीवन के सभी कार्य जन्म से लेकर मृत्यु तक इन्हीं प्राकृतिक सौंदर्य में समाहित हैं। जंगलों एवं गिरिकुहरों में रहने वाला यह मानव सांस्कृतिक रुप से बहुत ही समृद्ध है। क्योंकि जब वसंत का मौसम होता है तो आदिवासी

समुदाय अपने पूर्वजों तथा अपने देवताओं की पूजा करते हैं और सभी स्त्री-पुरुष, लड़के-लड़कियाँ एक साथ ढोल की थाप पर नृत्य करते हैं। रात-रात भर नाचते गाते हैं और मांस-मदिरा का भी सेवन करते हैं, आदिवासी कथाकार मंगल सिंह मुंडा ने अपने उपन्यास 'छैला सन्दु' और 'जंगल के फूल' उपन्यास में, राजेन्द्र अवस्थी ने आदिवासी संस्कृति को बड़े ही चित्रात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है।

आदिम समुदाय का एक अंग है, मुंडा जनजाति जिसकी खूबियों-खराबियों, परंपराओं और रीति-रिवाजों को लेकरआदिवासी कथाकार मंगल सिंह मुंडा ने 'छैला सन्दु' नामक उपन्यास लिखा है। अपने इस उपन्यास में वे आदिवासी संस्कृति का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि, ''वे क्यों न खुश हों ? खेत-खलिहान के काम धन्धों से निवृत्त होते ही (इतने दिन की श्रम-सूद की अदायगी के ख्याल से मानों) आराम-तलब का दिन शुरू हो जाता है। अपने पूर्वजों, पितरों, देवी-देवताओं, सिंहबोंगा, बुरुबोंगा, इकिरबोंगा आदि सृष्टिकर्ता को नई फसल के अन्न, जल से खातिर की जाती है। घर-घर में सोमरस (हंडिया) चढ़ता है। मांस-मदिरा का दौर चलता है। लोग-बाग उन्हें खा-पीकर मस्त रात-रात भर अखाड़ा जमाते हैं।''[3] आदिवासी समाज का जीवन नदी, पहाड़ों, झरनों, जंगलों अर्थात प्रकृति की गोद में रचता-बसता है। यही इनके जीवकोपार्जन के साधन भी हैं और सांस्कृतिक विरासत भी हैं। क्योंकि मुख्यधारा के समाज का व्यक्ति जंगल में लकड़ी काटने जाता है, परंतु आदिवासी लकड़ी काटने नहीं बल्कि लकड़ी चुनने जाता है। चुनने से तात्पर्य है कि वह सूखी लकड़ियाँ ही जंगल से लाता है। इनके समाज में प्यार निर्मल गंगा की तरह प्रवाहित होता है। वह प्रकृति की बनायी हर एक चीज से प्यार करता है, छैला सन्दु में मंगल सिंह मुंडा ने लिखा है, ''सृष्टिकर्ता की महिमा जितनी गाई जाए उतनी कम ही होगी, जिसने इस रहस्यमय संसार को बनया। उसे वृक्ष-वनस्पति,जीव-जंतु,पहाड़, नदी-नाले लता-लरंग आदि से सज्जित किया।''[4] आदिवासी समुदाय में उन्मुक्त प्रेम है यर्थाथ प्रेम है, उनके प्रेम में कोरी कल्पना नहीं है कि नायक आसमान से चाँद तारे तोड़ लाए बल्कि वह अपनी नायिका से कहता है सलकिद, किकिर, तोवा,ईच आदि के फूल ला के दूंगा। ये अपने आसपास प्रकृति की बनाई हर चीज को जीवन के लिए उपहार समझता है। वह उन्हें सभाल कर रखना चाहता है, सिंहबोंगा की बनाई हुई हर अनोखी पेड़, समुंद्र,नदियाँ सभी को बचाना चाहता है, छैला सन्दु में चित्रित करते हुए लिखा गया है, ''हमें अथाह समन्दर दिया,बर्फीली चोटियाँ दी,हवाएँ, आँधी-तूफान....पर नहीं,ये जो पहाड़ों की चोटियाँ देख रही हों, उनमें जीवन की ऊँचाई समाहित है! समन्दर की अथाह गहराई में जीवन की गहराई छिपी हुई है।''[5]

आदिवासी समाज सदियों से प्रकृति पे्रमी, प्रकृति का रक्षक रहा है, प्रकृति को ही अपना घर मानता है। जंगलों में प्राप्त होने वाली खाद्य जैसे- फल-फूल, कन्दमूल, नदियों एवं झरनों का पानी ही उसका जीवन है। आदिवासी अपनी पहचान इन्हीं जल, जंगल, पहाड़ ,नदी से करता है, अपने जीवन का हर पल इन्हीं प्रकृति की सौंदर्य को समर्पित करता है। प्रकृति द्वारा प्रदान अनमोल चीजों को अपना घर समझता है, 'आदिवासी' छैला सन्दु उपन्यास में अपना परिचय देते हुए कहता है, ''वन वृक्षों के तले शरण-स्थल है मेरा। कन्द-मूल मेरा भोजन। झरने का झरता पानी मेरा पेय है। खुला आकाश मेरी छत। वन-उपवन में बहती मन्द हवा मेरी साँस तथा चहकते-फुदकते पक्षियों के कलरव और अपनी बाँसुरी की आवाज मेरा जीवनाधार है। बस, यही मेरा परिचय है।''[6] आदिवासी समाज जंगलों, पहाड़ों और यहाँ पाए जाने वाले पेड़, पौधों, पशु-पक्षियों से भी प्रेम करता है, मैं तो कहता हूँ कि इनकी पहचान आदिम समुदाय के साथ ही प्रकृतिप्रेमी समुदाय भी होना चाहिए, जो न अपने समाज के व्यक्यिों से ही अपितु जंगल के हर जीव-जंतु से प्रेम,स्नेह करते हैं। कितने संवेदनशील हैं, ये जंगलवासी इनकी संस्कृति में लोकरंग, जीवन का आनंद छुपा हुआ है। आदिवासी समाज की सांस्कृतिक विरासत का अभिन्न हिस्सा हैं ये पेड़, पौधे, पहाड़, नदियाँ कितना स्नेह है। इन्हें प्रकृति से कितना प्रेम है। इसका जिक्र करते हुए अपने 'छैला सन्दु' में मंगल सिंह मुंडा लिखते हैं ''वन को तंगा(कुल्हाड़ी), विंडा तथा रस्सी लेकर आना आखिर किस मतलब से ?''[7]

आदिवासी समाज की संस्कृति ने उनके समूह को बचाकर रखा है। उनके त्यौहार, विवाह आदि कार्य समूह में ही संपन्न होते हैं, जो उनकी संस्कृति का एक हिस्सा है, आदिवासी समाज में 'घोटुल' (एक प्रकार का कुमार-गृह या बैचलर्स होम जो युवक-युवतियों के मनोविनोद या जिज्ञासा के केंद्र होते हैं) जैसी एक संस्था है। जिसमें इस समुदाय के युवा, लड़के-लड़कियाँ एक साथ रहते हैं। यहाँ रहकर परिवार, समाज और राजनैतिक शिक्षा का विकास करते हैं। घोटुल में स्वच्छंद यौन शिक्षा की व्यवस्था होती है। कोई भी लड़की अपने मनपसंद के लड़के के साथ रह सकती है, सो सकती है, जिसे आज मुख्यधारा के समाज में लिव-इन-रिलेशनशिप कहते हैं। यह व्यवस्था प्रत्येक आदिवासी समुदाय में पायी जाती है, परंतु अलग-अलग नामों से जानी जाती है। जैसे-खड़िया समुदाय में 'गीति-ओ' मुंडा आदिवासी समुदाय में 'गिति-

ओड़ा', उराँव में धुमकुरिया आदि। 'जंगल के फूल' उपन्यास में राजेन्द्र अवस्थी 'घोटुल' के बारे में लिखते हैं कि, ''यहाँ प्रत्येक प्रेमी की एक प्रेमिका होती है और हर प्रेमिका अपने प्रेमी पर शासन करती है,ये प्रेमिका समय पर बदल सकते हैं, रात को काफी देर तक यहाँ किस्सा-कहानियाँ नाच-गाना होता रहता है और जब चाँद सिर पर चढ़कर नीचे गिरने को मुंह औंधा होता है तो प्रत्येक प्रेमी अपनी प्रेमिका को लेकर गीकी से बंध जाता है। मुर्गे की बाँग होते ही फिर घोटुल खाली होने लगता है।''[8] आदिवासी समाज और उनकी संस्कृति में सब कुछ खुला-खुला है। यदि लोकतंत्र देखने को मिलता है तो इन्हीं के यहाँ। इनके समाज के पर्व, त्योहार या फिर किसी समस्या को हल करना है तो पंचायत के माध्यम से ही होता है।

आदिवासी समाज इतना सरल, इतना सहज एवं भोला होता है, कि आजीवन उनके समाज में किसी भी घर में ताला नहीं लगता है। उनका रहन-सहन सब कुछ सरल और सुगंधित होता है। आदिवासी समुदाय की यह विशेषता है। उनकी आदिम संस्कृति की देन है। वह स्वच्छंद है, क्योंकि वह समुदाय में है। समुदाय उसके साथ है। समुदाय ही उसका सब कुछ है और इसी के कारण वह आज भी अपनी सांस्कृतिक विरासत को बचाए रखने में सफल है। राजेन्द्र अवस्थी अपने उपन्यास 'जंगल के फूल में लिखा है'। अजीब बात है, सारा गाँव खाली है। सिर्फ छोटे-छोटे बच्चे घरों में बैठे हैं। इतने से बच्चे घरों में अकेले रह जाते हैं। न घर के दरवाजे बंद और न ताला लगे, आश्चर्य है।''[9] आदिवासियत यही है जिसने सभी को अपनेपन का प्यार दिया है। आदिवासी समुदाय में बच्चा अनाथ नहीं होता है। यदि किसी बच्चे के माता पिता का देहांत हो जाता है तो उसे समुदाय के लोग अपने बच्चे की तरह पालते हैं। यहाँ अपने बच्चे हैं या किसी दूसरे के ऐसी बातों पर विचार नहीं किया जाता है।

आदिवासी समाज की संस्कृति में विवाह एक महत्त्वपूर्ण कार्य है। जिसमें आदिवासी समाज की पूरी की पूरी संस्कृति दिखाई दे जाती है। आदिवासी समुदाय में यानी प्रत्येक आदिम समुदाय में विवाह की अपनी-अपनी मान्यता है। आदिम समाज में प्रत्येक आदिवासी समुदाय का विवाह उसके गोत्र में ही होता है। इनके समाज में भी कई गोत्र होते हैं। जैसे-हांसदा (वृक्ष), टोप्पो (मछली पकड़ने वाले), हेम्ब्रम (धान) आदि गोत्र हैं। जैसे- मुख्यधारा के समाज में होता है। इनके समाज में भी विवाह के कई प्रकार होते हैं। जैसे-गोंड में 'दुध लौटवा विवाह' पठोनी विवाह' भील में 'दाया विवाह' संथाल में शादी को 'बापला' कहते हैं। उराँव जनजाति में एक अनोखी प्रथा है, जिस कन्या को पेड़ पर चढ़ना नहीं आता है उससे कोई विवाह नहीं करता है। यदि विवाह हो भी गया तो यदि बाद में पता चलता है तो लड़की को छोड़ दिया जाता है। परंतु इस समुदाय में विवाह को एक उत्सव की तरह मनाया जाता है। विवाह में जब ढोल और मादर बजते हैं तो पूरा समुदाय एक साथ झूम उठता है। विवाह का वर्णन करते हुए राजेन्द्र अवस्थी ने 'जंगल के फूल' उपन्यास में लिखते हैं, ''होय...होय वाह वाह रेलो रे रेलो ...और फिर क्या था, गाँव भर के जवान जोड़े सामने आ गए। नई दुलहिन यह देख रही थी। उसके सिल्वी खुले थे और दाँत कांसे के फूल जैसे चमक रहे थे। धुंधचियों की लाल माला उसके गले में लटकी आग की तरह चमक रही थी। वह जैसे हवा में झूल रहीं हों। कभी बाईं करवट लेती तो कभी दाईं, शायद उसने ज़्यादा पी ली थी।''[10]

आदिवासी समाज के जीवन में विवाह का क्या महत्त्व है। आदिवासी समाज के विवाह, परंपरा, रीति-रिवाज तथा उसमें होने वाले नाच-गाने बड़े ही आनंदमय होते हैं। जिसका भरपूर आनंद आदिवासी समाज उठाता है। विवाह का उल्लेख या वर्णन आदिवासी कथाकार मंगल सिंह मुंडा ने भी अपने उपन्यास 'छैला सन्दु' में भी किया है, वह लिखते हैं कि,''अरे वह देखो, गाने-बजाने के साथ दूल्हाराजा को सब लोग कहाँ ले जा रहे हैं? आमों की आमराई में! उली सकी के लिए ले जा रहे हैं। ओह रसिक ! आज तुम वृक्ष का साक्षी मानते हुए घोषणा करने जा रहे हो कि आज से मैं सांसारिक जीवन में प्रवेश करने जा रहा हूँ कि परिवार में, समाज में, देश-दुनियां में,स्थापित कायदे-कानून का आदर करूँगा कि अपने होने वाली जीवन सांगिनी के साथ न्याय करूँगा। और गृहस्थ जीवन का दायित्त्वपूर्ण निर्वाह करूँगा।''[11] आदिवासी समाज प्रकृतिपूजक है, वह अपने आपको उसका एक सेवक भर मानता है। आदिवासी यह मानता है कि इस जंगल के जितने भी पेड़-पौधे, जीव-जंतु हैं। बारूबोंगा के ही हैं, उसके बिना एक पत्ता भी नहीं हिल सकता, आदिवासी समाज का देवता उनके ही बीच इन्हीं वृक्षों में निवास करता है। वह मानता है कि जंगल में उसकी रक्षा मंरगबरू ही करता है। मंगल सिंह मुंडा ने 'छैला सन्दु' में लिखा है, ''सुना है ये सारे पहाड़-पगडंडी हमारे बुरुबोंगा के अधीनस्थ हैं। वही इस अरण्य प्रदेश का शासक है। बाघ-भालू, साँप-छछूँदर, पशु-पक्षी सबके सब उसकी प्रजा हैं। वह इस सारे वन-प्रदेश का राजा हुआ करता है। उसके आदेश बिना यहाँ एक पत्ता भी नहीं हिलता। वह जंगल का सर्वशक्तिमान देवशासक है। आर्य लोग उसे शिव भगवान कहते हैं। हम उसे बुरुबोंगा कहते हैं।''[12]

वनवासी जीवन की रक्षा नदी, पहाड़, जंगल, पेड़ ही रहा है। उनकी विरासत यही पहाड़, नदियाँ,झरने ही हैं।

आदिवासी समाज में धार्मिक कर्मकांड, मानव बलि तक दी जाती है। क्योंकि ये आदिम समुदाय अंधविश्वासी होता है। प्रत्येक आदिवासी समुदाय अपने देवी-देवता को खुश करने के लिए बलि देता है। वह यह विश्वास करता है कि देवी-देवता यदि रुष्ट हो जाते हैं तो गाँव में महामारी और गाँव का विनाश भी हो सकता है। उनके समाज में चुड़ैल का बेहद खौंफ़ रहता है। भूत-प्रेतों की भी पूजा करते हैं। मंगल सिंह मुंडा ने आदिवासी समाज में जादू-टोना भूत-प्रेत एवं अंधविश्वास के संबन्ध में अपने उपन्यास 'छैला सन्दु' में लिखा, ''दोहाए-दोहाए सिंगबोंगा के दोहाए..... बुरूबोंगा के दोहाए, जंत्र-मंत्र छू मंत्र भाग चंडी भुतह चंडी, हवावाण, अग्निवाण, नजरवाण,दृष्टिवाण..... देखो-देखो दर्पण पर देखो.....।''[13]

इसी तरह से आदिवासियों के कर्मकांड और उनके अंधविश्वास एवं पूरे समुदाय को सुरक्षित रखने के लिए आदिवासी समाज पशु बलि देता है। कभी-कभी मानव बलि तक दी जाती है। आदिवासी जन के अंधविश्वास का चित्रण राजेन्द्र अवस्थी ने अपने उपन्यास 'जंगल के फूल' में भी करते हैं वह लिखते हैं कि, ''मुर्गे ने बांग दी और पूरब के पोरोभूम का चेहरा चमक उठा। सारे लोग नार की देवी के पास गए। गायता ने पूजा की,हवन-आरती उतारी और फिर मुर्गे-मुर्गियों, बकरों और भैसों की बलि दी गई। सारा मैदान खून से लाल हो गया। सबसे पहली बलि धरती मैया को दी गई, फिर गाँव पुरखों को एक-एक कर याद किया गया और उन्हें बलि दी गई। जितना खून वहाँ जमा होता, गाँव वालों को उतनी ही खुशी होती। पुरखे जब निपट गये तो एक तंदुरुस्त भैंसा लाया गया। यह पहले से ही पीपल के झाड़ के नीचे बंधा था। उसकी गायता ने पूजा की और पेरमा ने ताकत भर टंगिया उसके गले में दे मारी। भैंसा जमीन पर लोटने लगा तो औरतों ने ताली पीट दी।''[14]

आदिवासी समाज की संस्कृति जंगल पर ही निर्भर है। वे जंगल में रहने वाले तीतर, बटेर, जंगली मुर्गी आदि का शिकार कर अपना जीवन निर्वाह करता आया है। शिकार करना उनके समुदाय में एक बहादुरी का परिचायक है। जो अपने तीर धनुष,भाला से जितना शिकार करता है, वही आगे चलकर समाज का मुखिया होता है। खासकर किसी पर्व या त्यौहार पर सभी शिकार पर जाने को पर्व की तरह मनाते हैं। सुबह होते ही समुदाय के सभी व्यक्ति झुंड में शिकार के लिए निकल जाते हैं। उनके साथ उनका कुत्ता भी रहता है। जो शिकार में मिले, वह भी शिकार में अपने हिस्से का हकदार होता है। वे शिकार उतना ही करते हैं जितने से उनके समुदाय का एक दिन का पेट भर जाए। मुख्यधारा के समाज की तरह नहीं अपने लिए तो रखा ही आने वाली पीढ़ी के लिए भी धन इकट्ठा कर रख देता है। यह जो अधिक से अधिक धन रखने की लालसा है, ऐसी धारणा के व्यक्तियों ने ही समाज में असमानता पैदा की है। जिससे एक आम आदमी का लड़का जिंदगी भर एक सरकारी नौकरी के लिए संघर्ष करता है परंतु अंबानी का लड़का पैदा होते ही अमीर होता है। आदिवासी समाज जंगल में रहकर भी सबको समान अवसर प्रदान करते हैं। आदिवासी समाज के प्रति लोगों के मन में जो भी पूर्व में पूर्वाग्रह है, उसे त्यागकर उनकी प्रगति के लिए जो भी आवश्यक है, उसे सही दिशा में करने की जरूरत है। परिणामस्वरूप आदिवासी समाज भी मुख्यधारा में जुड़ा रहे और उसका प्रतिफल अन्य समाज के लोगों को मिले।

संदर्भ

1. एलिस एक्का की कहानियाँ, संपादक- वंदना टेटे,राधाकृष्ण प्रकाशन, अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण: 2015, पृ. 26
2. जंगली फूल, जोराम यालाम, अनुज्ञा बुक्स, दिल्ली, प्रथम संस्क_रण:2019, पृ. 4
3. छैला सन्दु, मंगल सिंह मुंडा, राजकमल प्रकाशन, प्रा.लि. नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण:2004, पृ. 142
4. छैला सन्दु, वही, पृ. 155
5. छैला सन्दु, वही,पृ. 155
6. छैला सन्दु, वही,पृ. 156
7. छैला सन्दु, वही, पृ. 159
8. जंगल के फूल, राजेन्द्र अवस्थी, राजपाल एंड सन्ज़, मदरसा रोड, कश्मीरी गेट, दिल्ली, संस्करण: 2019, पृ. 24
9. जंगल के फूल, वही, पृ. 77
10. जंगल के फूल, वही, पृ. 38
11. छैला सन्दु, राजकमल प्रकाशन, प्रा.लि. नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली, पृ. 241
12. छैला सन्दु, वही,पृ. 241
13. छैला सन्दु, वही, पृ. 139
14. जंगल के फूल, राजपाल एंड सन्ज़, मदरसा रोड, कश्मीरी गेट, दिल्ली, पृ. 52

❖

सहायक आचार्य, हिंदी विभाग
बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, झाँसी, पिन 284128 मो. 9838444555

छत्तीसगढ़: पारंपरिक पूजा-पद्धति एवं लोक-पर्व के प्रमुख आयाम

चुन्नीलाल साहू

भादो कृष्ण पक्ष के आठवें दिन भगवान श्रीकृष्ण के जन्मोत्सव के रूप में यह पर्व आयोजित किया जाता है। इस दिन लोग उपवास परंपरा का पालन करते हुए धान की कोठी या दीवार पर भगवान श्रीकृष्ण का चित्र अंकित कर पूजा करते हैं। इस दिन ग्रामीण अंचल में मटकी फोड़, दही लूट जैसे मनोरंजन कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। गीतेश कुमार अमरोहित के अनुसार- ''भादो मास की अष्टमी तिथि को आठे मनाया जाता है। इस दिन उपवास रखते हैं। रसोई घर की दीवारों पर आठे कन्हैया का चित्र बनाकर पूजा करके फलाहार करते हैं। दूसरे दिन रामधुनी दल के साथ दही लूट, नारियल फेंक, राम सप्ताह झूला आदि का आयोजन किया जाता है।

पूरे भारतवर्ष में 'धान का कटोरा' के नाम से प्रसिद्ध छत्तीसगढ़ अंचल की अपनी विशिष्ट भाषा, बोली, वेशभूषा, खान-पान, रहन-सहन, संस्कार, संस्कृति एवं पहचान है, जिसके संदर्भ में संजय त्रिपाठी लिखते हैं- ''छत्तीसगढ़ व्यापक रूप से गाँवों, कस्बों का प्रदेश है। यहाँ की संस्कृति को लोक संस्कृति के रूप में देखना ही अधिक सार्थक है। छत्तीसगढ़ की संस्कृति 'लोक' की संस्कृति है, जो जनजातियाँ, भू-भागों में अपनी पृथक सांस्कृतिक अस्मिता के साथ संरक्षित है। इसके आचार-विचार, रीति-रिवाज, पर्वोत्सव, मूल्य और मान्यताएँ, जीवन-शैली, भाषा, कथाएँ, लोक-गाथाएँ, लोकनृत्य, लोकगीत, लोक-संगीत, लोकनाट्य, लोक-देवता, लोकपर्व, लोक-शिल्प और लोक-चित्रकला का विराट संसार है, जो समष्टि रूप में इस प्रदेश की समग्र वृहत्तम संस्कृति है।''[1] इसी प्रकार छत्तीसगढ़ की वृहद लोक-संस्कृति के संदर्भ में भगवान सिंह वर्मा लिखते हैं- छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक छवि लोक-जीवन के पग-पग पर दिखलाई पड़ती है। छत्तीसगढ़ की संस्कृति को उजागर करने वाले विविध स्वरूप हैं। जिसमें यहाँ के मूल निवासियों के सामाजिक परिवेश, प्रदेय एवं लोक-मान्यताएँ स्पष्ट झलकती हैं। ''लोकगीत, लोककथा, लोकनाट्य, लोकनृत्य तथा लोक-कलाओं के अतिरिक्त भाषा, रहन-सहन, व्यवहार, रीति-रिवाज, संस्कार, व्रत, त्यौहार, व्यवसाय आदि हर क्षेत्र में पवित्रता, स्नेह, धर्मिकता और आध्यात्मिकता की स्पष्ट छवि यहाँ के लोक-जीवन में पग-पग पर मिलती है और यही संस्कृति है। तुलसी चँवरा, सत्यनारायण की कथा, रामायण, रामनाम सप्ताह, गो-सेवा, ब्राह्मण व साधुओं का अभिवादन, कबीर-पंथियों व सतनामियों की बहुलता आदि सैकड़ों प्रतीक हैं, जिसमें छत्तीसगढ़ की विशिष्ट संस्कृति अपनी उज्ज्वल आभा के साथ प्रतिबिम्बित होती है।''[2] एक तरह से देखें तो छत्तीसगढ़ राज्य अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक परंपराओं में विविधता के कारण अन्य राज्यों से अलग है। यहाँ पूरे वर्ष भर स्थानीय स्तर के विभिन्न पर्व, उत्सव, पारंपरिक पूजा, लोकपर्व मनाया जाता है।

लोकपर्व का आशय

वह पर्व जो संपूर्ण राष्ट्र का न होकर किसी प्रदेश, क्षेत्र या स्थानीय स्तर के जन-समूहों द्वारा विशिष्ट पारम्परिक पूजा-पद्धति के अनुसार आयोजित होता है, जिसे सभी अंचल के लोग मिल-जुल कर मनाते हैं, जिसमें स्थानीय धार्मिक मान्यताएँ, आस्था, परंपरा का प्रमुख स्थान है, यह समुच्य तथ्य लोकपर्व के अंतर्गत आता है। लोकपर्व में अंचल विशेष के जन-समुदायों की विचारधाराएँ, भावना, मान्यताएँ, हर्ष, उल्लास, आनंद, प्रेम, शोक, भय इत्यादि भावनाएँ सन्निहित होती हैं। यह लोक-मानस का पर्व है, जो कि एक पीढ़ी से दूसरी और तीसरी पीढ़ी में हस्तांतरित होती हुई पारम्परिक तरीकों से आगे बढ़ रही है। स्पष्ट शब्दों में कहें तो 'लोक के द्वारा लोक के लिए' संचालित पर्व ही 'लोकपर्व' है, जिसमें प्रदेश, क्षेत्र के निवासियों की मुख्य भूमिका होती है। जितने प्रकार के लोकपर्व छत्तीसगढ़ में स्थापित हैं, उतना शायद ही किसी अन्य राज्य में मनाए जाते हैं। विभिन्न लोक-

परंपरागत पारम्परिक त्यौहार, पूजा-पद्धति, व्रत के संबंध में छत्तीसगढ़ को लोक-संस्कृति का संवाहक राज्य कहना समीचीन होगा।

हरेली पर्व

यह छत्तीसगढ़ अंचल का प्रथम पर्व है। हरेली का मतलब हरयाली है। छत्तीसगढ़ वासी इस दिन पूरे प्रदेश में हरयाली छाई रहे और हमेशा सुख-शांति बनी रहे, ऐसी कामना करते हुए श्रावन अमावस्या के दिन इस पर्व को मनाते हैं। मुख्य रूप से इसे किसानों का पर्व कहा जाता है। छत्तीसगढ़ का मुख्य व्यवसाय कृषि और धान उत्पादन है। इस पर्व में किसान धान की बोवाई-रोपाई के पश्चात् खेती में सहायक लौह-औजारों- नागर, गैंती, कुदाल, फावड़ा समेत कृषि के काम में आने वाले समस्त उपकरणों एवं गाय-बैल की पूजा-अर्चना करते हैं। इस अवसर पर सभी घरों में गुड़ का चीला (रोटी) बनाया जाता है। हरेली पर्व के दिन ज्यादातर लोग अपने कुलदेवता और ग्रामदेवता की पूजा करते हैं। कई घरों में कुलदेवता और ग्रामदेवता को प्रसन्न करने के लिए मुर्गा और बकरे की बलि देने की भी प्रथा है। इस दिन बैल-भैंस और गाय को बीमारी से सुरक्षित रखने के लिए बगरंडा और नमक खिलाने की प्रथा है। बच्चे इस दिन बांस से बनी गेड़ी का आनंद लेते हैं, किसानों के लिए यह हरेली पर्व है तो बच्चों के लिए गेड़ी-पर्व है। संजय त्रिपाठी के अनुसार- ''हरेली मुख्य रूप से किसानों का पर्व है, किसानों द्वारा धान की बोनी से निवृत्त होकर श्रावण अमावस्या के दिन सभी कृषि एवं लौह उपकरणों की पूजा की जाती है। यह त्यौहार छत्तीसगढ़ में वर्ष का प्रथम पर्व होता है। इस दिन बच्चे बाँस की गेड़ी बनाकर उस पर घूमते व नाचते हैं।''[3]

इस पर्व की अन्य खास बात यह है कि इस दिन तंत्र-मंत्र, जादू-टोना की भी मान्यता है। बैगा जनजाति के लोग कृषि फसल की सुरक्षा के लिए गाँव में स्थापित देवी-देवताओं की प्रतिमा का पूजा-पाठ करते हैं। राउत जाति के लोग घर-घर घूम-घूम कर नीम की टहनियों एवं लोहार जाति के लोग लोहे का कीला प्रत्येक घर के दरवाजों पर लगाते हैं और आशीष देते हैं। मान्यता है कि ऐसा करने से उस घर में रहने वालों का अनिष्ट से रक्षा होगी। इसके बदले किसान उन्हें दान स्वरूप स्वेच्छा से दाल, चावल, सब्जी, नगद राशि देते हैं। छत्तीसगढ़ में हरेली के दिन तंत्र-साधना, जादू-टोना करने वाली बुरी शक्तियों के प्रति गहरा विश्वास जुड़ा है- ''श्रावण कृष्ण पक्ष की अमावस्या यानी हरेली के दिन से तंत्र-विद्या की शिक्षा देने की शुरुआत की जाएगी। इस दिन से प्रदेश में लोकहित की दृष्टि से जिज्ञासु शिष्यों को पीलिया, विष उतारने, नजर से बचाने, महामारी और बाहरी हवा से बचाने समेत कई तरह की समस्याओं से बचाने के लिए मंत्र सिखाया जाएगा। तंत्र-दीक्षा देने का यह सिलसिला भाद्र शुक्ल पंचमी तक चलेगा।''[4]

आजकल राजनीतिक एवं सामाजिक दृष्टिकोण से हरेली पर्व को हरियाली का प्रतीक मानकर कई जगहों पर वृक्षारोपण का कार्य एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम, खेल भी आयोजित किए जाते हैं। पूरा छत्तीसगढ़ प्रदेश हरेली पर्व को राज्य का प्रथम पर्व मानकर बेहद खुबसूरत तरीकों से हर्ष-उल्लास के साथ मनाते हैं।

सवनाही बरोई पर्व

ग्राम-रक्षा का लोकपर्व 'सवनाही बरोई' का पर्व छत्तीसगढ़ के ग्रामीण अंचल में आयोजित किया जाता है। इसे 'इतवारी मनाना' भी कहते हैं। इस दिन गाँव के समस्त जन-समूहों की स्वास्थ्य-रक्षा के उद्देश्य से ग्राम देवी-देवताओं की पूजा की जाती है। इस पर्व के विधि-विधान के संदर्भ में रीझे यादव, हरिभूमि पत्रिका के चैपाल अंक में लिखते हैं- ''सावन महीने के पहले रविवार को 'सवनाही बरोई' पर्व मनाया जाता है, जिसे इतवारी मनाना भी कहते हैं। इस दिन समस्त ग्रामवासियों के स्वास्थ्य-रक्षा के लिए स्थानीय देवी-देवताओं का पूजन किया जाता है और प्रतीकात्मक रूप से गाँव के समस्त अनिष्टकारी शक्तियों को एक टूटे टोकनी में रखकर ग्राम के शियार (गाँव के अंतिम छोर जहाँ से अन्य गाँव की सीमा प्रारंभ होती है) पर ले जाकर छोड़ दिया जाता है। ऐसा माना जाता है कि इससे गाँव पर विपत्ति नहीं आती और जन-हानि नहीं होती। इस पर्व को विधि-विधान से मनाया जाता है। तैयारी: सवनाही बरोने के एक दिन पूर्व गाँव में मुनादी करवाकर रविवार को समस्त कृषि-कार्य और गाँव में चल रहे किसी भी प्रकार के निर्माण-कार्य को एक दिन के लिए पूर्णतः बंद कराया जाता है। सवनाही बरोई का कार्य संपन्न होते तक कुएँ से पानी भरना भी प्रतिबंधित होता है। सवनाही पूजा करने के लिए नारियल, धूप, अगरबत्ती, काली मुर्गी, बाँस से बनी टोकनी, नींबू, ध्वजा, चावल की भूसी (कोड़हे) की बनी रोटी आदि वस्तुएँ आावश्यक है।''[5]

सवनाही बरोई के संबंध में लोक-मान्यता है कि बरसात के दिनों में वर्षाजनित बीमारियों का प्रकोप अधिक रहता है। ज्यादातर धुकी (हैजा) की बीमारी फैलती है। ग्रामीण बुजुर्गों की धारणा है कि इस बीमारी के कारण पूरा-का-पूरा गाँव काल के गर्त में समा जाता है। ऐसी स्थिति में लोगों की प्राण-रक्षा हेतु सवनाही बरोई की प्रथा प्रचलित है। सावन मास में ग्रामीण अंचल की महिलाएँ अपने घरों को गोबर की लकीरों से घेरती हैं, साथ ही घर के सामने मानव एवं पशु का चित्र अंकित करती हैं। इसके पीछे भी एक लोक- मान्यता है कि ऐसा करने से बुरी शक्तियाँ घर में प्रवेश नहीं कर पाती। इस तरह का चित्रांकन कहीं हरेली के दिन या सवनाही बरोई के दिन बनाई जाती है या हरेली के एक दिन पूर्व। आगे सवनाही बरोई के विधि-विधान के संदर्भ में रीझे यादव, हरिभूमि पत्रिका के चैपाल अंक 'रग छत्तीसगढ़ के' में लिखते हैं- ''प्रातः महावीर (हनुमान) जी की पूजा की जाती है। महावीर की पूजा-अर्चना के बाद एक टूटे हुए टोकनी के चारों ओर ध्वजा लपेटकर और उसमें पूजन की समस्त सामग्री लेकर गाँव के सिआर में जाकर पूजा-अर्चना किया जाता है और वहाँ पर 'कोड़हे की रोटी' का भोग लगाया जाता है। तत्पश्चात् मुर्गी को ले जाकर छोड़ दिया जाता है। टोकनी सहित समस्त पूजन सामग्री को धरसा (गुजरने का रास्ता), बरदी (गौ-समूह) के किनारे छोड़ दिया

जाता है। ऐसी मान्यता है कि 'गौ' के चरण पड़ते ही समस्त बुरी शक्तियाँ गाँव के बाहर चली जाती हैं। एक विशेष बात यह है कि पूजा करने के लिए गए किसी भी व्यक्ति को उक्त टोकनी को वापस मुड़कर देखने की मनाही होती है। इस दिन गाँव से बाहर यात्रा करने की मनाही होती है। कई गाँव में कामकाज पूर्णतः बंद होता है और सभी लोग एक स्थान पर एकत्रित होते हैं। पूजन की समस्त सामग्री लेकर बैगा गाँव के सियार में जाते हैं और सवनाही बरोई का कार्य संपन्न करते हैं। पूजन टोकनी में नीम की लकड़ी से बना एक रथ भी रखा जाता है, जिसे इक्कीस ध्वजा से सजाया जाता है।''[6] अंततः हम कह सकते हैं कि सवनाही बरोई पर्व अंतर्गत लोगों के उत्तम स्वास्थ्य, सुखमय जीवन, ग्रामीण जन-जीवन की सुरक्षा की कामना सन्निहित है। स्थानीय ग्राम्य देवी-देवताओं के सानिध्य में रहने वाले ग्रामवासियों के लिए आज भी ग्राम्य देवी-देवताएँ उनके समस्त दुःख, कष्टों का निवारण करती हैं।

भोजली पर्व

यह छत्तीसगढ़ में मैत्री का पारंपरिक पर्व है। इसे अन्य प्रदेशों में विभिन्न नामों से जाना जाता है। ब्रज एवं निकटवर्ती क्षेत्र में भुंजिया एवं अन्य प्रदेशों में फुलिया, धुधिया, धौंगा, जंवारा और छत्तीसगढ़ में 'भोजली' कहा जाता है। इस पर्व में सावन माह के नवमीं के दिन लड़कियाँ एवं नवविवाहिता छोटे-छोटे टोकरी में मिट्टी भरकर अन्न के दाने- जौं, गेहूँ, कोदो, धान आदि को बोते हैं। इसका महत्त्व नवरात्र में बोए जाने वाला जंवारा जितना है। छत्तीसगढ़ में सावन माह में रक्षाबंधन के दूसरे दिन यह पर्व आयोजित किया जाता है और भादो माह के कृष्ण पक्ष में भोजली का विसर्जन नाली तालाब में किया जाता है। वहाँ से भोजली का कुछ अंश को लेकर युवतियाँ गाँव के प्रमुख देवी-देवताओं को अर्पित करते हैं। फिर जिन्हें अपना घनिष्ठ मित्र बनना है, उनके कान में भोजली खोंचते हैं और जीवन पर्यंत तक वे एक-दूसरे का नाम नहीं लेते 'भोजली या गींया' से संबोधित करते हैं। यह मित्रता का ऐसा संगम पर्व है जो जीवन भर साथ नहीं छोड़ता।

हलषष्ठी पर्व

इस पर्व को 'हरछठ' एवं 'कमरछठ' के नाम से भी जाना जाता है। इस दिन महिलाएँ एकत्रित होकर भूमि में सगरी (गड्ढा या कुंड) बनाकर शिव-पार्वती की पूजा-अर्चना करती हैं। निर्जला उपवास रखती हैं तथा पुत्र की सुख-समृद्धि, लंबी आयु की कामना करती हैं। इस दिन पसहर चावल, भैंस का दूध, दही, घी एवं अन्य छह प्रकार की भाजी, लाई, महुआ आदि का सेवन किया जाता है। पसहर धान बिना जुती जमीन, पानी भरे गड्ढों आदि में स्वतः उगता है। कमरछठ के दिन उपवास रखने वाली स्त्रियों को जुते हुए जमीन में उपजे किसी भी चीज का सेवन वर्जित है। भादो महीने के कृष्ण पक्ष की षष्ठी तिथि को भगवान श्रीकृष्ण के बड़े भाई बलराम का जन्म हुआ था और उनका प्रमुख शस्त्र हल था, इसलिए इस दिन को हलषष्ठी कहा जाता है। ऐसा माना जाता है कि महिलाएँ अपने पुत्र को बलराम जी की तरह बलशाली बनाने के लिए यह व्रत रखती हैं। महिलाएँ हलषष्ठी व्रत-पूजन के अंत में छह कथाओं को सुनकर आरती आदि से पूजन की प्रक्रियाओं को पूरा करती हैं। 'हरिभूमि पत्रिका' के अनुसार- ''महिलाएँ हर साल हलषष्ठी का व्रत रखती हैं और सामूहिक रूप से पूजा-आरती करती हैं। इस दिन पूरे दिन निर्जला व्रत रखती हैं। भगवान शिव-पार्वती, श्रीगणेश, कार्तिकेय, नंदी, सिंह और नाव आदि के प्रतीक-चिन्ह की पूजा करती हैं। उन्होंने बताया कि इस दिन वे सुबह से ही पूजा की तैयारी में जुट जाती है। दोपहर को सगरी की पूजा-अर्चना करती हैं। इसे सामूहिक रूप से मोहल्ले में बनाया जाता है। सगरी कुंड को काशी फूल पत्र से सजाकर रखती हैं, जिसमें मिट्टी की नाव बनाकर छोड़ा जाता है। शाम को सूर्य अस्त के बाद पसहर चावल और छह तरह की भाजी की सब्जी खाकर व्रत तोड़ा जाता है। पूजा से लौटने के बाद अपने बच्चों की पीठ पर पीली पोती मारकर उनके दीर्घायु की कामना करती हैं।''[7] इसी प्रकार रविन्द्र गिन्नौरे हलषष्ठी पर्व मनाने की विधि और उसकी लोक-मानयता एवं महत्त्व पर लिखते हैं- ''हरछठ के दिन श्रीकृष्ण के बड़े भाई बलराम का जन्मदिन मनाया जाता है, जिसका प्रमुख शस्त्र हल है। महिलाएँ पुत्र कामना एवं उनकी दीर्घायु जीवन के लिए हरछठ पर्व पर उपवास रहती हैं। कमरछठ माता की पूजा में काशी फूल, कुश, झरबेरी, गूलर, महुआ, मलाशी टहनी उपयोग में ली जाती है। महुआ पत्ते के दोने बनाए जाते हैं एवं मिट्टी से बनी चुकिया में सतनाजा अनाज भुनकर भरा जाता है। भुने हुए अनाज में गेहूँ, चना, लाई, मक्का, जौ, बाजरा और मूंग को लिया जाता है। भारत की गोधन संस्कृति है जिसमें भैंस को एक तरह से त्याज्य माना गया है। भैंस का वंश भी चलता रहे इसलिए हरछठ में उसे सर्वोपरि महत्ता दी गई है। हरछठ में भैंस का दूध, दही, घी का उपयोग होता है। यह उसी भैंस का होता है जिसका पड़वा (नर संतान) जीवित हो। भैंस के गोबर से कमरछठ माता का अंकन किया जाता है और रंगों के लिए छूही, मिट्टी, गेरू और काजल का इस्तेमाल होता है।''[8] यह पर्व लगभग पूरे भारतवर्ष में मनाया जाता है। पूर्वी भारत में 'ललईछठ' कहा जाता है। कुंवारी कन्या चंद्राषष्ठी, चानन छठ मनाती हैं। मध्यप्रदेश और छत्तीसगढ़ में सगरी खोद कर यह पर्व मनाया जाता है। इस पर्व के लिए उपयोगी समस्त वस्तुएँ गाँव में उपलब्ध होती हैं। वस्तुतः यह पर्व पुत्र के प्रति माता की असीम स्नेह व आशीष की अभव्यक्ति है।

आठे

भादो कृष्ण पक्ष के आठवें दिन भगवान श्रीकृष्ण के जन्मोत्सव के रूप में यह पर्व आयोजित किया जाता है। इस दिन लोग उपवास परंपरा का पालन करते हुए धान की कोठी या दीवार पर भगवान श्रीकृष्ण का चित्र अंकित कर पूजा करते हैं। इस दिन ग्रामीण अंचल में मटकी फोड़, दही लूट जैसे मनोरंजन कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। गीतेश कुमार अमरोहित के अनुसार- ''भादो मास की अष्टमी तिथि को आठे मनाया जाता है। इस दिन उपवास रखते हैं। रसोई घर की दीवारों पर आठे कन्हैया का चित्र बनाकर पूजा करके फलाहार करते हैं। दूसरे दिन रामधुनी दल के साथ दही लूट, नारियल फेंक, राम सप्ताह झूला आदि का आयोजन किया जाता है।''[9]

पोला

यह छत्तीसगढ़ का पारंपरिक पर्व है, जिसे भादो मास की अमावस्या को मनाया जाता है। साक्ष्य तथ्य यह है कि छत्तीसगढ़ कृषि प्रदेश है और कृषि-कार्य में पशु-धन का महत्त्वपूर्ण योगदान है। इस पर्व में पशु-धन विशेषकर 'बैल' के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित किया जाता है।

इस दिन किसान कृषि-कार्य में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करने वाले 'बैलों' को हल्दी का उबटन लगाकर नहलाते हैं, उनके पूरे शरीर को सजाते हैं, सींगों पर रंग-रोगन करते हैं। साथ ही नाक में लगे नाथ (रस्सी) को निकालकर नया पहनाते हैं। गले में कौड़ी, जड़े, घण्टी आदि पहनाकर सजाते हैं। नए कपड़े से ढंक कर गुलाल, चंदन-बंदन का टीका लगाकर पूजा करते हैं। इस दिन सभी घरों में नाना प्रकार के पकवान बनते हैं, जिसमें ठेठरी, खुरमी, गुलगुला भजिया, अरसा प्रमुख हैं। पशु-धन को खीर-पूड़ी भी खिलाई जाती है। ग्रामीण अंचल में इस पर्व की विशेष धूम रहती है। इस दिन विभिन्न कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। इस पर्व के दिन बच्चों के लिए मिट्टी एवं लकड़ी से बनाई बैल, चूल्हा, चुकिया, पोरा आदि खिलौनों की पूजा किया जाता है। यह एक ऐसा पारंपरिक पर्व है, जिसके माध्यम से बच्चों को भी अपनी मिट्टी और संस्कृति से जुड़ने का शुभ अवसर प्राप्त होता है। गीतेश कुमार अमरोहित के अनुसार- ''भाद्रपद अमावस्या को मनाया जाने वाला पोरा का त्यौहार शंकर-पार्वती के प्रतीक स्वरूप बैलों की पूजा का त्यौहार है। इस दिन कृषक अपने बैलों की पूजा करते हैं और उन्हें अनेक रंगों से रंग देते हैं। बैलों की झाँकी भी निकाली जाती है। घर के आँगन को रंगोली से सजाकर उस स्थान पर मिट्टी से बने या काठ के बैलों को नए वस्त्रों में ढँका जाता है। उन्हें मिट्टी के पतीले में रखी रोटी का भोग लगाने के बाद पूजा-अर्चना की जाती है। प्रतीक पूजन के उपरांत बच्चे बैलों की झाँकी सामूहिक रूप से निकालते हैं। यह पर्व किसान और उसके मूक पशु के प्रेम का पर्व है।''[10]

यह पर्व छत्तीसगढ़ सहित अन्य राज्यों- मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र एवं कर्नाटक में भी बड़ी धूमधाम से मनाए जाते हैं, किंतु यह छत्तीसगढ़ का प्रमुख पारंपरिक पर्व है। पोला और तीजा का पर्व मनाने के लिए विवाहित माताएँ-बहनें अपने मायके जाती हैं और वहाँ माता- पिता एवं भाई के द्वारा उन्हें नए वस्त्र, साज-शृंगार, आभूषण आदि सामग्री भेंट स्वरूप दिए जाते हैं, जिसे पहनकर वे गाँव के बाहर पोला पटकने जाती हैं। इसके पीछे की मान्यता के संदर्भ में चोवाराम वर्मा 'बादल' लिखते हैं- ''ऐसी मान्यता है कि पोला को गाँव के बाहर फोड़कर वे अपने मायके के कष्टों को मिटा देती हैं। पोला पर्व के मनाने के पीछे यह भी मान्यता है कि भगवान विष्णु ने अपने कृष्णावतार के समय नटखट बाल कन्हैया के रूप में अत्याचारी कंस के भेजे पोलासुर को मारा था। यह तिथि भादो माह की अमावस्या थी। उसी के यादगार में यह पर्व धूमधाम से मनाया जाता है। एक मान्यता यह भी है कि इस तिथि को धान की फसल गर्भ धारण करती है, जिसे पोटरियाना कहते हैं। पोला पर्व के रूप में यह गर्भ धारण संस्कार उत्सव भी है।''[11]

एक अन्य साक्ष्य तथ्य यह भी है कि पोरा अर्थात् 'पोर फूटना' (पोटराना) अर्थात् धान में गर्भधारण की अवस्था 'धान' के पौधे पूर्ण रूप से परिपक्व होने पर गर्भधारण (पोटराने) की खुशी में मनाया जाने वाला त्यौहार का नाम पोरा है। पोरा के समय से ही धान गर्भित अवस्था में आता है, इसीलिए ग्रामीण अंचलों में किसान पोरा के पहली रात को गर्भही मनाते हैं और गर्भही पूजा करते हैं। यह पशुओं के प्रति, फसलों के प्रति, नारियों के प्रति अपार श्रद्धा-सम्मान भाव प्रकट करने वाला छत्तीसगढ़ का महत्त्वपूर्ण लोकपर्व है।

तीजा

यह छत्तीसगढ़ का लोकप्रिय परंपरागत पर्व है। इस पर्व में पत्नी अपने पति की लंबी आयु एवं उत्तम स्वास्थ्य की कामना करते हुए बिना अन्न एवं जल ग्रहण किए उपवास रखती है। पति-पत्नी के गहरे आत्मीय बंधन की आस्था इस पर्व में देखते बनती है। छत्तीसगढ़ में यह पर्व घर-घर प्रचलित है। भाद्र माह के अवसर पर विवाहित स्त्रियाँ अपने ससुराल से मायके जाती है और शिव-पार्वती की पूजा-अर्चना करते हुए इस पर्व को मनाती हैं।

सुहागिन महिलाएँ इस दिन पूर्ण सोलह शृंगार के साथ हाथ में मेंहदी लगाकर, हरे और लाल रंग के वस्त्र धारण करती हैं। विवाह के उपरांत प्रथम तीजा मायक में मनाने की परंपरा है। इस दिन महिलाएँ रात्रि में भजन-कीर्तन करती हैं और सुबह सूर्य भगवान को अध्य देकर ही प्रसाद ग्रहण करती है, इसे हरितालिका तीज भी कहते हैं। संजय अलंग के अनुसार- ''यह गणेश चतुर्थी के एक दिन पहले भादो शुक्ल पक्ष की तृतीया को हस्तनक्षत्र के दिन होता है। इस दिन कुमारी और सौभाग्यती महिला गौरी-शंकर की पूजा करती हैं। यह माना जाता है कि हरितालिका तीज का महत्त्व वैसा ही है जैसे करवाचौथ का, इसीलिए इसे निर्जला रखा जाना चाहिए अर्थात् पानी भी नहीं पीना चाहिए। छत्तीसगढ़ में इसी हरितालिका तीज को ही 'तीजा' के नाम से जाना-माना जाता है।''[12]

यह पर्व विशेषकर नारी-शक्ति का पर्व है, जिसे वे मायके में रहकर मनाती हैं। इस पर्व को मनाने के लिए माताएँ-बहनें द्वितीय या दूज के दिन मायके जरूर पहुँच जाती हैं। इस दिन वे कड़ु भात (करेले की सब्जी और अन्न) ग्रहण करती हैं। यह भी इस पर्व की परंपरागत पालन है। अगर किसी कारण से महिलाएँ मायके नहीं पहुँच पाती हैं, तो मायके का जल पीकर ही व्रत तोड़ती हैं। दूसरे दिन अर्थात् चतुर्थी के दिन ही अन्न ग्रहण करती हैं। चतुर्थी को ही भगवान श्रीगणेश जी का आगमन होता है। लोग जीवन में सुख-समृद्धि एवं आनंद-मंगल की कामना करते हुए गणेश जी को स्थापित करते हैं। इस पर्व के मान्यता के संदर्भ में संजय अलंग, सुमिता अलंग लिखते हैं- ''सती की मृत्यु के उपरांत पार्वती के रूप मे माँ गौरी ने शिव को पाने के लिए हिमालय में कठिन तपस्या की। महिलाएँ इसी के स्मरण में व्रत रखती हैं और गौरा के आशीर्वाद की कामना करती हैं। यह निर्जला व्रत है। इस दिन पार्वती पूजन केले के पत्तों का मण्डप बनकर किया जाता है। उसके साथ

मिट्टी का शिवलिंग भी स्थापित किया जाता है। सायं सुस्वाद भोजन का भोग नारियल के साथ लगाया जाता है।''

पीतर-पाख

इस पर्व के माध्यम से लोग अपने मृत पितरों एवं आत्मीय जनों के प्रति श्रद्धा एवं कृतज्ञता का भाव अभिव्यक्त करते हैं। यह पर्व भादो मास पूर्णिमा के अनंत चतुदर्शी के बाद से आरंभ होकर अश्विन मास की अमावस्या तक चलता है। इस पर्व में लोग अपने पूर्वजों और पितरों की आत्मतृप्ति के लिए तर्पण, पिंडदान, श्राद्ध कर्म करते हैं। ऐसा माना जाता है कि पितरों की पूजा करने से परिवार समृद्ध रहता है और वंश में वृद्धि होती है। गीतेश कुमार अमरोहित के अनुसार- ''क्वांर माह के प्रथम पक्ष में पीतर पाख बनाया जाता है, जो पैतृ पूर्वजों एवं परिवार की मृत आत्माओं को समर्पित होता है। लोग पूर्वजों की पसंद के अनुसार पकवान बनाते हैं और इस पकवानों को वे ब्राह्मणों, गायों और कौओं को खिलाते हैं। पूर्वजों की आत्मा की शांति हेतु जल स्थल पर तर्पण भी किया जाता है।''[14]

इस तरह हम इस माह-पर्व में हम अपने पितरों को याद कर उन्हें देवता के समान मानकर पूरे 15 दिवस तक श्रद्धा-सुमन अर्पित करते हैं। पीतर के अंतिम दिवस जिसे छत्तीसगढ़ी में पीतरखेदा कहते हैं, इस दिन जो गुड़, घी का हुम-धूप दिए रहते हैं, फूल अर्पित करते हैं। उसे नदी, नालों, तालाबों में विसर्जित करते हैं, उन्हें याद कर जल-तर्पण किया जाता है। इस पर्व में तीन पीढ़ी पिता पक्ष और तीन पीढ़ी माता पक्ष के लिए तर्पण किया जाता है। शास्त्र के अनुसार तीन जगहों को पिंडदान के लिए श्रेष्ठ माना गया है- गया (बिहार), ब्रह्कपाल सिद्ध (बद्रीनाथ) और हरिद्वार। कब किस उम्र के व्यक्ति का पितर कर्म करना है वह भी धर्मग्रंथों में उल्लिखित है। छत्तीसगढ़ी में पीतर के प्रथम दिवस को 'पीतरबैसकी' कहा जाता है। इस दिन दादा, बबा का पीतर मनाया जाता है, नवमी तिथि में मृत महिलाओं का पीतर मनाया जाता है, इसे 'महतारी तिथि' के नाम से भी जाना जाता है। साथ ही दुर्घटना में मृत व्यक्ति की तिथि ज्ञात नहीं रहती तो ऐसी स्थिति में उनका पीतर अमावस्या को मनाया जाता है, जिसे 'सर्वपितृमोक्ष अमावस्या' कहते हैं, जिसे छत्तीसगढ़ी में पीतरखेदा भी कहा जाता है। छत्तीसगढ़ में इस पर्व को मनाने का अपना एक अलग अंदाज है। भादो से क्वाँर तक पीतर पाख आयोजित होता है। इस दिन घर के द्वार को गोबर पानी से लिपाई करते हैं तत्पश्चात् चावल आटे का चैक पुर के उसके ऊपर पीड़ा रखा जाता है। पीड़ा के दोनों ओर-छोर एक लोटा पानी में दातुन रखा जाता है साथ ही कुम्हड़ा, तोराईपान, काशी के साथ भीगा हुआ चावल, उड़द दाल रखने की परंपरा है। तर्पण का कार्य बड़े पुत्र द्वारा किया जाता है। इस दिन घर में तोराई की सब्जी बनाई जाती है, बिना नमक के उड़द दाल का बड़ा बनाया जाता है। साथ ही इच्छानुसार अन्य व्यंजन भी बना सकते हैं। इस पर्व में तर्पण करने वाला व्यक्ति पर्व चलते तक संयम का पालन करता है, दाढ़ी-मूंछ नहीं बनवाता, नए वस्त्र खरीद कर नहीं पहनता, नए काम की शुरुआत नहीं करता, महिलाएँ नई चूड़ी नहीं पहनती। इस प्रकार छत्तीसगढ़ में पीतर देवताओं को विधि-विधान से याद किया जाता है।

नवरात्रि

संपूर्ण भारत के साथ ही छत्तीसगढ़ में भी नवरात्रि का पर्व हर्ष और आनंद के साथ मनाया जाता है। यह पर्व साल में दो बार आयोजित होता है चैत्र और क्वाँर। क्वाँर नवरात्रि में दुर्गा की प्रतिमा स्थापित कर नौ दिनों तक पूर्ण श्रद्धा से पूजा किया जाता है। सेवा-गीत गाए-बजाए जाते हैं साथ ही ज्योति-कलश और जँवारा बोने की भी प्रथा है। माँ दुर्गा के प्रतीक रूप में छत्तीसगढ़ के प्रमुख देवी स्थलों माँ दंतेश्वरी, माँ अंगारमोती, माँ बिलाईमाई, माँ महामाया, माँ शीतला, माँ खल्लारी, माँ चन्द्रहासनी, माँ बंजारी, माँ चंडीमाई की विशेष पूजा-अराधना किया जाता है। संजय त्रिपाठी एवं श्रीमती चंदन त्रिपाठी के अनुसार- ''चैत्र और अश्विन दोनों ही माहों में माँ दुर्गा के पूजा उत्सव की तरह मनाया जाता है। इस समय दंतेश्वरी, बम्बलेश्वरी, महामाया एवं अन्य शक्तिपीठों पर विशेष पूजन होता है। अश्विन नवरात्रि में माँ दुर्गा की आकर्षक एवं दिव्य प्रतिमाएँ स्थापित की जाती है।''[15] इसी प्रकार आगे माँ दुर्गा की उपासना पद्धति एवं दुर्गा प्रतिमा स्थापना के संदर्भ में गीतेश कुमार अमरोहित लिखते हैं- ''माँ दुर्गा की उपासना का पर्व चैत्र एवं क्वाँर माह में नौ दिन की अराधना के साथ मनाया जाता है। ज्योति-कलश प्रज्ज्वलित किया जाता है और जँवारा भी बोया जाता है। कई लोग नौ दिनों का व्रत भी रखते हैं। क्वाँर नवरात्रि में माँ दुर्गा की प्रतिमा की स्थापना भी की जाती है, जिसे नौंवे दिन विसर्जित कर दिया जाता है।''[16] इस पर्व में लोग विशेषकर नौ दिन तक संयमित उपवास का पालन करते हैं। नवरात्रि. के नवें दिन कन्या पूजा किया जाता है। नौ कन्याओं को पान-प्रसाद खिलाकर कुछ नए वस्त्र भेंट किए जाते हैं। दसवें दिन माँ दुर्गा और जँवारा को नदी या तालाब में विसर्जित करते हैं। इसी दसवें दिन विजयादशमी (रावण-दहन) का खेल छत्तीसगढ़ के गाँव-गाँव में हर्ष-उल्लास के साथ खेला जाता है। साथ ही छत्तीसगढ़ के शहरी इलाकों में माँ दुर्गा की झाँकियाँ निकाली जाती हैं।

दशहरा पर्व

संपूर्ण देश के साथ ही छत्तीसगढ़ राज्य में भी दशहरा का पर्व बड़े धूमधाम और हर्ष-उल्लास के साथ आयोजित होता है। यह पर्व अनीति पर नीति, बुराई पर अच्छाई का विजय के प्रतीक के रूप में मनाया जाता है। छत्तीसगढ़ के ग्रामीण अंचल में 'रावण वध' का कार्यक्रम मंचों के माध्यम से आयोजित किए जाते हैं। गीतेश कुमार अमरोहित के अनुसार- ''अच्छाई के विजय के प्रतीक के रूप में मनाया जाने वाला त्यौहार है। यह पर्व भगवान श्रीराम के विजय का प्रतीक है। इस अवसर पर शस्त्रपूजा की जाती है। रावण दहन का कार्यक्रम भी होता है। पुरुष रावण दहन कर जब घर लौटते हैं तो महिलाएँ उनकी आरती उतारकर पूजा करती है।''[17] इस असवर पर प्रमुखतः

शस्त्रपूजा रावण का अंत कार्यक्रम होता है। यह पर्व श्रीरामचन्द्र जी के विजय को सादर समर्पित है।

दीपावली पर्व

पूरे भारत देश के साथ ही छत्तीसगढ़ में भी दीपावली का पर्व एक विशिष्ट पारंपरिक पूजा पद्धति के साथ कार्तिक कृष्ण पक्ष तेरस से शुक्ल पक्ष द्वितीय तक मनाया जाता है। छत्तीसगढ़ के मैदानी भाग में दीपाावली को देवारी और बस्तर क्षेत्र में दियारी कहा जाता है। इस पर्व का आरंभ सुआ-गीत-नृत्य के साथ लगभग एक माह पूर्व आरंभ हो जाता है, किंतु देवारी का पर्व छत्तीसगढ़ में मुख्य रूप से तीन दिन तक चलता है। भुवाल सिंह ठाकुर के अनुसार- ''छत्तीसगढ़ के मैदान में दीपावली को 'देवारी' कहा जाता है और छत्तीसगढ़ के दण्डकारण्य क्षेत्र बस्तर में 'दियारी'। देवारी से आशय है लगातार तीन दिन तक चले वाला उत्सव- प्रथम दिन सुरहुती, द्वितीय दिन गोबरधन पूजा, तृतीय दिन मातर, जबकि बस्तर में तीन दिन तक चले वाली 'दियारी' में प्रथम दिन लक्ष्मी जगार, द्वितीय दिन गोवर्धन पूजा और तृतीय दिन गोठान पूजा के साथ बासी तिहार मनाई जाती है।''[18] इसी प्रकार छत्तीसगढ़ के मैदानी भाग में सुरहुति या गौरा-गौरी विवाहोत्सव जब पूरा देश इस दिन माता लक्ष्मी की पूजा कर रहे होते हैं तो उस दिन छत्तीसगढ़ के ग्रामीण अंचल में गौरी-गौरा पूजा के साथ ही माता लक्ष्मी की पूजा-अर्चना करते हैं। गौरी-गौरा पूजा छत्तीसगढ़ की विशिष्ट लोक- पारंपरिक पूजा है, जिसे विशेषकर गोंड़ एवं आदिवासी जनजाति मानते हैं, जिसमें गौरा-गौरी का जन्म, विवाहोत्सव, विसर्जन का कार्य विधि-विधान से किया जाता है।

इस लोकपर्व में महिला संगठन की विशेष भूमिका रहती है। वे गौरा-गौरी में फूल कूचर कर उन्हें जागृत करती हैं। गौरा-गौरी का निर्माण कुंवारी मिट्टी से करते हैं। उन्हें धान की बालियाँ, मेमरी, सिलयारी आदि प्राकृतिक वनस्पतियों एवं चमकीले कागजों से सजाए जाते हैं। आरंभ में इसका निर्माण दो अलग-अलग जगहों पर किया जाता है। गौरा को नदी और गौरी को केछुए पर बिठाए जाते हैं। देर रात्रि में गौरा-गौरी की बाजे-गाजे के साथ शोभा-यात्रा निकालते हैं। उन्हें एक जगह सुनिश्चित स्थान (गौरा-गौरी चैरा) में स्थापित करते हैं। सुबह होते ही गाँव-गली भ्रमण के बाद गौरा-गौरी को नदी-तालाब में विसर्जित कर दिया जाता है। इस पर्व के विधि-विधान के संदर्भ में भुवाल सिंह ठाकुर लिखते हैं- ''गौरी-गौरा लोक-उत्सव की शुरुआत से जुड़े लोकरस्म भी हैं, हर गाँव में गौरा-चैरा के पास महिलाएँ (मुख्य रूप से आदिवासी) एकत्रित होकर गड्ढे में तांबे का टुकड़ा, मुर्गी का अंडा और पाँच प्रकार के फूल को कूटकर अर्पित करती हैं तत्पश्चात् बोरझारी के काँटे गौरा चैरा को समर्पित किए जाते हैं। वे महिलाएँ टोकरी में फूल लेकर लोकगीत गाती हुई लोकनृत्य करती है, इसमें गौरा और गौरी का आह्वान किया जाता है, इस प्रक्रिया को 'फूल कुचरना' कहा जाता है।''[19] इसी प्रकार दिपावली एवं गौरा-गौरी पूजा के बाद दूसरे दिन गोबरधन पूजा का उत्सव मनाया जाता है। इसमें राउत (यादव) जाति की विशेष भूमिका रहती है, यह राउत बंधुओं को सादर समर्पित है। राउत जाति के लोग इस दिन अपने पूरे परिवार के साथ यह उत्सव लोक रीति-नीति से मानते हैं। वे इस दिन कौड़ी से सुसज्जित कपड़े पहनते हैं, हाथ में तेंदु की लाठी, मयूर पंख से बनी सोहाई धारण कर अपने मालिकों के घर जाकर आशीष देते हैं, मालिक भी उन्हें कुछ दान-दक्षिणा देते हैं-

''जइसन तुम लिहो दिही, तइसन देबो असीस। अन्नधन भंडार भरे, तुम जियो लाखों बरीस।''[20]

इस दिन किसान बंधु अपने पशुओं को खिचड़ी खिलाते हैं (नए चावल, उड़द का बड़ा, उड़द दाल कुम्हड़ा-कोचाई) शाम होते ही रावत जाति के लोग गोवर्धन पर्व विधि- विधान से मानते हुए गौ-माता के खूर (पैर) से गोबर खुदवाते हैं और उसी गोबर को वहाँ उपस्थित सभी लोग एक-दूसरे के मस्तक पर लगाते हैं। इस प्रकार गोवर्धन पूजा छत्तीसगढ़ के मैदानी भाग में संपन्न होता है। वहीं सरगुजा संभाग में इसी दिन गोवर्धन पूजा का संस्करण सोहराई पर्व मनाते हैं। छत्तीसगढ़ में गोवर्धन पूजा के बाद तीसरे दिन मातर उत्सव मनाया जाता है। यह छत्तीसगढ़ के यादव जाति का परंपरागत पर्व है, जिसमें छत्तीसगढ़ के समस्त लोग मिल-जुल कर मानते हैं। इसमें वे अपने कुलदेवता 'खोड़हर देव' की विधिवत पूजा-अर्चना करते हैं, साथ ही अपनी पारंपरिक वेशभूषा के साथ लाठी लेकर नृत्य करते हैं और मातर उत्सव अंतर्गत अखाड़े का आयोजन होता है, जिसमें वे अपने शौर्य का प्रदर्शन करते हैं इस प्रकार छत्तीसगढ़ के मैदानी भाग में दीपावली गौरा-गौरी गोवर्धन पूजा, मातर हर्ष-उल्लास के साथ प्रत्येक वर्ष संपन्न होता है।

नुआखाई

यह पर्व छत्तीसगढ़ अंचल में दो अलग-अलग तिथियों में मनाई जाती है। छत्तीसगढ़ के स्थानीय निवासी यह पर्व दशहरे के उपरांत क्वाँर माह में धान की नई फसल आने पर मनाते हैं। वहीं उड़ीसा से छत्तीसगढ़ आए लोग भादो माह के शुक्ल पक्ष गणेश चतुर्थी के तुरंत बाद यह पर्व मानते हैं, वहीं बस्तर अंचल में नए चावल का उपभोग सर्वप्रथम राजपरिवार के द्वारा किया जाता है। इस प्रकार सभी जनजातियों में सर्वप्रथम नए अन्न को आराध्य देव को समर्पित किया जाता है। इसे 'नवान्न' भी कहा जाता है। नुआखाई पर्व के संदर्भ में हरिभूमि पत्रिका, रायपुर में प्रकाशित लेख के अनुसार- ''हमारी कृषि संस्कृति और ऋषि संस्कृति पर आधारित त्यौहार नुआखाई है। इस दिन फसलों की देवी अन्नपूर्णा सहित सभी देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना की जाती है। छत्तीसगढ़ में यह पर्व दशहरा या दीवाली के आस-पास मनाया जाता है। वर्षा ऋतु के दौरान भाद्र महीने के शुक्ल पक्ष में खेतों में धान की नई फसल, विशेष रूप से जल्दी पकने वाले धान में बालियाँ आने लगती हैं, तब नई फसल के स्वागत में नुआखाई का आयोजन होता है।''[21]

जेठौनी तिहार (देवउठनी पर्व)

छत्तीसगढ़ में मातर महोत्सव के बाद जेठौनी तिहार तुलसी पूजा के रूप में कार्तिक शुक्ल पक्ष को मनाया जाता है। इस दिन माता तुलसी एवं गोधन का विधिवत पूजा- याचना किया जाता है। छत्तीसगढ़ में तुलसी की महत्ता पर रीझे यादव 'दक्षिण कोसल टुडे' में लिखते हैं- ''छत्तीसगढ़ के लोकजीवन में तुलसी व्यापक रूप में समाहित है। छत्तीसगढ़ के प्रायः हर घर में 'तुलसी चैरा' मिलता है, जहाँ नित्य दीपक जलाया जाता है, मरणासन्न व्यक्ति को गंगाजल के साथ तुलसी जल पिलाया जाता है। छत्तीसगढ़ में मितान बदने की परंपरा में 'तुलसी जल' भी बदा जाता है। जब दो मितान तुलसी जल के बंधन में बँध जाते हैं तो परस्पर भेंट के समय सीताराम 'तुलसीजल' कहकर एक-दूसरे का अभिवादन करते हैं।''[22] छत्तीसगढ़ में इस पर्व के दिन माता तुलसी और भगवान शालिग्राम का विवाहोत्सव मनाया जाता है। इस पर्व को तुलसी विवाह के नाम से भी जाना जाता है। इस दिन माता तुलसी की विशेष विधिवत पूजा-अर्चना किया जाता है, उन्हें नए वस्त्र और शृंगार भेंट किए जाते हैं साथ ही प्रसाद-भोग के रूप में तिवड़ा, चने की भाजी, कंदमूल अमरूद अन्य मौसमी फलों को चढ़ाया जाता है, इस दिन गन्ने का प्रयोग भी पूजा के समय विशेष रूप से किया जाता है। इस दिन से विवाह योग्य युवक-युवतियों के लिए शुभ मूहूर्त्त प्रारंभ होता है। जेठौनी के दिन राउत जाति की महिलाएँ पशु-पालकों, किसानों के घर उनके धान की कोठी व अन्य पशु कोठार के दीवार पर पारंपरिक चित्र अंकित करती हैं, जिसे 'हाथा देना' भी कहा जाता है। जब राउत (चरवाहा) अपने मालिकों-किसानों के घर पशुओं को सुहाई बाँधने जाते हैं। उस समय दोहा पारकर धान में गोबर लपेट कर उस पारंपरिक चित्र के ऊपर थोपते हैं और मालिकों को आशीष देते हैं कि आपके अन्न का भंडार सदैव भरा रहे और पशु-मालिक अन्न, वस्त्र, पैसा भेंट करते हैं। जेठौनी के दिन ही घर में रखे पुराने टूटे-फूटे टोकनी-चरिहा को जलाते हैं। लोग मानते हैं कि ऐसा करने से घर की समस्त परेशानियाँ, दुःख कट जाते हैं, एकादशी से ही सभी मांगलिक कार्य विशेष मुहूर्त में संपन्न होता है।

छेरछेरा पर्व

छत्तीसगढ़ के ग्रामीण अंचल में पौष माह के पूर्णिमा के दिन छेरछेरा तिहार मनाया जाता है। इसे छेरछेरा पुन्नी भी कहा जाता है। यह किसानों की उपज (धान) का घर आने की प्रसन्नता का पर्व है। इस दिन ग्रामीण अंचल में बच्चों और जवानों के द्वारा घरों-घर जाकर गीत गाकर बाजा-बजा कर अन्न दान माँगने की परंपरा है- ''छेरीक छेरा छेर बरतनीन', 'छेर छेरा माई कोठी के धान ला हेर हेरा' और 'अरन बरन कोदो करन जभ्भे देबे तभ्भे हटन'।''[23] एक अन्य उदाहरण दृष्टव्य है-

''तारा रे तारा लोहार घर तारा लउहा लउहा बिदा करब जाबो अपने पारा छेरा छेरा छेरछेरा माई केठी के धान ला हेर हेरा।''[24]

इस प्रकार छेरछेरा पर्व छत्तीसगढ़ का लोकोत्सव है, जिसे संपूर्ण छत्तीसगढ़ मनाता है।

होली पर्व

पूरे देश्वासियों के साथ ही छत्तीसगढ़ के मैदानी क्षेत्र में होली का पर्व हर्ष- उल्लास के साथ प्रत्येक वर्ष मनाया जाता है। यह पर्व फागुन माह में मनाया जाने वाला परंपरागत पर्व है, जिसमें एक दिन पूर्व संध्या में होलिका दहन का कार्यक्रम होता है और दूसरे दिन लोग एक-दूसरे को रंग-गुलाल लगाकर होली की बधाई एवं शुभकामनाएँ देते हैं। छत्तीसगढ़ के होली उत्सव पर गीतेश कुमार अमरोही लिखते हैं- ''बसंत पंचमी के दिन एक निश्चित स्थान पर एरंड का वृक्ष लगाकर उसके बाद लकड़ियाँ एकत्रित करने का काम प्रारंभ हो जाता है। फाल्गुन मास की अमावस्या को होली का त्यौहार मनाया जाता है। इसी दिन की पहली रात्रि को एकत्रित किए लकड़ी का होलिका दहन कर दिया जाता है। दूसरे दिन रंग-गुलाल खेला जाता है।''[25] छत्तीसगढ़ में सभी जाति-वर्ग के लोग इस पर्व में एक साथ एक-दूसरे पर गुलाल लगाकर भाईचारे होने का संकेत देते हैं, हर्ष-उल्लास के साथ होली पर्व मनाते हैं।

रामनवमी पर्व

यह चैत्र मास के शुक्ल पक्ष में नवमी तिथि को मनाई जाती है। सनातन धर्म में इस दिन का बहुत ही महत्त्व है। इसी दिन चैत्र नवरात्र का समापन होता है। भगवान श्री रामचन्द्र जी को विष्णु का सातवां अवतार माना गया है। न्याय, नीति, धर्म की रक्षा, अनीति का नाश करने के लिए राजा दशरथ के घर रामजी का जन्म पुत्र के रूप में इसी तिथि को हुआ था। इसलिए पूरा भारतवर्ष और छत्तीसगढ़ के मैदानी भाग में इस दिन को रामनवमी पर्व के रूप में मनाते हैं। भगवान रामचन्द्र जी की मूर्ति स्थापित कर शोभा-यात्रा निकाला जाता है, साथ ही विधिवत पूजा- याचना किया जाता है।

अंततः हम कह सकते हैं कि छत्तीसगढ़ गाँवों का प्रदेश है, गाँव की मिट्टी यहाँ की रीति-नीति, लोक-मान्यताएँ छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक धरोहर हैं। छत्तीसगढ़ का लोकपर्व, देवी-देवताओं की पारंपरिक पूजा-पद्धति अधिकांश कृषि एवं जाति आधारित है, किंतु यहाँ के पर्व-उत्सव में समुचित जाति, वर्ग के लोग मिल-जुल कर आयोजित पर्व में सहयोग करते हैं। यहाँ की लोक-संस्कृति, तीज-त्यौहार लोक-जीवन का स्रोत हैं। यहाँ के अंचल निवासी सांस्कृतिक परंपराओं, विचारधाराओं को अपने हृदय में बसाए हुए हैं। यही सब कारणों से छत्तीसगढ़ लोकांचल की अपनी एक विशिष्ट पहचान है, जो कि अन्य राज्यों से भिन्न हैं। यहाँ के लोगों में अपनी मिट्टी और संस्कृति के प्रति अटूट श्रद्धा है और यही छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक धरोहर है, जिसकी गौरव-गाथा असीम है।

अक्षय तृतीया (अक्ती, पुतरा-पुतरी विवाह)

पूरे भारतवर्ष में अक्षय तृतीया के पर्व को परशुराम जयंती के रूप में मनाई जाती है, किंतु छत्तीसगढ़ राज्य में अक्षय तृतीया को एक विशिष्ट पर्व जिसे अक्ती, पुतरा- पुतरी विवाह के नाम से जाना जाता है। इस दिन को छत्तीसगढ़ में किसान जीवन का आरंभिक पर्व कहें तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। कृषि-कार्य की दृष्टि से इसे नववर्ष का आरंभ माना जाता है। यह लोकपर्व बैसाख शुक्ल पक्ष की तीज को मनाया जाता है। इस पर्व की महत्ता पर गीतेश कुमारा अमरोहित लिखते हैं- ''छत्तीसगढ़ में यह कृषि आधारित त्यौहार है। छत्तीसगढ़ अंचल में मिट्टी से बने पुतरा-पुतरी का विवाह संपन्न कराया जाता है। इस विवाह में पूरे गाँव के लोग शामिल होते हैं। किसान इसी दिन खेत की पूजा कर अगले दिन से कृषि-कार्य शुभारंभ कर देते हैं। खेत की पूजा भी विशेष पद्धति से की जाती है। खेत की थोड़ी सी जमीन को कुदाली से खोदकर उसमें धान बो दिया जाता है। नारियल फोड़कर विधिवत पूजा संपन्न की जाती है।''

इस दिन घर के बड़े बुजुर्ग करसा में पानी भरकर उसमें नीम की डाली डालकर माता देवाला में चढ़ाते हैं, ग्रामीण अंचल में निवासरत सभी जाति के लोग अपने देवी-देवताओं पर जल अर्पित कर घर-परिवार में सुख-समृद्धि के लिए पूजा-याचना करते हैं। अक्ती के दिन से ही लोग करसा के पानी का उपभोग करते हैं। इस दिन गाँव का 'कोतवाल' मुनादी करता है - ठाकुरदेव में महुआ के दोने में कोठी से धान निकाल कर बैगा के माध्यम से चढ़ाते हैं, बैगा के द्वारा चढ़ाए गए धान को धरती में बिखेर कर उस पर हल चलाया जाता है, साथ ही पानी सींचा जाता है, फिर बचत धान को किसान दोने में भरकर ले आते हैं और कुदाल के माध्यम से खेत में छिड़क देते हैं। प्रतीकात्मक रूप से इस प्रक्रिया को कृषि-कार्य और किसानों का नववर्ष आरंभ कहा जा सकता है।

छत्तीसगढ़ में इस दिन मालिक लोग (बड़े किसान) जिनके घर अधिक खेती-बाड़ी रहता है वे 'सोंझिया' रखते हैं। उन्हें चोंगी-बीड़ी माखुर देते हैं। इसी दिन से वह अपने मालिक के सुख-दुःख का साथी बन जाता है। अपने मालिक के प्रति स्वामिभक्ति का परिचय देता है। इसी अक्ती पर्व में 'पुतरा-पुतरी' विवाह का खेल बच्चों व गाँव की महिलाओं के द्वारा खेला जाता है। विवाह पूर्णता पारंपरिक तौर-तरीकों से मनाया जाता है। साथ ही विवाह के लिए देवलग्न एवं करसा विवाह के लिए इस अक्ती लग्न को शुभ माना जाता है। छत्तीसगढ़ में अधिकतर विवाह इसी लग्न में संपन्न होता है। इस प्रकार छत्तीसगढ़ अंचल में अक्ती पर्व (अक्षय तृतीया) मनाने का अपना एक अलग अंदाज है जो छत्तीसगढ़ की विशिष्टता का प्रतीक है।

संदर्भ ग्रंथ-सूची

1 .त्रिपाठी, संजय. छत्तीसगढ़ सृहद संदर्भ; पृ. 346.
2. वर्मा, भगवान सिंह. छत्तीसगढ़ का इतिहास. मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, 2003, पृ. 324.
3. त्रिपाठी, संजय. छत्तीसगढ़ सृहद संदर्भ; पृ. 365.
4. From m-hindi sebdunia.com – delhi.
5. हरिभूमि (पत्रिका). बुधवार 18 अगस्त 2021, रायपुर, चैपाल, रंग छत्तीसगढ़ के पृ. 4.
6. वही; पृ. 4.
7. हरिभूमि (पत्रिका). गुरुवार 26 अगस्त 2021, रायपुर, पृ. 10.
8. गिनौरे, रविन्द्र. दक्षिण कोसल डुटे. अनमोल, जैव विविधता को संजोता पर्व हलछठ, 28 अगस्त, 2021.
9. अमरोहित, गीतेश कुमार. छत्तीसगढ़ कला एवं संस्कृति. भिलाई: सरस्वती बुक, 2021, पृ. 244.
10. अमरोहित, गीतेश कुमार. छत्तीसगढ़ कला एवं संस्कृति. भिलाई: सरस्वती बुक, 2021, पृ. 246-247.
11. वर्मा, चोवाराम 'बादल'. दक्षिण कोसल टुडे: गोधन के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने का पर्व पोला तिहार. 2021.
12. अलंग, संजय. अलंग सुनिता. छत्तीसगढ़: त्यौहार और उत्सव, मानस पब्लिकेशंस, इलाहाबाद, 2016, पृ. 57.
13. अलंग, संजय. अलंग सुनिता. छत्तीसगढ़: इतिहास और संस्कृति, अनामिका प्रकाशन, इलाहाबाद, 2014, पृ. 58.
14. वही; पृ 244.
15. त्रिपाठी, संजय. छत्तीसगढ़ सृहद संदर्भ; पृ. 368.
16. अमरोहित, गीतेश कुमार. छत्तीसगढ़ कला एवं संस्कृति. भिलाई: सरस्वती बुक, 2021, पृ. 252.
17. वही; पृ. 251-252.
18. साहित्य अमृत (मासिक पत्रिका). नई दिल्ली, नवम्बर 2020, पृ. 72.
19. वही, पृ. 75.
20. वही, पृ. 75.
21. हरिभूमि (पत्रिका). चैपाल: रंग छत्तीसगढ़ के. बुधवार 29 सितम्बर, 2021, रायपुर, पृ. 4.
22. यादव, रीझे. दक्षिण कोसल टुडे; 25 नवम्बर 2020.
23. अलंग, संजय. अलंग सुनिता. छत्तीसगढ़: त्यौहार और उत्सव, मानस पब्लिकेशंस, इलाहाबाद, 2016, पृ. 20.
24. वही; पृ. 20.
25. अमरोहित, गीतेश कुमार. छत्तीसगढ़ कला एवं संस्कृति. भिलाई: सरस्वती बुक, 2021, पृ. 248.
26. वही; पृ. 251.

❖

C/o चंद्रकुमार साहू
ग्राम- मौरिखुर्द, पोस्ट- भैंसमुंडी, तहसील-कुरुड, जिला- धमतरी
छत्तीसगढ़, पिन 493663 मो. 9302148050
ईमेल – chunnisahu92@gmail.com

नई शिक्षानीति: विद्यालयी शिक्षा में संभावनाएँ और चुनौतियाँ

शीतल चौधरी

हम प्रत्येक चार साल बाद ओलंपिक्स में देश से कुछ अधिक की मांग करते हैं परन्तु आज भी विद्यालयों में खेल, कला या अन्य गतिविधियों को एक्स्ट्रा- करिकुलर के रूप में ही स्थान देते आए हैं। नई नीति कला समन्वय और खेल समन्वय को क्रॉस-करीकुलर मानने की सराहनीय पहल करती है। इसी तरह कला मानविकी और विज्ञान जैसी श्रेणियाँ अब नहीं होंगी जिससे उम्र के प्रत्येक पड़ाव पर क्या रुचिपूर्ण और आवश्यक है और क्या नहीं, यह स्कूल के पूरे पाठ्यक्रम में शामिल हो सके। इस तरह के प्रयासों से कहीं न कहीं छात्रों के बीच विषयों को लेकर जो हीनभावना पनपती थी वह भी टूटेगी।

शिक्षा मानव की सर्वोत्तम संभावनाओं को तलाशने का माध्यम है। शिक्षा एक सम और न्यायपूर्ण समाज पर आधारित राष्ट्र निर्माण का पथ प्रशस्त करने का मूलभूत आधार भी है। किसी भी देश की दशा और दिशा तय करने में उस देश की शिक्षा नीति की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। यह एक ऐसा दस्तावेज़ है जो भविष्य में एक देश को प्रत्येक क्षेत्र में पहली पंक्ति में खड़ा कर सकता है क्योंकि हर क्षेत्र की प्रगति शिक्षा के विभिन्न पहलुओं से जुड़ी होती है।

34 वर्षों बाद आई यह भारतीय शिक्षा नीति 21वीं सदी की पहली शिक्षा नीति है। यह नए समय की नई मांग को ध्यान में रखकर बनाई गई शिक्षा नीति है। प्राचीन भारतीय ज्ञान और विचार की समृद्ध विरासत ने इस नीति के लिए प्रकाश पुंज की भांति कार्य किया है। ज्ञान, प्रज्ञा और सत्य भारतीय दर्शन में प्रारंभ से ही मानव के सर्वोच्च लक्ष्य माने गए हैं। भारतीय परंपरा में 'केवल ज्ञान प्राप्ति' को जीवन की तैयारी के रूप में न देखकर स्व-आत्मसातीकरण और स्वयं को जानने के रूप में देखा गया है।

विश्व स्तरीय प्राचीन भारतीय संस्थानों तक्षशिला, नालंदा, विक्रमशिला, वल्लभी ने अंतर-अनुशासनात्मक शिक्षण और शोध के सर्वोच्च मानकों को स्थापित कर विश्व भर के शोधार्थियों का पथ प्रदर्शन किया। चरक, सुश्रुत, आर्यभट्ट, वराहमिहिर, भास्कराचार्य, ब्रह्मगुप्त, चाणक्य, चक्रपाणीदत्त, माधव, पाणिनि, पतंजलि, नागार्जुन, गौतम, पिंगल, शंकरदेव, मैत्रेयी, गार्गी, और तिरुवल्लुवर आदि जैसे अनेक विद्वान भारतीय शिक्षा पद्धति की ही देन हैं। इन सभी ने विभिन्न क्षेत्रों में विश्व में अतुलनीय योगदान किया है। इस विश्व विरासत की लेगेसी को ही हमें आगे इस नई शिक्षा नीति के माध्यम से ले जाना है।

शिक्षा आर्थिक और सामाजिक गतिशीलता, समावेशन और समानता को प्राप्त करने का एक सर्वोत्तम उपकरण है। नई शिक्षा नीति को ऐतिहासिक रूप से हाशिए पर स्थित लोग और वंचित समूहों को हर संभव प्रयास कर गुणवत्तापूर्ण शिक्षा देनी ही है। भारत वैश्विक स्तर पर संयुक्त राष्ट्र द्वारा संकल्पित 17 सतत विकास लक्ष्यों के प्रति संकल्पबद्ध है। इन लक्ष्यों को सभी देशों को 2030 तक प्राप्त करना है। नई शिक्षा नीति सतत विकास लक्ष्य के लक्ष्य संख्या 4 को प्राप्त करने के लिए सभी के लिए समावेशी और समान गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की बात करती है। इसके साथ ही नई शिक्षा नीति पुरानी नीतियों के अधूरे लक्ष्यों को भी पूरा करने हेतु प्रतिबद्ध है।

शिक्षा व्यवस्था का उद्देश्य बेहतर इंसान बनाना होता है जो विचार और क्रिया से तार्किक, सहानुभूति और दया भाव, साहस और धैर्य भाव, वैज्ञानिक दृष्टिकोण और सृजनात्मक कल्पनाशीलता के साथ ही आदर्शों और मूल्यों से लबरेज़ हो। एक बेहतर शैक्षिक संस्था वह होती है जिसमें हर विद्यार्थी को अपनत्व महसूस हो सके, जहाँ वह सुरक्षित

महसूस कर सके, एक ऐसा भयमुक्त वातावरण हो जहाँ वह सीख सके।

नई शिक्षा नीति में वर्णित है कि 85% मस्तिष्क का विकास 6 वर्ष की अवस्था से पूर्व ही हो जाता है। प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) के गठन से सामाजिक और आर्थिक रूप से वंचित करोड़ों बच्चों को शैक्षिक प्रणाली में भागीदारी और समान अवसर सुनिश्चित किए जा सकते हैं। इस नीति में ईसीसीई की सार्वभौमिक पहुँच के लिए आंगनवाड़ी केन्द्रों को सशक्त बनाने का प्रावधान भी किया गया है। 5 वर्ष की आयु से पहले हर बच्चा एक प्रारम्भिक कक्षा या 'बालवाटिका' में स्थानांतरित हो जायेगा।

बहुत सारे शोधों से यह बात बिलकुल स्पष्ट हो चुकी है मध्याह्न भोजन योजना ने स्कूल में नामांकन बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है। भूख से जूझ रहा बच्चा न तो स्कूल आने के बारे में सोच सकता है और न ही गुणवत्तापूर्ण पढ़ सकता है। ऐसे में मध्याह्न भोजन योजना के महत्त्व को समझते हुए इसे नई नीति में 'तैयारी कक्षाओं' तक भी विस्तृत करने का प्रावधान सराहनीय कदम है।

कोरोनाकाल में बच्चों तक ऑनलाइन कक्षाओं की पहुँच सुनिश्चित करना एक सबसे बड़ी चुनौती रही। ऐसे में हम आदिवासी बहुल क्षेत्रों में शिक्षा की पहुँच के विषय में सोचें भी तो इस चुनौती की गंभीरता अत्यंत व्यापक हो जाती है। नई नीति ईसीसीई को इन क्षेत्रों की आश्रमशालाओं में भी चरणबद्ध तरीके से प्रारम्भ करने को प्रस्तावित करती है।

बुनियादी साक्षरता एवं संख्या ज्ञान को प्राप्त करने के लिए नीति एक राष्ट्रीय अभियान चलाने का प्रावधान करती हैं परन्तु पूर्व में भी इस तरह के अभियान पूरी तरह सफल नहीं हो पाए हैं और यह और भी चुनौतीपूर्ण है क्योंकि सरकारी और गैर सरकारी संगठनों का कहना है कि प्राथमिक विद्यालय में 5 करोड़ से अधिक बच्चा ऐसा है जिसने बुनियादी साक्षरता ज्ञान और संख्या ज्ञान नहीं सीखा है। प्राथमिक स्तर पर इस तरह की चुनौती से यदि नहीं निपटा गया तो यह आगे की शिक्षा को गंभीर रूप से प्रभावित करेगा। इसके लिए राष्ट्रीय अभियान की क्रियान्वयन योजना का सफल होना अत्यंत आवश्यक रहेगा।

शिक्षा नीति इस उद्देश्य की प्राप्ति के सफल क्रियान्वयन के लिए रिक्त पदों को जल्दी और समयबद्ध तरीके से भरने की वकालत करती है। यहाँ भी यह देखना होगा कि रिक्त पदों को भरने में राज्य सरकारें चुनावी वर्ष को एजेंडा बनाकर काम न करें। शिक्षकों को आज के समय की ज़रूरत के हिसाब से तकनीकी ज्ञान से जोड़ने के लिए जो प्लेटफार्म बनाया गया है- 'द डिजिटल इन्फ्रास्ट्रक्चर फॉर नोलेज शेयरिंग (दीक्षा)', यह एक बेहतर पहल है परन्तु इसे विद्यालय समय के साथ-साथ करने की बाध्यता उबाऊ और बोझिल बना सकती है तथा उद्देश्य की पूर्ति में यह बाधक बन सकता है।

सार्वभौमिक शिक्षा के लक्ष्यों में सबसे बड़ी बाधा है कि कक्षा छठीं से आठवीं तक का सकल नामांकन 90.9% है परन्तु बारहवीं कक्षा तक आते-आते यह 56.5% ही रह जाता है। इन ड्रॉप-आउट बच्चों को वापस लाने के हर संभव प्रयासों के साथ ही व्यावसायिक शिक्षा तथा उसके रोजगारपरक पहलुओं पर अधिक बल देना होगा क्योंकि यह भी कटु सत्य ही है कि आवश्यकता अनुसार हमारी शिक्षा रोजगार देने में समर्थ नहीं है। कन्या विद्यार्थी की सुरक्षा के साथ-साथ टॉयलेट, सेनेटरी पैड तथा स्वच्छता आदि की व्यवस्था बच्चियों को ड्रॉपआउट होने से रोक सकती है।

सभ्य समाज के समक्ष एक गंभीर चुनौती यह भी है कि आज का बच्चा पढने में उतना आनंद नहीं लेता। स्मार्टफोन, सोशल मीडिया और वीडियो गेम इत्यादि साधनों के कारण पुस्तकों से उसका मोह भंग होने लगता है। नई शिक्षा नीति स्कूली पाठ्यक्रम विकास की विभिन्न अवस्थाओं के अनुसार शिक्षार्थी की रुचियों और जरूरतों पर ध्यान देने की बात करती है। शिक्षा को रोचक बनाने के लिए खेल और तकनीक से जोड़कर पढ़ाने पर बल देती है। यदि इसका सफल क्रियान्वयन हो जाता है तो यह काफी बड़े बदलाव ला पाएगी।

हम प्रत्येक चार साल बाद ओलंपिक्स में देश से कुछ अधिक की मांग करते हैं परन्तु आज भी विद्यालयों में खेल, कला या अन्य गतिविधियों को एक्स्ट्रा- करिकुलर के रूप में ही स्थान देते आए हैं। नई नीति कला समन्वय और खेल समन्वय को क्रॉस-करीकुलर मानने की सराहनीय पहल करती है। इसी तरह कला मानविकी और विज्ञान जैसी श्रेणियाँ अब नहीं होंगी जिससे उम्र के प्रत्येक पड़ाव पर क्या रुचिपूर्ण और आवश्यक है और क्या नहीं, यह स्कूल के पूरे पाठ्यक्रम में शामिल हो सके। इस तरह के प्रयासों से कहीं न कहीं छात्रों के बीच विषयों को लेकर जो हीनभावना पनपती थी वह भी टूटेगी।

शिक्षक का वर्तमान बच्चों का ही नहीं वरन देश के भविष्य का निर्माण भी करता है। नई शिक्षा नीति के क्रियान्वयन में शिक्षक समाज एक आधार स्तम्भ की भूमिका का निर्वहन करेगा। समय की आवश्यकता है कि हम न केवल अपने शिक्षकों को 21वीं सदी के छात्रों को कुशल नागरिक बनाने के लिए प्रशिक्षित करें साथ ही शिक्षकों को अन्य कार्यभार से मुक्त रखकर ऐसे वातावरण का सृजन करें जहाँ छात्र और शिक्षक एक खुशनुमा माहौल में ज्ञान का आदान-प्रदान कर सकें।

❖

डी-22, गली नं.8, लक्ष्मी पब्लिक स्कूल के नजदीक, पूर्वी गोकुलपुर,
दिल्ली-110094 मो. 9899087915

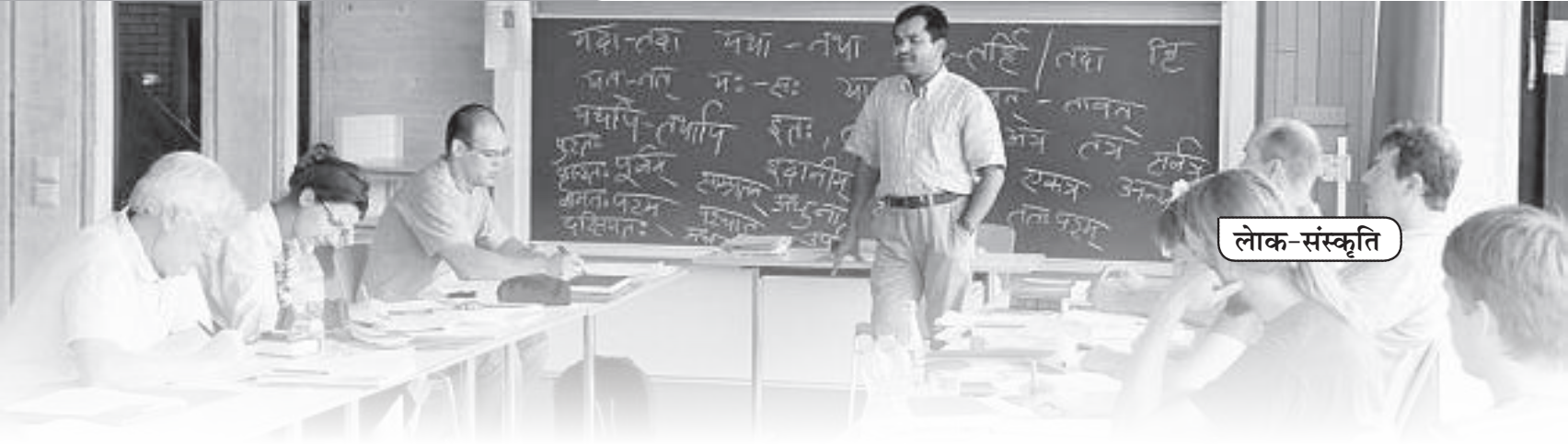

जर्मनी में हिंदी भाषा का अध्यापन

सुशील शर्मा 'हक़'

इस कार्यक्रम में मेरे हिंदी पढ़नेवाले जर्मन विद्यार्थियों ने और भारतीय परिवार के उन बच्चों ने हिस्सा लिया जो जर्मनी में पैदा हुए और यहीं पले बड़े-बड़े। मेरे ये जर्मन विद्यार्थी Volkshochschule Berlin से थे। ये स्कूल जर्मनी में कम फ़ीस में उन लोगों के लिए चलाए जाते हैं जो किसी भी उम्र में कुछ विषयों में योग्यता प्राप्त कर सकते हैं। मुझे ऐसे ही एक स्कूल में हिंदी पढ़ाने का मौका मिला था। इन्होंने मंच पर " मेरा जूता है जापानी " गाया। मेरी एक छात्रा वेरेना ने अपनी पसंद का गाना "तारे जमीं पर" गाया। नवेता चोपड़ा ने जो जर्मनी में ही पैदा हुई हैं इस कार्यक्रम का संचालन किया। उनकी हिंदी भाषा के ज्ञान से सभी अचम्भित थे। उन्होंने बाद में भरतीय राजदूतावास द्वारा आयोजित हिंदी की परीक्षाओं में भी सफलता प्राप्त की। सायशा बाला ने कविता

जर्मनी पहुँचना

विभाजित जर्मनी के पश्चिमी हिस्से में सन उन्नीस सौ छियासठ ग्यारह फरवरी को आना हुआ। यहाँ भी विभिन्न समाजसेवी संस्थाओं में कार्यरत रही। जर्मन आकाशवाणी डॉइचे वैले के हिंदी कार्यक्रम से लगभग डेढ़ सौ स्वरचित रचनाएँ प्रसारित की गईं। तीन वर्ष तक उद्घोषिका और सम्पादिका का कार्यभार भी संभाला। इस दौरान संस्कृत ड्रामा "अभिज्ञान शाकुंतलम" के संस्कृत भाषा के प्रसारण में भूमिका निभाई। एक वर्ष तक मेरे लिखे हुए रेडियो ड्रामा "आदम और बानो" का प्रसारण सीरियल के रूप में किया गया जो भारत से नए नए जर्मनी आए हुए युगल के अनुभवों पर आधारित था। श्रोताओं से इसे बहुत सराहना मिली। डोइचे वैले के कार्यकाल के बाद पुनः समाजसेवा के क्षेत्र में जर्मनी की सरकारी संस्थाओं में ही कार्यरत रही। हिंदी में लिखे हुए मेरे लेख नवभारत टाइम्स और "कुतुबनुमा" पत्रिका में छपते रहे। इस बीच जर्मन भाषा में मेरे लेख जर्मन पत्रिकाओं और अख़बारों में भी छपने लगे। उल्लेखनीय पत्रिका "Meine Welt" "मेरी दुनिया" है। इसमें समस्त जर्मनी में बसे बीस भारतियों को चुना गया और मेरी जीवनी को भी छापा गया।

2.

बर्लिन में मेरा आना

विभाजित बर्लिन के पश्चिमी हिस्से में मेरा आना सन उन्नीस सौ अठहत्तर में हुआ। यहाँ एक संथा " भारत मजलिस" के नाम से थी। योरोप की यह पहली भारतीय संस्था है। इस संस्था की तरफ से प्रति वर्ष एक सांस्कृतिक सप्ताह का आयोजन किया जाता था जिसमें भारत से आए प्रसिद्ध कलाकार अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन करते थे। सभी कलाकारों का उल्लेख कर पाना असम्भव है। फिर भी पंडित रवि शंकर, बिरजू महराज, गोपीकृष्ण, आशा पारेख, चौरसियाजी, संयुक्ता पाणिग्रही, सुनयना, हज़ारीलाल जैसे उच्चकोटि के कलाकरों का आना इस सप्ताह में हुआ करता था। इस सप्ताह के कार्यक्रम के लिए जो पत्रिका छपती थी उसमें पण्डित जवाहरलाल नेहरू और बाद में इंदिरागाँधी के सन्देश भी छपे हैं। इस पत्रिका में भारत से और जर्मनी से आए विज्ञापन छपते थे जिससे आयोजन का खर्चा चलता था। कार्यक्रम से पहले प्रेस कॉन्फ्रेंस की जाती थी जिससे जर्मनी में बसे भारत प्रेमियों तक सन्देश पहुँचता था। जर्मनी के सभी हिस्सों से लोग टिकट खरीद कर आया करते थे। वर्षों तक यह कार्यक्रम बर्लिन के एशियन संग्रहालय में हुआ करता था, जहाँ एक पूरा विभाग भारतीय कलाकृतियों को समर्पित किया गया था। भारत मजलिस संस्था के इन कार्यक्रमों से प्रभावित होकार सन उन्नीस सौ पिच्यासी में मैंने इस संस्था के प्रेसीडेंट पद के लिए चुनाव लड़ा और जीत हासिल की।

'गगनांचल' पत्रिका हमारी संस्था में आती थी और इस पत्रिका से मेरा परिचय १९८५ में ही हुआ। पत्रिका की भाषा और इसमें छपनेवाली सामग्री ने मुझे बहुत प्रभावित किया। बाद में कन्हैयालाल नंदन जो इस पत्रिका के सम्पादक थे उनसे जानपहचान हुई और जब उनका बर्लिन आना हुआ तो साक्षात्कार भी। नंदजी पर प्रकाशित पुस्तक " बेचैन रूह का परिंदा " का सम्पादन मेरी मित्रा राजम पिल्लै

ने किया है जिन्हे आई.सी. सी.आर द्वारा हिंदी दिवस के बर्लिन के राजदूतावास के सांस्कृतिक विभाग से आयोजित कार्यक्रम में भी बुलाया गया था।

हिंदी दिवस के कार्यक्रम में मेरे विद्यार्थियों का अभिनय।

इस कार्यक्रम में मेरे हिंदी पढ़नेवाले जर्मन विद्यार्थियों ने और भारतीय परिवार के उन बच्चों ने हिस्सा लिया जो जर्मनी में पैदा हुए और यहीं पले बढ़े। मेरे ये जर्मन विद्यार्थी Volkshochschule Berlin से थे। ये स्कूल जर्मनी में कम फ़ीस में उन लोगों के लिए चलाए जाते हैं जो किसी भी उम्र में कुछ विषयों में योग्यता प्राप्त कर सकते हैं। मुझे ऐसे ही एक स्कूल में हिंदी पढ़ाने का मौका मिला था। इन्होने मंच पर "मेरा जूता है जापानी" गाया। मेरी एक छात्रा वेरेना ने अपनी पसंद का गाना "तारे जमीं पर" गाया। नवेता चोपड़ा ने जो जर्मनी में ही पैदा हुई हैं इस कार्यक्रम का संचालन किया। उनकी हिंदी भाषा के ज्ञान से सभी अचम्भित थे। उन्होंने बाद में भरतीय राजदूतावास द्वारा आयोजित हिंदी की परीक्षाओं में भी सफलता प्राप्त की। सायशा बाला ने कविता पढ़ी " हिम्मत करनेवालों की हार नहीं होती "। केनेडी स्कूल के क्षात्रों ने "बिल्ली चली प्रयाग नहाने " नाटिका प्रस्तुत की।

3.

हिंदी पढ़ाने के अनुभव

वास्तव में देखा जाए तो हिंदी पढ़ाने का मेरा अनुभव बहुत रोमांचक नहीं रहा। समाजसेविका की सरकारी नौकरी से सन् १९९९ में अवकाश प्राप्त हुआ और हिंदी भाषा पढ़ाने की नियुक्तियों की मानों बाढ़-सी आ गई। इसका एक कारण यह भी था कि यहाँ हिंदी भाषी और इस भाषा का अध्ययन किये हुए लोगों की संख्या बहुत कम थी। जर्मनी में धारणा यह भी थी कि भारत से आनेवाला हर व्यक्ति हिंदी और अंग्रेज़ी भाषा का ज्ञान रखता है। अंग्रेज़ी भाषा में कोई विशेष योग्यता नहीं रखने पर भी व्यावसायिक प्रशिक्षण स्कूल में मुझे प्राध्यापिका का कार्यभार इसलिए सौंपा गया क्योंकि जिस छोटे शहर में मैं रह रही थी वहाँ कोई अंग्रेज़ी भाषा का जानकार नहीं था। बहरहाल अवकाश प्राप्ति के बाद मुझे फौरन बर्लिन की फ्राये युनिवर्सिटी के इंडोलॉजी विभाग में हिंदी पढ़ाने का बिना वेतन का कार्यभार मिला। यहाँ प्रोफेसर नेस्पिटताल हिंदी पढ़ाते थे। आपने हिंदी भाषा की सहायक क्रियाओं पर ग्रंथ लिखे हैं और इन्हें पद्मभूषण पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया था। भारत और योरोप की कई भाषाओँ का उन्हें गूढ़ ज्ञान था। उन्हें हिंदी, गुजराती, मराठी और पंजाबी भाषा की व्याकरण में भी महारथ हासिल थी। मेरी हिंदी भाषा के शुद्ध उच्चारण की वे बहुत तारीफ करते थे। मुझे उन विद्यार्थियों को पढ़ाने का अवसर मिला जो कई सत्र हिंदी पढ़ चुके थे। विद्यार्थियों के साथ मिल कर हमने चुनाव किया मुंशी प्रेमचंद की कहानियों और रवीन्द्रनाथ टैगोर की जीवनी के बारे में पढ़ने का। मेरे पास दो किताबें थीं "मुंशी प्रेमचंद की श्रेष्ठ कहानियाँ" और "रवीन्द्रनाथ का बाल साहित्य"। एक पुस्तक से मैंने "ईदगाह" कहानी को चुना और दूसरी से रवीन्द्रनाथ ठाकुर की जीवनी को। जीवनी को पढ़ा पाना बिलकुल भी मुश्किल नहीं था जबकि "ईदगाह" कहानी को सबने पसंद तो बहुत किया किन्तु प्रेमचंद की मुहावरेदार भाषा का अनुवाद कर पाना टेढ़ी खीर था। क्योंकि भाषाओं का अनुवाद हो सकता है भावनाओं का नहीं इसलिए "ईदगाह" कहानी की भाव व्यंजना को समझा पाना जर्मन विद्यार्थियों को आसान काम नहीं था। उर्दू भाषा का ज्ञान रखनेवाली मेरी एक छात्रा इशरत मोईन सीमा ने न केवल परीक्षा पास की बल्कि अपने अध्ययन को आगे बढ़ाते हुए डॉक्टरेट भी की। एक और छात्रा ने शिवमंगल सिंह सुमन की कविता को सही उच्चारणों के साथ सीखा। इस अध्यापन काल में वेतन तो नहीं मिलता था फिर भी पढ़ाने का सुख बहुत मिला। पढ़ाते हुए एक वर्ष ही हुआ था की नेस्पितालजी का निधन हो गया। उनसे मेरा वादा था कि उनके विद्यार्थियों को मैं उनका कोर्स पूरा होने तक पढ़ाऊंगी जो मैंने किया भी। यहीं पर दो अन्य जर्मन भी हिंदी पढ़ाते थे। उनकी गलतियों की तरफ जब मैंने इंगित किया तो उन्हें मेरा वहाँ होना खटकने लगा। जब वे हलन्त को विराम पढ़ाते थे, और पढ़ाते थे कि बाथरूम और किचन के लिए हिंदी भाषा में कोई शब्द नहीं होता या फिर संतरा और नारंगी एक ही चीज़ के दो नाम हैं तो मैंने आवश्यक समझा कि इसमें सुधार किया जाए। उच्चारण के अलावा वास्तु विषय की गलतियों की तरफ इंगित करना मेरा कर्त्तव्य था। तभी विदेश मंत्रालय के विदेश सेवा विभाग के विदेशी भाषा सीखने की सुविधावाले क्षेत्र के उच्चतम अधिकारी का मुझे फोन आया कि क्या मैं वहाँ हिंदी पढ़ाना चाहूंगी। यह तो बिन मांगे मोती मिले वाली बात थी। यहाँ पैसे भी अच्छे मिल रहे थे सो तुरंत स्वीकार कर लिया। अब पिछले बीस वर्षों से उन पदाधिकारियों को हिंदी पढ़ा रही हूँ जिनका तबादला भारत में स्थित जर्मन दूतावास या काउंसिल में होता है। पढ़ाया तो बहुत लोगों को किंतु हिंदी भाषा में अनुवाद, वार्तालाप, पठन,और पाठन का पूर्ण रूप से ज्ञान प्राप्त करके परीक्षा में पास होने वाले केवल पाँच विद्यार्थी ही निकले। परीक्षा चूँकि मैं ही लेती थी, अधिकांश विद्यार्थी जो कहीं और से या कभी-कभी भारत से ही पढ़ कर आते थे उत्तीर्ण नहीं हो पाते थे।

4.

जर्मन माध्यम से हिंदी पढ़ने की पुस्तकें

जब मैंने पढ़ाना प्रारम्भ किया तब जर्मन माध्यम से हिंदी पढ़ाने के लिये बहुत कम पुस्तकें उपलब्ध थीं। इन पुस्तकों में जो पुस्तक मुझे सर्वश्रेष्ठ लगी वह है Hindi Lesebuch और Einführung in die Hindi Grammatik। इसके लेखक हैं A Sharma और H . J . Vermeer . इन्होंने टाइपराइटर पर लिख कर इसे हाइडेलबर्ग से प्रकाशित करवाया। यह पुस्तक टाइपराईटर से लिखे अक्षरों में ही सन १९६६ में छपी। अँग्रेज़ी के माध्यम से हिंदी पढ़ाने के लिए कई पुस्तकें मिलीं, एक उपयोगी पुस्तक रुपर्ट स्नेल और साइमन वाइटमैन की रही जबकि इनके कैसेट में बोलनेवालों के पंजाबी उच्चारण कुछ खटकते हैं। कविता कुमार की पुस्तक "नमस्ते" बोलचाल की भाषा सीखने के लिए और व्याकरण के लिए अच्छी है। मार्गोट गाज्लाफ़ की हिंदी से जर्मन और जर्मन से हिंदी भाषा के लिए उपलब्ध शब्दकोश अत्यंत उपयोगी हैं। क्योंकि इन्होंने हिंदी भाषा में प्रयोग होने वाले उर्दू और संस्कृत

के शब्दों का समावेश तो किया ही है, अरबी और फ़ारसी के शब्दों को भी लिया है जो रोजमर्रा की बोलचाल की भाषा में प्रकट होते हैं। इनकी व्याकरण की पुस्तक भी जर्मन भाषा में हिंदी की वाक्य रचना समझाने के लिए अच्छी है। प्रारंभिक अध्ययन के लिए थोड़ी बहुत डॉ.लोथार लुत्ज़े की पुस्तक "हिंदी के बारह अध्याय" (Zwölf Lektionen in Hindi) की सहायता ली जा सकती है। जर्मनों को हिंदी पढ़ाने के लिए सर्वाधिक उपयोगी पुस्तक और कैसेट श्रीमती यज्ञसेनी पोपट की हस्त लिखित पुस्तक है जो बाड होनेफ से प्रकाशित हुई है। आजकल जिस पुस्तक की चर्चा हिंदी भाषा को पढ़ानेवालों में सर्वाधिक है वह है "हिंदी बोलो" इस पुस्तक से सम्बन्धिक कैसेट ने मुझे प्रभावित नहीं किया। अगर आपने पहले से हिंदी भाषा का अध्ययन नहीं किया हो या आपकी मतृभाषा हिंदी न हो तब इस पुस्तक से पढ़ाना आसान है। इस पुस्तक के लगभग सौ से अधिक पन्नों में केवल हिंदी लिपि की ही चर्चा है। जर्मन भाषा से हिंदी पढ़ानेवाली पुस्तकों में "अं", "अः" और क्ष, त्र, ज्ञ, को अलग कर दिया गया है इन्हें अक्षर न मान कर सन्धिवाले शब्दों की संज्ञा दी गई है।

5.

बर्लिन में हिंदी भाषा मैंने कहाँ कहाँ पढ़ाई

बर्लिन में हिंदी भाषा पढ़ाने का अवसर मुझे कई संस्थाओं में मिला। उल्लेखनीय भारतीय दूतावास के सांस्कृतिक विभाग के भवन में भी मैंने हिंदी पढ़ाई। यहाँ थोड़ा सा बर्लिन के इतिहास को समझना पड़ेगा। जब पूर्वी और पश्चिमी जर्मनी के बीच दीवार थी तब भारतीय दूतावास या तो बॉन में था या फिर दीवार के उस तरफ बर्लिन के पूर्वी हिस्से में। पश्चिमी बर्लिन में केवल कौंसलर का आवास और ऑफिस था। दीवार गिरने के बाद राजदूतावास का निर्माण बर्लिन में किया गया और सांस्कृतिक विभाग के लिए काउंसलर की कोठी को दे दिया गया। समय के साथ सांस्कृतिक विभाग भी दूतावास के भवन में आ गया। इस कोठी का प्रयोग हिंदी भाषा को पढ़ाने के लिए तथा नाट्यकला की क्लासेज़ के लिए होने लगा। यहाँ पढ़ाना भी अवैतनिक ही था। विद्यार्थी काफी आते थे। बाद में जब इन कक्षाओं को बंद कर दिया गया तो इन विद्यार्थियों को प्रति विद्यार्थी पांच यूरो के हिसाब से मैंने घर में पढ़ाना प्रारम्भ कर दिया। एक वर्ष के बाद सभी विद्यार्थी तितर बितर हो गए। कुछ की शादी कहीं और हो गई, कुछ को नौकरी के कारण शहर छोड़ना पड़ा। इसके अलावा जो भी कारण रहा हो इक्का दुक्का विद्यार्थी फिर भी आते रहे। घर में पढ़ाने का मेरा अनुभव है कि जर्मन विद्यार्थी नियमित रूप से आते थे और बड़ी मेहनत से पढ़ते थे जबकि भरतीय लोगों की संतानें जो हिंदी पढ़ना चाहती थीं उनमें अनुशासन और नियमितता की कमी थी। अक्सर भारतियों में यह धारणा भी थी की मुझे उन्हें मुफ्त में ही पढ़ाना चाहिए। बर्लिन की ही तीन अन्य संस्थाओं में भी हिंदी भाषा का अध्यापन मैंने किया। एक प्रौढ़ शिक्षा संस्थान, दूसरा बहु भाषा संस्थान और तीसरा लेर्न ब्रुके नामक संस्था।

6.

जर्मनी में हिंदी भाषा का महत्व

जर्मनी में हिंदी भाषा को वह महत्व नहीं दिया जाता जो चीन, अमरीका, रूस या इंग्लैण्ड में दिया जाता है क्योंकि यहाँ यह धारणा है कि भारत में हरकोई अंग्रेजी बोल और समझ सकता है। अधिकांश मेरे विद्यार्थी हिंदी इसलिए सीखना चाहते थे कि वे बॉलीवुड की फिल्मों को समझ सकें। कुछ भारत भ्रमण के लिए भी हिंदी पढ़ते हैं। कुछ योग में प्रयोग होनेवाले शब्दों का अर्थ समझना चाहते थे। भारत के ज्ञान विज्ञान, दर्शनशास्त्र का अध्ययन या तो अंग्रेजी के माध्यम से या फिर जर्मन भाषा में हुए अनुवादों को पढ़ कर ही प्राप्त किया गया है। जर्मनी में इंडोलॉजी के कोर्स में केवल दो सत्र ही हिंदी पढ़नी पड़ती है जिसके बाद ये विद्यार्थी हिंदी भाषा में संवाद कर पाने में असमर्थ होते हैं. जो प्राध्यापक जर्मनी में हिंदी पढ़ाते हैं वे हिंदी में संवाद नहीं कर पाते हैं और न ही उनके विद्यार्थी। उच्चारण भी अशुद्ध ही होते हैं। इसके निरंतर प्रमाण वेबनार पर इन्हें देखने पर मिल सकते हैं तथा विश्व हिंदी सम्मेलनों में दिए हुए इनके वक्तव्यों से अंदाज़ा लगाया जा सकता है। मेरे इस विचार से हिंदी भाषा के ज्ञानी भी सहमत हैं।

यहाँ मैं प्रोफेसर इन्दु प्रकाश पण्डेय के उस लेख की और इंगित करना चाहूँगी जिसमें उन्होंने विश्व हिंदी सम्मेलन के लिए लिखे हुए एक लेख में इन प्राध्यपकों को गौरांग प्रभु की संज्ञा दी है। मेरा यह तातपर्य कदापि भी नहीं है कि हिंदी पढ़ाने वाले गोरों के प्रयास को कम आंकना चाहिए किन्तु यह सुझाव देना अवश्य चाहूँगी कि भाषा के शुद्ध उच्चारणों के लिए अवश्य किसी ऐसे व्यक्ति से सहायता ले लेनी चाहिए जिसकी मातृभाषा हिंदी हो और जो हिन्दी भाषी क्षेत्र से आता हो तथा जिसने हिंदी भाषा का अध्ययन भारत में किया हो। यहाँ यह बताना भी बहुत ही ज़रूरी हो जाता है कि संस्कृत भाषा और उर्दू भाषा के उच्चारण भी हिंदी भाषा से भिन्न हैं और जर्मनी में उच्चारण प्रक्रिया को लेकर भी या तो संवेदनशीलता कम है या अज्ञानता है।

अंत में अपने हिंदी भषा को जर्मनी में पढ़ाने के बारे में कहना चाहूँगी कि पढ़नेवालों की संख्या इतनी कम तो नहीं ही थी कि उन्हें उँगलियों पर गिना जा सके किन्तु हज़ारों में भी नहीं थी। हिंदी भाषा के प्रचार और प्रयास में मैं अभी भी सक्रिय हूँ। उन्नीस सौ पिच्यासी में जब मैंने भारत मजलिस संस्था का अध्यक्ष पद संभाला था तभी उसकी एक शाखा के रूप में लेडीज़ कॉर्नर नामक संस्था की स्थापना भी की थी। भारत मजलिस संस्था अब कई कारणों से सक्रिय नहीं है किन्तु लेडीज़ कॉर्नर अभी भी फल-फूल रहा है। इस संस्था में वार्तालाप हिंदी भाषा में ही अधिकतर होता है। संस्था की तरफ से हिंदी भाषा में कवि सम्मेलनों और वक्तव्यों का आयोजन किया जाता है और भारत तथा जर्मनी के त्यौहारों और उत्सवों को भी मनाया जाता है।

❖

'योग भगाए रोग'

डॉ. अनिल चुतर्वेदी

जिसमें मधुमेह के रोगी का रक्त में ग्लूकोज 188.7 एम.जी. से घटकर आसन के बाद 120 एम.जी. तक पहुँच गया अर्थात् 60 एम.जी. तक ग्लूकोज की कभी। इसी प्रकार योग मुद्रा एवं शलभ आसन मधुमेह के रोगियों के लिए निषेध है, क्योंकि इन आसन की क्रियाओं द्वारा मधुमेह रोगी के रक्त में ग्लूकोज की मात्रा बढ़ जाती है। डॉ. सहाय ने 6 महीने तक 250 रोगियों पर योगिक क्रियाओं के असर का अध्ययन किया तथा उनके अनुसार रोगियों के रक्त में ग्लूकोज की मात्रा ही कम नहीं होती, वरन् योग पद्धति अपनाने वाले रोगियों में उमंग, उल्लास तथा उत्साह एवं अनुसाशित जीवन-शैली का लाभ मिला। औषधियों की मात्रा में भी कमी आ गई तथा रक्त में वसा, में भी गिरावट देखी गई।

योग शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक शक्तियों को संतुलित रूप से विकसित करता है। संस्कृत में योग का अर्थ है, जोड़ना अर्थात् स्वयं को परमात्मा से जोड़ना ही योग है। एक स्वस्थ व्यक्ति के सभी अंगों को भली-भाँति विकसित होने के लिए पोषण की आवश्यकता होती है। स्वस्थ मन से ही स्वस्थ शरीर प्राप्त होता है। केवल नियमित अभ्यास-साधना द्वारा ही मन एकाग्रचित होकर अपने लक्ष्य को प्राप्त करता है। साधना द्वारा ही आत्म अवकोलन, आत्मबल एवं आत्मोत्कर्ष संभव है।

दुनिया में भाँति-भाँति के लोग, करें अनेक प्रकार के भोग।

लगे उन्हें नाना प्रकार के रोग, योग साधना भगाए सारे रोग।

योग एक मनुष्य की चेतना को विकसित करनेवाली क्रमिक प्रक्रिया है, इसके निरंतर अभ्यास से प्रज्ञा प्रखर होती है। योग शरीर के साथ मन को अधिक प्रभावी बनाता है। एक स्वस्थ मनुष्य के लिए ध्यान, साधना एवं चिंतन का अभ्यास आवश्यक है। ध्यान से शरीर, प्राण, हृदय, बुद्धि में पवित्रता एवं निर्मलता आती है। प्राणीमात्र के कल्याण का विचार करने एवं सभी सुखी-निरोग हों, की भावना से सुख एवं शांति की प्राप्ति होती है।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःख भाग भवेत्

योग असान अभ्यास शरीर से आलस्य दूर करने स्वयु संस्थान एवं प्रत्येक अंग को स्वस्थ बनाने के लिए होता है। आलस्य मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है। आधुनिक जीवन-शैली में निष्क्रियता, आलस, शारीरिक श्रम की कमी तथा असंतुलित आहार के कारण मधुमेह, मोटापा, उच्च रक्तचाप, कैंसर, हृदय रोग एक महामारी के रूप में हमारे देश में फैल रही हैं। आसन अभ्यास द्वारा रोगी की सोच में सकारात्मक भाव तो आता ही है, साथ ही वह एक अनुशासित जीवन पद्धति के लिए विवश हो जाता है। योगासन द्वारा शरीर के सभी अंगों में रक्त प्रवाह की वृद्धि होती है तथा सभी ग्रंथियाँ सुचारू रूप से कार्य करती हैं। साधना द्वारा साधक काम, क्रोध, भय सहन करने में समर्थ हो जाता है। स्वस्थ शरीर मस्तिष्क, मेरुदंड, स्नायु संस्थान, हृदय, फेफड़े तथा उदर के बलवान् होने पर निर्भर है। अतः आसनों का चुनाव इन पर पड़ने वाले प्रभावों को दृष्टि में रखकर करना चाहिए, अभ्यास ध्यान के लिए सर्वोपयोगी आसन है, जिसके अभ्यास से सात्विक मनोभाव व गुणों का समावेश होता है। निरोग रहने के लिए आसनों में वज्रासन, शवासन, पश्चिमोतान, मत्स्येंद्र, मुंजा, धनु, हलासन आदि प्रमुख हैं। प्राणायाम श्वास संबंधी रोग, दमा, श्वास के रोग के लिए सर्वोतम आसन है। श्वास को सुविधा से अधिक-से-अधिक समय तक रोकना ही प्राणायाम की अनिवार्य तकनीक है। प्राणायाम के सभी अभ्यास युक्तिपूर्वक शनैः-शनैः ही करने चाहिए।

योग से परिपूर्ण जीवन पद्धति अपनाने से दिल के रोगों के अनेक कारकों पर नियंत्रण संभव है; जिसमें मधुमेह, उच्च रक्तचाप, शरीर में वसा, मानसिक अशांति, तनाव, मोटापा एवं धूम्रपान इत्यादि शामिल हैं।

मधुमेह एवं योग

आज से लगभग चार हजार वर्ष पूर्व अथर्ववेद में प्राचीन भारतीय चिकित्सा पद्धति की विशेषताओं का उल्लेख है। चरक के अनुसार चिकित्सा का उद्देश्य इनसान को स्वस्थ रखना है, ताकि वह निरोग रह सके।

चरक

चरक एवं सुश्रुत प्राचीन भारतीय चिकित्सकों ने मधुमेह की पहचान की थी तथा इसके पूर्ण नियंत्रण के लिए आहार एक शारीरिक श्रम के महत्त्व को स्वीकार किया। हमारे देश में मधुमेह एक महामारी के रूप में प्रचलित है। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में मधुमेह एवं योग के महत्त्व को भली-भाँति स्वीकार किया गया है एवं डॉ. वी.के. सहाय, उस्मानिया मेडिकल कॉलेज के मधुमेह विशेषज्ञ ने सन् १९७८-१९९५ के मध्य अनेक अनुसंधान किए। उन्होंने प्राणायाम व साधना का मधुमेह रोगियों पर लाभदायक प्रभाव पड़ने की जानकारी चिकित्सक समाज को दी। डॉ. सहाय के अनुसार मधुमेह के रोगियों के लिए निम्नलिखित आसन श्रेयस्कर हैं। नौकासन, भुजंगासन, हलासन, वज्रासन, धनुरासन, अर्ध मत्स्येंद्र धनुरासन सबसे प्रभावी आसन है, जिसमें मधुमेह के रोगी का रक्त में ग्लूकोज 188.7 एम.जी. से घटकर आसन के बाद 120 एम.जी. तक पहुँच गया अर्थात् 60 एम.जी. तक ग्लूकोज की भी। इसी प्रकार योग मुद्रा एवं शलभ आसन मधुमेह के रोगियों के लिए निषेध है, क्योंकि इन आसन की क्रियाओं द्वारा मधुमेह रोगी के रक्त में ग्लूकोज की मात्रा बढ़ जाती है। डॉ. सहाय ने 6 महीने तक 250 रोगियों पर योगिक क्रियाओं के असर का अध्ययन किया तथा उनके अनुसार रोगियों के रक्त में ग्लूकोज की मात्रा ही कम नहीं होती, वरन् योग पद्धति अपनानेवाले रोगियों में उमंग, उल्लास तथा उत्साह एवं अनुसाशित जीवन-शैली का लाभ मिला। औषधियों की मात्रा में भी कमी आ गई तथा रक्त में वसा, में भी गिरावट देखी गई। अतः उनका कहना है कि योग क्रियाएँ एक पालीपिल का ही स्वरूप है। विदेशी बहुराष्ट्रीय दवाई बनाने वाली कंपनियों ने धुआँधार प्रचार किया है, जिसमें हृदय रोग विशेषज्ञ एक पोलीविल यानि वह औषधि मिश्रण, जिसमें एक गोली में रक्त कम करने वाली औषधि एस्प्रिन, वसा कम करने वाली औषधि का मिश्रण है, ताकि हृदय रोग से बचाव किया जा सके। जिन रोगी को मोटापा है, उच्च रक्तचाप अथवा मधुमेह के रोगी हैं। हमारा यह मानना है, हमारे देश में योग पद्धति एवं यौगिक क्रियाओं के द्वारा भारतवासियों को पौलीपिल की कोई जरूरत नहीं। योग पद्धति ही भारतवासियों के लिए पौलीपिल है।

योग एवं हृदयरोग

अमेरिकन हृदय संस्थान के अनुसार साधना एवं प्राणायाम उच्च रक्तचाप के उन रोगियों के लिए जिनका रक्तचाप 120/80 से अधिक है, एक वैकल्पिक युक्ति है, जिसके द्वारा रक्तचाप पर पूर्ण नियंत्रण संभव है। हमारे देश में अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान (ऐम्स) के हृदय रोग विशेषज्ञ डॉ. मनचंदा, डॉ. रेड्डी एवं डॉ. अनूप मिश्रा ने यौगिक कियाओं, विशेषकर प्राणायाम एवं शवासन का हृदय रोगियों, उच्च रक्तचाप के रोगियों पर गहन अनुसंधान किया है, जिसके परिणाम उत्साहवर्धक हैं, उनके अनुसार 12 हफ्ते तक निरंतर इन आसनों के करने से रक्तचाप पर नियंत्रण संभव है। उसी प्रकार रक्त में कॉलेस्ट्रॉल की मात्रा अधिक होने पर इन क्रियाओं द्वारा कॉलेस्ट्रॉल की मात्रा रक्त में कम की जा सकती है। इसी प्रकार जो लोग दिल के दौरे से ग्रस्त हो जाते हैं, उन लोगों को प्राणायाम एवं श्वासन द्वारा स्वास्थ्य लाभ एवं सामान्य जीवनयापन में सहायता मिलती है। डॉ. मनचंदा ने तो कोरोनरी ऐंजियोग्राफी द्वारा यह निष्कर्ष निकाला है कि प्राणायाम एवं श्वासन द्वारा लगभग 9-12 महीने बाद तय आहार में वसा कम संतुलित आहार द्वारा रक्त वाहनियों में लगभग 20 प्रतिशत रक्त प्रवाह में बाधा को कम किया जा सकता है। यह देखा गया है कि मधुमेह, उच्च रक्तचाप एवं दिल के रोगियों की जीवन-शैली अनुशासित नहीं होती, वे तनावपूर्ण जीवन व्यतीत करते हैं। इन योगासन द्वारा उन्हें अनुशासित जीवन-शैली एवं तनाव पर नियंत्रण में पूर्ण सफलता मिलती है। वैज्ञानिक अनुसंधान द्वारा यह निष्कर्ष निकाला जा चुका है कि योग पद्धति इन रोगियों की हृदय गति, उच्च रक्तचाप में कमी, शरीर में तनाव उत्पन्न करनेवाले कोर्टिसाल में कमी कर लाभ पहुँचाते हैं।

रोगी प्रसन्नचित्त रहता है व अनुशासित जीवन व्यतीत करता है।

योगाभ्यास विशेषताएँ

1. योगाभ्यास सभी वर्ग एवं आयु के लोग सहज कर सकते हैं।
2. योग शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक शक्तियों को विकसित करता है।
3. सभी यौगिक आसन एक-दूसरे के पूरक हैं।
4. योगाभ्यास में कम धन एवं ऊर्जा की आवश्यकता होती है।
5. प्रारंभ में योगासन किसी प्रशिक्षक के निर्देश अनुसार करना चाहिए।
6. सभी यौगिक क्रियाओं को सहज सुविधानुसार अपनी क्षमता के अनुसार करना चाहिए।
7. योगाभ्यास में थकान नहीं होनी चाहिए, यदि थकान हो तो शवासन द्वारा थकान दूर करनी चाहिए।
8. योगाभ्यास से पहले मन को शांत करने के लिए प्रार्थना (प्रभु का स्मरण) अथवा गायत्री मंत्र का जप करना चाहिए, ताकि चित्त शांत रहे।
9. योगासन के समय वस्त्र ढीले, स्वच्छ, सरल व योगासन में बाधा पैदा न करने वाले पहनें।
10. नित्य योगाभ्यास के लिए प्रातःकाल का समय उपयुक्त है। सूर्योदय से पहले वातावरण में शुद्ध प्राणवायु ऑक्सीजन का प्रवाह होता है। अतः प्रदूषण की संभावना नगण्य रहती है।

दृढ संकल्प ही योगासन का प्राण है। आदर्शवादी सोच और दृढ संकल्प द्वारा योगाभ्यास प्रारंभ कर आप स्वस्थ, सुखी, निरोग, दीर्घायु जीवन जी सकते हैं।

तन को दो आहार अन्न का/मन को दो चिंतन का अधिकार
तन-मन दोनों बड़े तभी/फले-फूले स्वस्थ संसार

❖

चिकित्सा परामर्शदाता प्रिवेंटिव हैल्थ जीवन शैली रोगी
ए-3/305, एकता गार्डन, इंद्रप्रस्थ विस्तार, दिल्ली-110092
E Mail : dranilchaturvedi@gmail.com Mob . 9810045277

हिंदी सिनेमा में विस्थापन का प्रभाव

अभिनव प्रकाश

विभाजन के बाद पूर्वी बंगाल से जो विस्थापन हुआ है और बिहारी मुसलमानों को पाकिस्तान जाकर जो संघर्ष करने पड़े इस पर कोई महत्त्वपूर्ण फिल्में नहीं बनी है। ऋत्विक घटक की 'सुवर्ण रेखा' 'मेघे ढ़ाका तारा' में विस्थापन के संदर्भ जरूर हैं लेकिन सीधे-सीधे विस्थापन की दर्द एवं समस्या को चित्रित नहीं किया गया है। इस विषय पर पाकिस्तान की 'खामोश पानी' एक उल्लेखनीय फिल्म है, लेकिन उसका दृष्टिकोण सीमित है और स्त्रीवादी विचारधारा का ज्यादा पक्ष लिया गया है। बलपूर्वक विस्थापन का प्रतिरोध भी हमेशा होता रहा है। इस प्रतिरोध पर केन्द्रित तमाम फिल्में हैं। 'नीचा नगर' एक जबरदस्त फिल्म है शायद अकेली फिल्म है जिसमें प्रतिरोध् फलीभूत होता दिखाया गया है। इसमें आततायी अंततः परास्त होता है। यह फिल्म 1996 में बनी थी, तब भारत में अंग्रेजी राज का आखिरी वर्ष था।

'विस्थापन' मानव सभ्यता की एक मूलभूत गतिविधि है- चाहे वह अपनी इच्छा से हो, चाहे विवशता से! कहना न होगा कि सारी मानव प्रजाति अफ्रीका से उद्भूत है। सबसे पहले मनुष्य ने भोजन, स्थान और सुरक्षा की तलाश में स्थानांतरण किया ताकि उसका जीवन बेहतर और सुगम्य हो सके। हम जानते हैं कि मानवीय इतिहास के हर कालखंड में मनुष्यों का विस्थापन होता रहा है। एक देश से दूसरे देश, एक महाद्वीप से दूसरे महाद्वीप। मनुष्य ने उत्सुकतावश भी प्रवसन किया है। नये देश, इलाकों और सभ्यता को जानने के लिए। हम कह सकते हैं कि प्रवर्जन, पलायन, प्रवास और विस्थापन बुनियादी मानवीय गतिविधियाँ हैं जिनके बिना मानव सभ्यता का विकास मुमकिन न था। जब सिनेमा का दौर आया तो मनुष्यों की सामाजिक गतिविधियों को पहले-पहल सिनेमा में दिखाया गया। सिनेमा का शुरूआती सफ़र बहुत ही संघर्ष भरा था जैसे मनुष्यों ने अपनी पहचान बनाने और अपने आप को स्थापित करने के लिए संघर्ष किया। हिन्दी सिनेमा के जनक दादा साहब फाल्के ने जब 'राजा सत्य हरिश्चंद्र' फिल्म बनाई तो उसमें उन्होंने राजा हरिश्चन्द्र की जीवन संघर्ष को दिखाया। उनके विस्थापित जीवन को बहुत ही सरलता से पर्दे पर दिखाया था। शुरू-शुरू में सिनेमा मनुष्य के जीवन संघर्ष को विषय बनाकर दशर्कों के सामने प्रस्तुत होती है।

कहना न होगा कि जब भारत में हिन्दी सिनेमा की शुरूआत हो चुकी थी तो लगभग हर भाषा की फिल्मों में विस्थापन की समस्याओं को दिखाने की कोशिश की गई थी। हिन्दी फिल्मों की बात करें तो राजा हरिश्चंद्र, दो बीघा जमीन, गरम हवा, मदर इंडिया, वहीं बंगला सिनेमा में ऋत्विक घटक ने सुवर्णरेखा, 'मैले ढ़ाका तारा' गौतम घोष ने 'पार' फिल्में बनाई।

भारत का विभाजन केवल पिछली शताब्दी की ही नहीं, हमारे पाँच हजार सालों के इतिहास की भयावहतम घटना है। फिल्म 'वक्त' और टी.वी. सीरियल 'बुनियाद' में विभाजन के बाद पंजाबियों के विस्थापन के संदर्भ हैं। ये फिल्में इस पर केन्द्रित रही हैं किस तरह एक कौम अपना पुनराविष्कार करती है और एक सम्पन्न कौम के रूप में सामने आती है। लेकिन इस विषय पर जिस संवेदनशीलता के साथ फिल्में बननी चाहिए थीं, नहीं बनी। सिख-समुदाय ने अपनी अलग अस्मिता रखकर क्या खोया? क्या पाया? जैसे प्रश्न पर एकाध फिल्में बनी लेकिन उसमें भी गंभीरता से उनके दर्द को नहीं दिखाया गया है।

भारत में असंख्य आंतरिक प्रवर्जन हुए हैं जैसे मारवाड़ियों या 'भैया' के नाम से अपमानित किए जाने वाले उत्तर प्रदेश और बिहार के

निवासियों का दर्द और अपमान 'दो बीघा जमीन' सरीखे चंद फिल्मों में देखा जा सकता है। कलकत्ता में लाखों उत्तर भारतीय हैं! बांग्ला फिल्मों में वे दरवान, चौकीदार, कुली या रिक्शाचालक के रूप में नज़र आते हैं। उन फिल्मों में व्यापारी हमेशा मारवाड़ी होता है। एक नया डायस्पोरा पंजाब में बिहारी मजदूरों के साथ बन रहा है। एक बहुत बड़ा विस्थापन खाड़ी देशों में दक्षिण भारत से हुआ है। वे वहाँ अपमान और असुरक्षा का जीवन व्यतीत कर रहे हैं। करण जौहर की कई फिल्मों में इसे देखा जा सकता है। 'आई प्राउड टू बी इंडियन' नाम से एक फिल्म आई थी जिसमें नायक अपनी पहचान के लिए वहाँ के आवारा किस्म के लड़के से लड़ता-भिड़ता है। पहले वह आए दिन ताने और घटनाओं को नजरअंदाज करता है। एक दिन उसका स्वाभिमान जाग जाता है वह अपनी लड़ाई खुद लड़ता है।

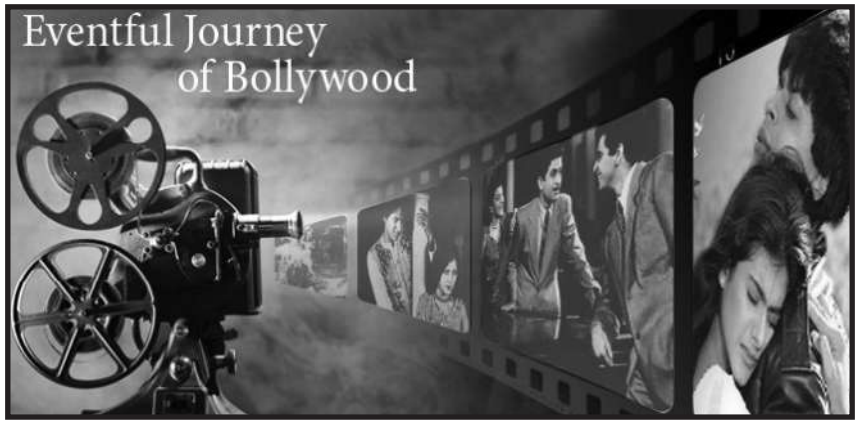

विभाजन के बाद पूर्वी बंगाल से जो विस्थापन हुआ है और बिहारी मुसलमानों को पाकिस्तान जाकर जो संघर्ष करने पड़े इस पर कोई महत्त्वपूर्ण फिल्म नहीं बनी है। ऋत्विक घटक की 'सुवर्ण रेखा' 'मेघे ढ़ाका तारा' में विस्थापन के संदर्भ जरूर हैं लेकिन सीधे-सीधे विस्थापन की दर्द एवं समस्या को चित्रित नहीं किया गया है। इस विषय पर पाकिस्तान की 'खामोश पानी' एक उल्लेखनीय फिल्म है, लेकिन उसका दृष्टिकोण सीमित है और स्त्रीवादी विचारधारा का ज्यादा पक्ष लिया गया है। बलपूर्वक विस्थापन का प्रतिरोध भी हमेशा होता रहा है। इस प्रतिरोध पर केन्द्रित तमाम फिल्में हैं। 'नीचा नगर' एक जबरदस्त फिल्म है शायद अकेली फिल्म है जिसमें प्रतिरोध फलीभूत होता दिखाया गया है। इसमें आतताई अंततः परास्त होता है। यह फिल्म 1996 में बनी थी, तब भारत में अंग्रेजी राज का आखिरी वर्ष था। लेकिन आजादी के बाद हुए तमाम विस्थापनों पर एक भी सशक्त फिल्म नहीं बन सकी। नर्मदा आंदोलन और प्राकृतिक आपदा से हुए विस्थापन पर सीधे-सीधे फिल्में नहीं बनीं लेकिन संजय कॉक ने एक वृत्तचित्र बनाया-'मिट्टी के लाल' नाम से। तिब्बत के शरणार्थियों को लेकर कोई फिल्म नहीं बनी है, जबकि वे भारत के कई स्थानों पर बसाये गए थे।

देश में भूकंप आते हैं। प्राकृतिक आपदाओं में लोग उजड़ते रहते हैं और उनका पुनर्वास कभी नहीं होता है। हिन्दुस्तान के करोड़ों मजदूर जिन्दगी भर एक शहर से दूसरे शहर आते-जाते रहते हैं। रोजी-रोटी की तलाश में वे कई बार उजड़ते-बसते हैं। इस पर हंसल मेहता ने 'सीटी लाइट' के माध्यम से दिखाने का प्रयास किया है। इसकी चर्चा हम आगे करेंगे। हाँ! एक बात जरूरत है कि सन् 90 के बाद के फिल्मकारों ने विस्थापन की समस्याओं को पर्दे पर अच्छे से नवीनता के साथ दिखाया है।

हिन्दी सिनेमा में विस्थापन का चित्राण: संदर्भ इक्कीसवीं सदी

इक्कीसवीं सदी में विस्थापन एक समस्या के रूप में उभरा है। बड़ी संख्या में लोग अपने गाँव, शहर या देश से पलायन कर रहे हैं। वैश्वीकरण के प्रभाव ने विस्थापन के राजनीतिक, सामाजिक आर्थिक संकट को और ज्यादा भयावह किया है। आज भी हजारों लाखों की संख्या में असक्त, गरीब, बेरोजगार, किसान-मजदूर लोगों का विस्थापन जारी है।

हम जानते हैं कि विस्थापन ने सभ्यताओं के विकास के साथ, कला, संस्कृति, सिनेमा आदि को विकसित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। बीसवीं सदी भारतीय सिनेमा की शुरूआत है इसी सदी के मध्य में विभाजन के कारण देश में विस्थापन की समस्याओं को सिनेमा में दिखाया गया, जबकि विस्थापित व्यक्ति या परिवार जब अपने मूल स्थान को विवशता या विकटता के कारण छोड़ता है तो उसे शारीरिक, मानसिक, सांस्कृतिक, सामाजिक संकट से जूझना पड़ता है।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में विस्थापन पर गौर किया जाए तो आजादी (1947) के समय सबसे ज्यादा विस्थापन हुआ। जिसमें 15 लाख से ज्यादा लोगों ने अपने वर्षों पुराने घर जमीन छोड़कर अन्य जगह पर बसने को मजबूर हुए। यह विभाजन के संकट से उभरी बीसवीं सदी की

सबसे बड़ी त्रासदी थी। जिसका असर सम्पूर्ण विश्व पर पड़ा। विभाजन के पफलस्वरूप होने वाला विस्थापन सम्पूर्ण परिस्थिति को प्रभावित किया। साहित्य, कला, सिनेमा आदि सभी विधाओं ने विभाजन की त्रासदी को अपना विषय वस्तु बनाया। हिन्दी कहानियों में विभाजन के दर्द को बहुत ही भावनात्मक ढंग से पेश किया गया लेकिन उस समय के सिनेमा में विस्थापन का केवल मनोवैज्ञानिक पक्ष ही पर्दे पर दिखाया गया। जबकि विस्थापन का सामाजिक पक्ष अधिक प्रबल विषय हो सकता था।

इक्कीसवीं सदी के हिन्दी सिनेमा में विस्थापन की समस्या एक ज्वलंत मुद्दा है। सन् 90 के बाद देश में आर्थिक मंदी या कहें उदारीकरण के कारण वैश्विक रूप से मनुष्य का पलायन एक सामाजिक परिघटना के रूप देखा जाने लगा। नयी सदी के सिनेमा ने इसी विषय वस्तु को माध्यम बनाकर आम जन जीवन की कुरीतियों और उससे उपजे संकट को सिनेमा में चित्रण का आधर बनाया है, उदाहरण के तौर पर हंसल मेहता की फिल्म सीटी लाइट (2010) को लिया जा सकता है जिसमें इस फिल्म का अभिनेता रोजगार की तलाश में राजस्थान से मुम्बई आता है और परिवारिक दुर्घटनाओं के कारण बैंक लूटने पर मजबूर हो जाता है। वह फौज से रिटायर है उसके अपने आदर्श हैं लेकिन पारिवारिक दुर्बलता और आर्थिक तंगी के कारण वह पहले अपने शहर छोड़ने को मजबूर होता है फिर महानगर (मुम्बई) की तरफ रूख उसे सामाजिक सांस्कृतिक टकराहट के साथ-साथ तालमेल बिठाने में अवरोध उत्पन्न करती है। इस फिल्म में आर्थिक विपन्नता से उपजा विस्थापन के दर्द को चित्रित किया है।

सन् 2008 में आई फिल्म 'पीपली लाइव' में किसानों के दर्द को दिखाया नत्था कर्ज में डूबा हुआ है। परिवार को मुआवजा मिले इसलिए आत्महत्या करने की चेष्टा करता है। लेकिन उसके गाँव के सरपंच और सरकार उस पर कड़ी नज़र रखते हैं, 'नत्था' सरकार, संरपंच और मीडिया को चकमा देकर शहर भाग जाता है। फिल्म के अंत में उसे रिक्शा चलाते हुए दिखाया गया है, इसी तरह चक्रव्यूह (2011) फिल्म में नक्सलवाद और आदिवासी क्यों विस्थापित हो रहे हैं, सरकार का क्या रवैया रहा है, क्या बढ़ती जनसंख्या अपराध के कारण और विस्थापन के जद में है।

हिन्दी सिनेमा में विस्थापन की समस्या को पहले-पहल विभाजन से जोड़कर देखा गया था जैसे कि गरम हवा (1973) फिल्म में देखा जा सकता है, भारत पाकिस्तान बँटवारे में सलीम मिर्जा (बलराज साहनी) का परिवार पाकिस्तान जाना चाहता है लेकिन सलीम मिर्जा का अपने वतन (हिन्दुस्तान) से प्रेम उसकी मानसिक पीड़ाओं को बार-बार उद्देलित करती रहती है।

यह दिलचस्प संयोग है कि बीसवीं सदी में भारतीय सिनेमा की शुरूआत हुई थी और विभाजन की त्रासदी भी भारत ने इसी सदी में झेला था। जाहिर है सिनेमा में नये विषय के चित्रण के रूप में विभाजन की समस्या से मिलता-जुलता विषय हिन्दी फिल्म निर्माता को रूचिकर लगा। और सन् 70 के दशक तक विस्थापन के अलग-अलग समस्याओं पर ज्यादा फिल्में बनी। जैसे खेती की समस्या, अकाल की विभीषिका, किसानों की समस्या को लेकर 'दो बीध जमीन' (1953) बनी। मदर इंडिया (1957) में विस्थापन के सभी पहलुओं को दिखाया गया है। हाँ एस.एम.सयू द्वारा निर्मित गरम हवा (1973) में विस्थापन के मनोवैज्ञानिक कारण और अपनी जमीन अपने वतन से प्रेम का चित्रण मनोवैज्ञानिक ढंग से किया गया है।

संदर्भ पुस्तकें

1. सिनेमा पढ़ने के तरीके - विष्णु खरे, प्रवीण प्रकाशन, दिल्ली
2. समय और सिनेमा - विनोद भारद्वाज, प्रवीण प्रकाशन, दिल्ली
3. हिन्दी सिनेमा का इतिहास - मनमोहन चड्ढा, सचिन प्रकाशन, दिल्ली
4. लोकप्रिय सिनेमा का सामाजिक यथार्थ - ज्वरीमल्ल पारख, अनामिका प्रकाशन, दिल्ली
5. विकास विस्थापन एवं पुर्नवास: राजू सिंह, रावत पब्लिकेशन, दिल्ली
6. सिनेमा: कल और कल - विनोद भारद्वाज, वाणी प्रकाशन, दिल्ली

संदर्भ फिल्में

1. दो बीघा जमीन (1953)
2. मदर इंडिया (1957)
3. गरम हवा (1973)
4. तमस (1988)
5. पार (1983)
6. स्वर्ण रेखा (1965)
7. लगान (2001)
8. अपहरण (2004)
9. पिपली लाइव (2000)
10. गदर (2000)
11. सिटी लाइट (2014)

❖

शोधार्थी, मकान सं. 179, गली नं.9 भगत कॉलोनी, संतनगर बुराड़ी, दिल्ली, पिन-110084 फोन नं - 9555648881

टेक्नोलॉजी एवं शिक्षा

अखिलेश कुमार गुप्ता

धीः-बुद्धि युक्त व्यवहार 8.विद्या 9.सत्य 10.अक्रोध यानी क्रोध न करना । इस प्रकार इन दस लक्षणों से संपन्न व्यक्ति वास्तव में धार्मिक कहा जाता है। धर्म को जानने वाला ही कर्म के असली स्वरूप को जान सकता है एवं वह संवेदनशील तथा सुशिक्षित भी होगा और वह व्यक्ति टेक्नोलॉजी का प्रयोग संवेदनशीलता पूर्वक प्राणी मात्र के हित में करेगा। प्रायः यह देखा गया है कि सुशिक्षित व्यक्ति ही टेक्नोलॉजी को अपने ऊपर हावी नहीं होने देता, वह उसके दुरुपयोग करने से भी हर संभव बचता है क्योंकि वह आत्म नियंत्रण में काफी हद तक पारंगत होता है

अगर सामान्य सा प्रश्न यह पूछा जाए कि एक अच्छे व्यक्ति समाज या राष्ट्र के लिए ज्यादा क्या जरूरी है ? शिक्षा या टेक्नोलॉजी का ज्ञान । वास्तव में सुशिक्षित हुए बिना टेक्नोलॉजी का ज्ञान पाना सूचनाओं का अतिरेक पैदा करता है और सूचनाओं का अतिरेक संवेदनशीलता को कुंद करता है तथा कुंद संवेदनाएं या संवेदनहीनता की स्थिति अंततः प्राणी मात्र के अस्तित्व के लिए खतरा साबित हो सकता है। इसी खतरे को भांपते हुए प्रसिद्ध लेखक एवं दार्शनिक बेवर ने कहा था कि सभ्य जंगली असभ्य जंगली से ज्यादा खतरनाक होता है। अगर हम भीषण युद्धों के इतिहास को देखें तो पाएंगे कि शासकों की मानसिकता पर सुशिक्षा के बजाय टेक्नोलॉजी का ज्ञान हावी रहा और उसका जमकर उन्होंने दुरुपयोग भी किया अल्बर्ट आइंस्टीन का यह प्रसिद्ध कथन " science is lame without religion and religion is blind without science ." शिक्षा और टेक्नोलॉजी में संतुलन बनाने के महत्त्व को दर्शाता है अगर हम भारतीय परंपरा और संस्कृति की बात करें तो धर्म ही कर्म का उसी तरह मार्गदर्शक है जैसे संविधान में वर्णित नीति निर्देशक तत्त्व शासकों को शासन चलाने के लिए मार्गदर्शक की भूमिका में है धर्म का अर्थ पंथ या संप्रदाय से नहीं हैं धर्म संस्कृत के 'धृ' धातु से बना है जिसका अर्थ है धारण करना। धर्म की परिभाषा में स्पष्टतः है कि

" धृतिः क्षमा दमोअस्तेयंशौचमिन्द्रियनिग्रहः।

धीविर्द्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणं ।।

अर्थात् 1.धैर्य रखना 2.क्षमा 3.दम-मन को सन्मार्ग में प्रवृत करने को दम कहते हैं। 4.अस्तेय अर्थात चोरी न करना 5.शौच-शरीर ,मन,वचन से साफ सुथरा रहना शौच कहलाता है। 6.इन्द्रियनिग्रह- इन्द्रियों को वश में रखने वाला 7.धीः-बुद्धि युक्त व्यवहार 8.विद्या 9.सत्य 10.अक्रोध यानी क्रोध न करना । इस प्रकार इन दस लक्षणों से संपन्न व्यक्ति वास्तव में धार्मिक कहा जाता है। धर्म को जानने वाला ही कर्म के असली स्वरूप को जान सकता है एवं वह संवेदनशील तथा सुशिक्षित भी होगा और वह व्यक्ति टेक्नोलॉजी का प्रयोग संवेदनशीलता पूर्वक प्राणी मात्र के हित में करेगा। प्रायः यह देखा गया है कि सुशिक्षित व्यक्ति ही टेक्नोलॉजी को अपने ऊपर हावी नहीं होने देता, वह उसके दुरुपयोग करने से भी हर संभव बचता है क्योंकि वह आत्म नियंत्रण में काफी हद तक पारंगत होता है और ऐसा ही व्यक्ति टेक्नोलॉजी का संतुलित प्रयोग जनहित में करने में सफल होता है। वह टेक्नोलॉजी के मकड़जाल में उलझने के बजाय टेक्नोलॉजी के सहारे सुखमय, रसमय और आनंदमय समाज की स्थापना में महत्वपूर्ण योगदान देता है और जो अंततः

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु ,मा कश्चितदुःखभाग्भवेत्।। का भारतीय सपना साकार करने में सहायक सिद्ध होगा।

❖

वरिष्ठ कवि एवं लेखक
पता- D -367 , सेक्टर-1, अवंतिका, रोहिणी, दिल्ली-85 मो.9868155573

विस्थापन की त्रासदी और हिन्दी उपन्यास

डॉ. देवी प्रसाद तिवारी

पाकिस्तान से विभाजन के दौरान हुए विस्थापन और स्वतंत्र भारत में हुए कश्मीरी हिन्दुओं के विस्थापन पर तो थोड़ी बहुत चर्चा हो भी जाती है लेकिन पूर्वी पाकिस्तान (वर्तमान में बंगलादेश) से हुए विस्थापन पर उतनी चर्चा नहीं होती और न ही तिब्बती बौद्धों के विस्थापन पर। 'कुलभूषण का नाम दर्ज कीजिए' उपन्यास में लेखिका अलका सरावगी ने पात्र कुलभूषण के बहाने बांग्लादेश देश से हुए हिन्दुओं के विस्थापन पर प्रकाश डाला है। यहाँ भी हिन्दुओं को निशाना बनाया गया। क्या गरीब, क्या अमीर सभी के लिए अपना वतन अब अपना नहीं रहा। महिलाओं पर सबसे ज्यादा जुल्म हुए। हिंदू मिल मालिकों से उनकी मिले छीन ली गयी। उन्हें झूठे मुकदमों में फँसाकर जेल भेजा गया, उनके घरों पर नज़र रखी जाने लगी। हजरत बल का दंगा कश्मीर में और तनाव कुष्टिया में। जागेश्वरी मिल के मालिक कार्तिक बाबू ने तो कभी हिन्दू मुसलमान में भेद नहीं किया

'विस्थापन' अचानक आरम्भ होने वाली एक ऐसी अनवरत यात्रा का नाम हैं जहां मंजिल का तो छोड़िए पड़ाव का भी पता नहीं। न कोई नियम न कानून, न कोई अपना न पराया बस लोग भाग रहे हैं बेतहाशा अपनी स्मृतियों के साथ। कभी कहीं किसी दरख्त की छाँव में आकाश की ओर टकटकी लगाए खँगालते हैं उन स्मृतियों को, कोई वितस्ता को याद करता है, कोई पद्मा को, कोई बांग्ला में बड़बड़ाता है तो कोई डोगरी में। भरे हुए गलों से आवाज तक साफ़ नहीं आती। फिर हजार जोड़ी आँखों में उतरते खून की स्मृतियाँ उसे डराती हैं, उसे नारों की गूँज सुनाई पड़ती है, वह उठ खड़ा होता है और फिर भागता है किसी अनिश्चित लक्ष्य की ओर। कोई दिल्ली पहुँचता हैं तो कोई जम्मू, कोई अपने नजदीकी शहर कोलकाता। कितने तो यह जानकर आश्चर्य व्यक्त करते हैं कि वे यहाँ तक पहुँचे कैसे? कुछ ईश्वर का शुक्रिया अदा करते हैं तो कुछ अपने नसीब को कोसते हैं। 'विस्थापन'की त्रासदी पर कलमें भी खूब चलीं, ऐसी ऐसी कथाएँ कि उन्हें पढ़कर जिन आँखों में कभी खून उतरा होगा उनके गले भी जरुर रुँधे होगें। अब ये अलग बात है कि वे इसका प्रर्दशन इस डर से न कर सकें कि उनकी कौम उन्हें गद्दार कहेगी। विभाजन में विस्थापित हुए लोगों का घाव अभी भरा भी नहीं था कि तिब्बती बौद्धों का विस्थापन, पूर्वी पाकिस्तान (बंगलादेश) से बंगाली हिन्दुओं का विस्थापन और फिर दर्दनाक कश्मीरी हिन्दुओं का विस्थापन अर्थात् घटनाएँ दोहरायी गयीं, बावजूद इसके वामपंथी योजना के तहत सरकारों का उदासीन बने रहना खटकता है। देश के संसाधनों पर पहला हक किसका होना चाहिए यह तय करने से पहले 'तमस'(भीष्म साहनी) के हरनाम सिंह की दुकान से उठती लपटें या फिर 'कुल भूषण का नाम दर्ज कीजिए'(अलका सरावगी) के कार्तिक बाबू की मिल से उठते धुएँ के गुबार को नहीं भूलना चाहिए। याद करना चाहिए 'दर्दपुर'(क्षमा कौल) के किसान को जिसके खेत में बर्फ पिघलते ही कब्रिस्तान उग आता है, हिन्दुओं के बगानों को या तो जला दिया गया या फिर उन पर कब्जा कर लिया गया। याद करना चाहिए 'छाया मत छून मन' (हिमांशु जोशी) की परवीन को जो अंत तक विस्थापित ही रहती है, बेटियां दर दर की ठोकरें खाने को मजबूत होती हैं। याद करना चाहिए 'पाषाण युग' (संजना कौल) की अंजलि को जिसका परिवार भाई की हत्या पर भी रो नहीं सकता, क्रिया कर्म भी थाने जाकर करना पड़ता है। आखिर क्यों समाज इन पीड़ाओं से नहीं सीखता? क्यों समरता का ढ़ोग रचता है? बर्फ के इर्द गिर्द रहने वाला यदि अचानक उष्णकटिबंधीय प्रदेशों में निष्प्रयोजन प्रवासी हो जाए तो उनकी जिन्दगी तो ऐसे ही आधी समझिए। कश्मीरी

हिन्दुओं का पलायन ऐसा था कि 'साबुत बचा न कोय', किसी का भाई मारा गया तो किसी का पिता, किसी की आँखों के सामने जवान बेटी का बलात्कार हुआ और फिर भी जो कहने के लिए बच गए उनके मन में रह गयी बस टींस। 'दर्दपुर','पाषाण युग' या फिर 'कुल भूषण का नाम दर्ज' कीजिए जैसे उपन्यासों को पढ़ते हुए जो 'दृश्य' सामने आता है उसकी कल्पना मात्र से रुह काँप जाती है। मुझे तो अफसोस उन लोगों पर ज्यादा होता है जो यह कहते हुए गलियों में घूमा करते थे कि कुछ दिनों में सब कुछ ठीक हो जाएगा। आखिर दंगों के वर्षों बाद भी वे साँकले जस की तस क्यों पड़ी हैं? क्यों कोई वहाँ जाने वहाँ रहने के लिए तैयार नहीं? 1947ई.के कबायली आक्रमण से भयभीत स्मृतियों पर 1989ई. में पुनः चोट की जाती है फिर भी लोग क्यों नहीं सीखते? 1965ई.और 1971ई. की जंग जीतने पर भी कश्मीरी हिन्दू खुशी नहीं मना सकते थे क्योंकि इससे अमन चैन खतरे में पड़ सकता था। 1989ई. में मिल जुल कर रहने की सीख देने वालों लकवा को मार गया। 'दर्दपुर' उपन्यास में अनेक ऐसे प्रसंग हैं जिन्हें पढ़ते हुए वहाँ के जमीनी हलात से रुबरु होने का मौका मिलता है। 1971ई. की जंग जीतने के बाद कश्मीरी हिन्दू एक मन्दिर में इकट्ठा होते हैं क्योंकि हिन्दुस्तान की जीत पर उन्हें गर्व है। वे किसी जाति, धर्म और संप्रदाय के खिलाफ इकट्ठा नहीं हैं लेकिन उन्हें वहाँ की बहुसंख्यक आबादी के युवाओं के द्वारा अपमानित होना पड़ता है। क्षमा कौल लिखती हैं कि "मुहल्ले के बच्चे भी उनके साथ आकर शामिल हुए थे। इस मुहल्ले में कोई भट्ट नहीं रहता। सिर्फ शिवालय मंदिर यहाँ स्थापित था। अब वे मुस्टण्डे जुआरी बच्चों को निर्देश देते थे कि वे भट्टनियों को बुलायें और चिढ़ाएँ और गालियाँ बोलकर ओझल हो जाएँ। गरज यह कहवा कुलचा पार्टी हिन्दुस्तान की जीत की खुशी में बेवकूफाना ढंग से आयोजित की गयी है, उस पर पानी फेर दें। बच्चे उन दरारों पर मुँह टिकाकर एक के बाद एक बोलते, हे दालभट्टनी' हयय दाल भट्नी। भट्नी ओ इधर जरा देख दालभट्टनी और फिरन उठाकर अपना गुप्तांग दिखाते।"[1] जुआरियों और बच्चों की भीड़ धीरे धीरे उग्र होती गयी और उन्होंने बाकायदा हमला कर दिया। "स्त्रियों के डेजिहोरों, सोने की चेनों पर हमला हुआ था। पुरुषों और बच्चों पर इतने पत्थर फेकें गए कि हिसाब नहीं। शामियाना तक पत्थरों की मार से तार-तार हो गया समावार टूट गये। काँसे के प्याले टूट गये। कुलचे बिखर गये। सारा कहवा ऐसे गिर गया कि इतनी भयंकर ठंड में भी उसकी गर्माहट की भाप उठती रही।"[2] दरअसल नियाजी का आत्मसमर्पण, भुट्टो की हार इन्हें अपनी हार लग रही थी। हिन्दुस्तान की फौज से टकराने के बजाय निरीह भट्टों पर हमला करना ज्यादा आसान था। मुल्क की जीत पर भला किसे गर्व नहीं होता? और जिन्हें नहीं होता उन पर संदेश करना भी जायज है। ऐसी परिस्थियाँ अनायास या अकारण नहीं उत्पन्न होती हैं। काश तत्कालीन सरकारों ने इस पर गौर किया होता तो शायद 1989ई.के कत्लेआम को टाला जा सकता था। 1971 ई. की जंग का जश्न मनाने वाली सरकार 1975 ई.आते -आते आपे से बाहर हो गयी जिसकी परिणति इमरजेंसी के रुप में होती है। चौरासी के दंगों से देश की एकता को चोट पहुँची और सहानुभूति की सरकार इससे उबरने में नाकाम रही। कुछ ऐसी ही राजनीतिक परिस्थितियों का लाभ उठाते हुए आतंकवादियों ने पल भर में घाटी को लाल कर दिया। हजारों हिन्दू बेगर हुए। सरकार ने फौरीतौर पर राहत पहुँचाने का काम शुरु किया जम्मू से लेकर दिल्ली तक कनात तान दिये गये। क्या यह सही विकल्प था? वहाँ की पुलिस मूक क्यों बनी रही?इतने हथियार अचानक वहाँ पहुँचे कैसे? अभी तो 1947ई.के विस्थापितों का ठीक ढंग से पुनर्वास भी नहीं हुआ था कि 1989ई. में एक और विस्थापन। 1947 ई.से लेकर 1989 ई.तक लोग साल दर साल विस्थापित होते रहे और सरकारें इस पर अंकुश लगाने से बचती रहीं। हाँ कुछ कश्मीरी हिन्दुओं ने स्वयं को बचाने के लिए अपना धर्म परिवर्तन किया और कुछ ऐसे भी थे जिन्हें धर्म परिवर्तन करने के बावजूद भी मार दिया गया। 'दर्द पुर' उपन्यास के एक प्रसंग में कुछ ऐसा ही है "यह क्या कर रहे हो? हमने तो इस्लाम कबूल कर लिया है।" "क्या कबूल कर लिया है .... सिर अपना कबूल कर लिया है। फिर तुम हमें अपनी औरतों से शादी करने पर रोकते नहीं। इससे हमें तुम्हारे ऊपर शक होता है। हम तुम पर विश्वास नहीं कर सकते। क्या पता कल तुम फिर भट् बन जाओं ....जब हम चले जाएगें....। "और मार दिया उन्होंने एक एक को पूरा गाँव भट्टों से साफ किया।"[3] यह उनकी कायरता थी या पौरुष यह तो वही जाने लेकिन कश्मीरी हिन्दुओं पर हुए इस अत्याचार का वास्तविक दोषी कौन है? इसकी पड़ताल अभी तक जारी है। 1947 ई.में कबायली आये और 1989ई. में दहशतगर्द उन्हें हिन्दुओं के मकान पहचानने में तनिक देर न हुई। आखिर तहजीब के ठेकेदारों ने सब कुछ का ठीकरा केवल बाहर वालों पर फोड़ अपनी जान बचाई। वे उन्हें अब भी नाराज़ नहीं करना चाहते थे जिन्होंने अपने ही पड़ोसियों को बेदखल किया था। हद तो तब हो गई जब यही पड़ोसी कश्मीरी हिन्दुओं के लिए बने शिविरों में जाकर उनकी जमीनों के लिए लार

टपकाने लगे। औने-पौने दाम पर जमीनें खरीद लीं गई अर्थात् वापसी का रास्ता बिल्कुल बन्द। वितस्ता की ओर से आ रही बयार अब महज कल्पना होगी। सर्द रातों में बहती हवा की गुदगुदी अब महसूस नहीं होगी। बादाम और अखरोट तोड़ने की जद्दोजहद से भी छुटकारा। न खेती न किसानी। न अपना लोक न ही अपने लोक देवता। जो कुछ है बस यही कैंप और यहाँ से भी कहाँ जाना पड़ जाए कुछ पता नहीं। जहाँ जायेंगे, वहाँ की अपनी अलग समस्या।

संजना कौल के उपन्यास 'पाषाण युग' की पात्र अंजलि एक शिक्षिका है जिसके पिता इलाहाबाद के पढ़े लिखे हैं। प्रगतिशील मिजाज़ के हैं लेकिन उनके पुत्र की हत्या होती है सिर्फ इसलिए कि वह सरकार की नौकरी करता था अर्थात् जासूस था। दूसरा भाई कश्मीर छोड़ कर बम्बई और जम्मू का रुख करता है। अचानक कश्मीर में ड्रेस कोड तय करने का दौर शुरु होता है। क्या पहनना चाहिए क्या नहीं यह कालेज की बजाय फतवों से तय होने लगा। धमकियों का दौर शुरु हुआ। मिसेज अहमद जो कि कालेज की प्रिसिंपल हैं और कुछ अध्यापिकाओं के समर्थन का ही नतीज़ा था कि कालेज की छात्राएँ भारत विरोधी मुहिम में शामिल होने लगीं। "बुर्कापोश लड़कियों की एक छोटी-सी तादात नारे लगा रही थी। अचानक मिसेज अहमद स्टाफ रुम से निकल कर आयीं और खींच-खींच कर लड़कियों को गेट के पास खड़ा करने लगीं।"[4] एक और अध्यापिका आबिदा अंजलि के सवालों का जबाब देते हुए कहती है" नहीं, अंजलि। आजादी हमारा हक है। तुम तो मेरी अपनी बेटी हो। तुमसे तो मैं खुलकर बात कर सकती हूँ। हिन्दुस्तान को हमें हमारा हक देना ही पड़ेगा। तुम नहीं जानती कितने नौजवान निकल पड़े हैं लड़ने के लिए। "उन्होंने आसमान की तरफ आँखों से इशारा किया।"[5] ये विचार किसी जाहिल के नहीं थे, एक अध्यापिका के थे। अंजलि जैसे लोगों के लिए इनके दिल में कोई जगह नहीं थी। आबिदा भी उन्हीं लोगों में शामिल है जिसके बच्चे पहले ही पढ़ाई के बहाने कश्मीर से बाहर भेजे जा चुके हैं। मिसेज अहमद और आबिदा जैसे लोग सेकुलर लेखन को बेपर्दा करने के लिए पर्याप्त हैं जो यह कहते हुए नहीं थकते कि ये जाहिलों की करतूत है। वे अशिक्षित लोग हैं। यही तो सबसे बड़ा झूठ है और इसी झूठ का खामियाजा रवि और राजू जैसे लोगों को भुगतना पड़ता है। वे या तो मारे जाते हैं या फिर विस्थापित जीवन जीने को बाध्य होते हैं। बतौर अध्यापिका अंजलि कितनी भी प्रगतिशील क्यों न हो जाए, वामपंथी लेखन ने उस पर कितना भी असर क्यों न छोड़ा

हो लेकिन सच तो यह है कि धुएँ के गुबार और आग लपटों ने उसके भीतर भी डर पैदा किया है, घुटन पैदा किया है। लेखिका संजना कौल ने पात्र अंजलि के मनोंभावो को कुछ इस प्रकार से अभिव्यक्त किया है-"अंजलि को आग से बुरी तरह डर लगने लगा था। जैसे ही वह जलते हुए मकानों को देखती थी या रात के अँधेरे में आग से लाल हुए आसमान पर उसकी नज़र पड़ जाती थी, उसके हाथ पैरों की शक्ति जैसे निचुड़ जाती थी। एक बात से वह परेशान रहने लगी थी। उसके पढ़ने लिखने का कमरा मकान की तीसरी मंजिल में था और अँधेरे में वहाँ जाने से कतराने लगी थी। वहाँ दीवार में दो छोटे-छोटे सुराख थे और उसे लगता था, दो खूँखार आँखें उसे घूर रही हैं।"[6]

पाकिस्तान से विभाजन के दौरान हुए विस्थापन और स्वतंत्र भारत में हुए कश्मीरी हिन्दुओं के विस्थापन पर तो थोड़ी बहुत चर्चा हो भी जाती है लेकिन पूर्वी पाकिस्तान वर्तमान में बंगलादेश से हुए विस्थापन पर उतनी चर्चा नहीं होती और न ही तिब्बती बौद्धों के विस्थापन पर। 'कुलभूषण का नाम दर्ज कीजिए' उपन्यास में लेखिका अलका सरावगी ने पात्र कुलभूषण के बहाने बांग्लादेश देश से हुए हिन्दुओं के विस्थापन पर प्रकाश डाला है। यहाँ भी हिन्दुओं को निशाना बनाया गया। क्या गरीब, क्या अमीर सभी के लिए अपना वतन अब अपना नहीं रहा। महिलाओं पर सबसे ज्यादा जुल्म हुए। हिंदू मिल मालिकों से उनकी मिलें छीन ली गयी। उन्हें झूठे मुकदमों में फँसाकर जेल भेजा गया, उनके घरों पर नज़र रखी जाने लगी। हजरत बल का दंगा कश्मीर में और तनाव कुष्टिया में। जागेश्वरी मिल के मालिक कार्तिक बाबू ने तो कभी हिन्दू मुसलमान में भेद नहीं किया, वे 14 अगस्त को आजादी का उत्सव मनाते हैं, पाकिस्तान का झंडा वर्षों से फहराते आये हैं लेकिन अचानक

उनकी हाथों में हथकड़ी, उन पर शक इसलिए कि वे हिंदू हैं। अनिल मुखर्जी के परिवार के साथ आखिर हुआ क्या था? इसका उत्तर ढूँढ़ने के लिए कुलभूषण भारत में बने शरणार्थी शिवरों का चक्कर लगाता है और एक दिन उसे जबाब मिल ही जाता है। अचानक उसकी मुलाकात अनिल दा के बड़े बेटे श्रीकांत से होती है और फिर श्रीकांत ने जो वृत्तांत सुनाया उसे सुनकर कुलभूषण के मन में कुछ सुनने की इच्छा शेष न रही। बकौल श्रीकांत "हम अपने ताऊ की बेटी की सगाई में गये थे। किसे पता था कि हमारी जिन्दगी भी उन्हीं की जिन्दगी के साथ बरबाद हो जाएगी। जिस धरती पर पले- बड़े हुए, वह धरती ही छोड़नी होगी। ढाकेश्वरी मिल पर बाहर के बिहारी मजदूरों ने हमला किया था। ताऊजी का ऐसा दबदबा था कि उन्होंने कहा अभी पुलिस आ जाएगी। पर पुलिस आयी ही नहीं। हमारे आस पास के क्वाटरों में चीखने पुकारने की आवाजें आने लगी, तब भी ताऊ जी ने कहा घर के अंदर रहो। पर ताऊ जी गलत निकले। जब गुण्डों ने घर के सामने के दरवाजे को तोड़ना शुरु किया, तब ताऊ जी को होश आया। तब तक देर हो चुकी थी। सारी औरतों को एक कमरे में बन्द कर ताऊजी बाहर बैठे रहे। मैं छत से सटे आम के पेड़ पर छिप गया था। पहले ताऊ जी को हथौड़े से मारकर बेहोश किया। जो सामने आया, उसे डण्डों से मारकर गिरा दिया। इसके बाद दोनों लड़कियों को उठा ले गये।"[7] अनिल मुखर्जी जो कुल भूषण से घंटों बतियाते थे आज मिलने की स्थिति में नहीं, बेटियाँ बस जिंदा हैं। श्यामा धोबी भी गोबिन्दो की तरह ही अपने मालिक का वफादार है। कोई कुछ भी कहे, कितना भी भड़काए उस पर फर्क नहीं पड़ता। खोकोन की बातें भी उस दिन झूठ साबित हो जाती हैं जब गोबिन्दो धोबी को गोली लगती है। सब जानने वाले खोकोन को यह नहीं पता था कि दुश्मन के लिए क्या गरीब क्या अमीर। धोबी समाज की बैठकों में खोकोन कहा करता था "हमें मुसलमानों से कोई खतरा नहीं है। वे सिर्फ ऊँची जाति के पैसे वाले हिन्दुओं को यहाँ से भगाना चाहते हैं। वे हमें कभी भगाना नहीं चाहेंगे। हमें पहले की तरह उनसे मेल जोल से रहना चाहिए। हिन्दू मुसलमान का फर्क गरीबों के लिए नहीं है। हिन्दू गरीब और मुसलमान गरीब का एक ही धर्म है पेट पालना।"[8] यही तो वामपंथ की अवधारणा है, खोकोन भी इसी अवधारणा का शिकार हुआ। उच्च वर्ग और निम्न वर्ग में समाज बाँटकर बारी-बारी से उनके शोषण का नायाब तरीका है वामपंथ। खोकोन गरीब है इसलिए वह बच जाएगा यह एक ऐसा भ्रम था जिसे समझने में बड़े बड़े विद्वानों से भी चूँक हो जाती है। मुसलमानों की भाषा उर्दू होनी चाहिए यह तय करने वालों ने जब केवल भाषा के लिए अपने ही कौम के लोगों को मौत के घाट उतार दिया तो वे खोकोन और श्यामा जैसे गरीब हिन्दुओं को भला क्यों बख्शते?

यहीं रहेंगे, ये हमारा मुल्क है कि रट लगाते रहने वाले कुलभूषण के पिता को भी एक दिन अपना सब कुछ छोड़कर भारत आना पड़ता है। बाँग्लाभाषी मुसलमान आज वहाँ सत्ता में हैं लेकिन उन हिन्दुओं का क्या हुआ जिनकी बड़ी-बड़ी जूट मिले हुआ करती थीं? कार्तिक बाबू की बेवा को न्याय मिला क्या? श्याम धोबी और उसकी पत्नी के हत्यारों पर क्या कोई मुकदमा चला? अनिल मुखर्जी के केस का क्या हुआ? दरअसल इसका उत्तर तलाशने की फुर्सत किसे है? किसे भारत का नागरिक होना चाहिए किसे नहीं यह तय करने की फुर्सत किसे है? खैर लोग भारत आए, यहीं बस गये। मुक्तवाहिनी ने उर्दू से तो मुक्ति पा ली लेकिन विस्थापित आज भी अपनी स्मृतियों को संजोये यात्रा पर हैं। वे इस आस में हैं कि उनकी आने वाली पीढ़ियाँ एक न एक दिन अपने मूल स्थान का दौरा जरुर करेगीं।

संदर्भः

1. दर्दपुर (उपन्यास)-क्षमा कौल, ज्योतिपर्व प्रकाशन 99, ज्ञान खंड-3 इंदिरापुरम गाजियाबाद -पृष्ठ सं.148
2. दर्दपुर(उपन्यास)-क्षमा कौल, ज्योतिपर्व प्रकाशन 99, ज्ञान खंड-3 इंदिरापुरम गाजियाबाद -पृष्ठ सं.148-149
3. दर्दपुर(उपन्यास)-क्षमा कौल, ज्योतिपर्व प्रकाशन 99, ज्ञान खंड-3 इंदिरापुरम गाजियाबाद -पृष्ठ सं.266
4. पाषाण युग (उपन्यास)-संजना कौल, आधार प्रकाशन पंचकूला हरियाणा, पृष्ठ सं.59
5. पाषाण युग(उपन्यास)-संजना कौल, आधार प्रकाशन पंचकूला हरियाणा, पृष्ठ सं.59
6. पाषाण युग(उपन्यास)-संजना कौल, आधार प्रकाशन पंचकूला हरियाणा, पृष्ठ सं.46
7. कुलभूषण का नाम दर्ज कीजिए (उपन्यास)-अलका सरावगी, वाणी प्रकाशन, दरियागंज नई दिल्ली पृष्ठ सं.159-160
8. कुलभूषण का नाम दर्ज कीजिए (उपन्यास)-अलका सरावगी, वाणी प्रकाशन, दरियागंज नई दिल्ली पृष्ठ सं.-65

❖

पोस्ट डाक्टोरल फेलो, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी
स्थायी पता-ग्रा.अकबालपुर, पो.इटौरी जिला अम्बेडकर नगर उत्तर प्रदेश
पिन .224159 मो.नं.9452562847

मॉरीशस के उपन्यासों में नशे की समस्या : एक आलोचनात्मक अध्ययन

(अभिमन्यु अनत के उपन्यासों के विशेष संदर्भ में)

शालेहा प्रवीन

"यह ड्रग्स की समस्या इसलिए मॉरीशस के समाज में तेज़ी से फैल रही है क्योंकि राजनीतिक दल एवं प्रशासनिक अधिकारी भी इससे संबंधित हैं। उन्हें उनका कमीशन मिलता रहता है अत: वह नशे के अवैध व्यापारियों के खिलाफ कोई ठोस कार्यवाही नहीं करते। जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण 'अस्ति-अस्तु' उपन्यास में देखने को मिलता है- "लेकिन जब तुम्हारे मित्र...वो क्या नाम है...हमजा। हाँ, जब मैंने नाम-पता बताए बिना हमजा मियाँ के लिए उसके सामने प्रस्ताव रखा तो साले की आँखें बाहर निकाल आई। तीनों पार्टियों के लिए माँग बैठा दो-दो मिलियन। मैंने, 'हाँ' कर दिया और कहा, 'ड्रग्स विभाग के चीफ इंस्पे-क्टर, कस्टम के अधिकारी और उसे आज ही रात कैश पेमेंट हो जाएगा।"

सम्पूर्ण विश्व आज नशे की समस्या से जूझ रहा है। नशे की समस्या दो रूपों में समाज में व्याप्त है, पहला मद्यपान के सेवन के रूप में और दूसरा मादक पदार्थों के सेवन के रूप में। इन दोनों रूपों की शुरुआत अल्पकालिक मनोरंजन से प्रारम्भ होती है, और आगे चलकर यह एक विकराल समस्या में बदल जाती है। इन दोनों के सेवन की लत की समस्या में बहुत कुछ समानता है। दोनों में क्षणिक सुखद मनोदशा उत्पन्न करने के लिए प्राय: रासायनिक पदार्थों का आदतन प्रयोग किया जाता है, जिसका परिणाम अत्यंत गंभीर हो जाता है। नशे की लत के घातक एवं अनर्थकारी परिणाम होते हैं। नशे संबंधित पदार्थ नशे करने वाले को शारीरिक रूप से प्रभावित करती है, उसकी काम करने की और कमाने की क्षमता को नष्ट कर सकती है, उसके पारिवारिक जीवन को बर्बाद कर सकती है, और उसके मनोबल को पूर्ण रूप से गिरा सकती है। "मादक पदार्थों के दुरुपयोग के कारण क्या हैं ? कारणों को चार श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है: (1) मनोवैज्ञानिक कारण, जैसे तनाव को कम करना, अवसाद को शान्त करना, अंतर्बाधाओं को हटाना, कौतूहल को पूरा करना, खिन्नता और ऊब को दूर करना, तथा अनुभूति को तीव्र करना। (2) सामाजिक कारण, जैसे सामाजिक अनुभवों को सुसाध्य बनाना, मित्रों द्वारा स्वीकार किया जाना, तथा सामाजिक मूल्यों को चुनौती देना। (3) शारीरिक कारण, जैसे जागते रहना, कामुक अनुभवों को उभारना, पीड़ा निवारण और नींद पा लेना। (4) विविध कारण, जैसे, अध्ययन को उत्कृष्ट बनाना, धार्मिक अंतर्दृष्टि तेज करना, आत्म-ज्ञान बढ़ाना, तथा व्यक्तिगत समस्याएँ हल करना, आदि।"[1]

मॉरीशस में शराब एवं ड्रग्स की समस्या बहुत ही गंभीर समस्या है। यह समस्या दिन प्रतिदिन और अधिक विकराल होती जा रही है। कॉलेजों के युवक युवतियाँ हों, कारखानों व मिलों के मजदूर हों, सैनिक हों, रिक्शा व बस-ट्रक चालक हों, कृषक हों, वकील, डॉक्टर, इंजीनियर, प्रशासक, साहित्यकार आदि हों, समाज में आर्थिक दृष्टि से समर्थ या असमर्थ वर्ग हों सभी में नशे की लत का प्रचलन तीव्रता से बढ़ता जा रहा है। मॉरीशस में नशे की समस्या को अभिमन्यु अनत ने अपने उपन्यासों में ज्यों का त्यों प्रस्तुत किया है।

मॉरीशस में ड्रग्स एवं मादक पदार्थों का प्रचलन बहुत अधिक बड़ा है, जो एक सामाजिक समस्या के रूप में मॉरीशस के निवासियों को चुनौती दे रही है, जिसके कारण अनत जी ने इसे अपना कथ्य बनाया है और लोगों को इस गंभीर समस्या से अवगत करने का प्रयास किया है। 'अचित्रित' उपन्यास से एक उदाहरण दृष्टव्य है- "आँखें एकदम खाली और खोखली थीं। आँसू की एक बूँद भी नहीं थी उनमें। उसका गोरा

चेहरा हल्दी से पुता हुआ-सा नज़र आ रहा था। साफ़ दिखाई पड़ था कि उसमें कुछ था तो सिर्फ नशीली गोलियों की चाह। पिछले दिनों मरियम ने बताया था कि अब तो वह सुइयाँ भी लेता है, स्नीफ और ट्रीप दोनों लेता है। मैं जानती थी कि उसे समझाना बेकार था।"[2]

शराब की लत व्यक्ति को परिवार एवं समाज से दूर कर देती है। युवा वर्ग शराब की आदत में इस कदर पड़ जाते हैं कि परिवार से छुपकर यह कार्य करते हैं। 'मेरा निर्णय' उपन्यास से एक उदाहरण दृष्टव्य है- "मेरे भाई के कमरे से अगरबत्ती की सुगन्ध आ रही थी जब मैं भीतर पहुँची। भैया को समय ही नहीं मिला की वह शराब की बोतल और अपने अधखाली ग्लास को छिपा सके। मैं अपने साथ विमला को लिए हुए भैया के कमरे की और बढ़ी थी, पर माँ ने विमला का हाथ थामकर उसे अपने पास बिठा लिया था। माँ के उस रवैये को भैया के कमरे में पहुँचने के बाद ही मैं समझ पायी। यानी कि मैं भैया के पास अपनी बेटी के साथ न जाकर अकेली जाऊँ। मैंने एक हाथ में रम की बोतल और दूसरे हाथ से अधखाली ग्लास को थामे भैया से पूछा यह क्या हो रहा है भैया ?"[3]

नशे की लत के करण युवाओं के जीवन में भटकाव का आना आम बात हो गयी है। कम उम्र के बच्चे सिगरेट-बीयर के नशे में पड़ कर नैतिक मूल्य खोते जा रहे हैं और अधिक चिड़चिड़े व गुस्सेल हो रहे हैं, जिसका चित्रण 'अस्ति-अस्तु' उपन्यास में उपन्यासकार ने किया है- "अपने भाई के गले में बाँहें डाल संगीता उसे देखती रही। फिर बोली थी, तुम हमें प्यार नहीं करते। अगर करते तो हमारीबाट कब की मान गए होते। अभी भी समय है, अपने को इस नकली दुनिया से बाहर कर लो। बीयर और सिगरेट पीने की अभी तुम्हारी उम्र नहीं हुई है। अच्छे घर के बच्चे रात देर तक बाहर नहीं रहते।"[4]

नशे की आदत युवाओं में बहुत गंभीर समस्या को जन्म देती है। युवा वर्ग नशे की लत के कारण अपने परिवार से अलग होकर अपनी नशे की दुनिया में ही खो जाना अधिक पसंद करते हैं और अपनी ज़िंदगी को बर्बाद कर देते हैं, जिसका चित्रण निम्नलिखित गद्यांश में हुआ है- "मादक द्रव्यों को न पाने पर दु:खी होता है, जानकी, तुम्हारे दु:ख से नहीं। आँधी और तूफान में भी वह अपनी उस चीज की तलाश में मीलों दूर जा सकता है। अपने जुनून में वह यह सोच नहीं पता कि खुद होना क्या होता है। हमारा सोमू अपने भीतर एक अजनबी को पाल रहा है और उस अजनबी के लिए अपने आपको तबाह करने में लगा हुआ है।"[5]

नशे में लिप्त युवा वर्ग में सबसे बड़ी समस्या तब उत्पन्न होती है जब वह नशे में दूत समलैंगिग संबंध स्थापित कर लेते हैं। और जब होश में आते हैं तो उनसे बार-बार इस किए गए काम के लिए उनसे पैसे मांगे जाते हैं, उन्हें ब्लैकमेल किया जाता है। परिणामस्वरूप उन्हें तरह-तरह की यातनाओं का शिकार होना पड़ता है- "शुरू में सोमू ने बहुत हाथ-पाँव मारे थे, पर सीबू के बलिष्ठ बंधन से अपने को नहीं छुड़ा पाया था। वक्त के साथ जब सोमू ने नाक से स्नीफिंग और दम की जगह सुई इस्तेमाल करके शूटिंग करने लगा था तो सीबू के गले में पहले वहीं बाँहें डालने लगा था। सीबू के दो अन्य मित्र थे, जो सोमू से रुपए और ब्राउन शुगर पाकर उसके यार बन गए थे। लेकिन वह समय भी आया, जब उसके तीनों यार उसे ड्रग्स के लिए ललचाते रहते, अधिक रुपए लाने के तकाजे करते। न मिलने पर औरों के बीच उसे सोमू न पुकारकर 'सीमी डार्लिंग' कहकर चिढ़ाने लगे थे। घर से भाग कर सोमू शहर की सुनसान सड़कों पर चिल्लाता था, 'मैं सीमी नहीं, सोमू हूँ।"[6]

कॉलेज एवं विश्वविद्यालयों में युवाओं को मादक पदार्थों की लत लगा कर नशे के व्यापारी भारी मुनाफा कमाते हैं। विद्यार्थी ऐसे नशे के व्यापारियों का प्रमुख निशाना होते हैं क्योंकि बच्चों को मादक वस्तुओं की आदत लगाना आसान होता है। जिसके लिए यह नशे के व्यापारी कॉलेज के किसी युवा या युवती को ड्रग सप्लाइयर बनाते हैं। उदाहरण के लिए 'अस्ति-अस्तु' उपन्यास की पात्रा सोफी को देख सकते है- "वह लड़की साधारण कपड़ों में होती थी, फिर भी उसके पास मोबाइल फोन था। कई बार ट्यूशन के बीच उसके कॉल आ जाते और वह अध्यापक से इजाजत लेकर बात करने बाहर चली जाती थी। कई बार अध्यापक उससे कह चुका था कि 'सोफी। तुम अपना मोबाइल ट्यूशन के दौरान ऑफ कर दिया करो। किन्तु वह हर बार भूल जाती।" भूल जाती?" "भूलने का बहाना करती। वास्तव में वह लड़की अपने कॉलेज के दोस्तों के बीच गाँजा और ब्राउन शुगर बेचा करती थी। मेरे दो साथी भी उसके ग्राहक थे।"[7]

नशे के व्यापार में छोटे-छोटे मासूम बच्चों को भी अपना शिकार बनाया जाता है। उन्हें ड्रग्स सप्लायर के रूप में प्रयोग किया जाता है ताकि कोई उन पर शक न कर सके। जिसका चित्रण 'शब्द भंग' उपन्यास में हुआ है- "पहले ही जिस सुर्खी पर नज़र पड़ी उसे देख वह स्तब्ध-सा रह गाय। 'बेलमार के समुद्र-तट से एक लड़का लापता।' इसके साथ जिस लड़के की तस्वीर थी उसे रोबीन पहचानता था। उसने अपनी बढ़ आयी साँस की रफ्तार पर काबू पाते हुए आगे पढ़ना शुरू किया। पिछले मंगलवार से लामार लाशो का एक लड़का जिसकी उम्र लगभग तेरह-चौहद साल की रही होगी, बेलमार समुद्र-तट से अभी तक अपने घर को नहीं लौटा। यह लड़का इलाके के होटलों में सैलानियों

को कौड़ियाँ-सीपियाँ बेचने का काम करता था। उसके बाप सोहना का यह कहना है कि उसका बेटा कुछ दिनों से ऐसे लोगों के जाल में फँसा हुआ-सा था जो शायद नशीले द्रव्यों का धंधा करते हैं।"[8]

उपर्युक्त समस्या को आगे और विस्तृत रूप में कथाकार प्रस्तुत करते हुए मॉरीशस में कॉलेज के विद्यार्थियों में बहुत ही तेज़ी से फैलती इस समस्या पर चिंता भी व्यक्त की है कि इस नशे के कारण युवा अपने पथ से भ्रमित हो रहे हैं- "लोग चोरी-छिपे इस धंधे को फैलाते चले जा रहे हैं। अब तो कॉलेज में भी यह ज़हर फैलता जा रहा है। मैं जनता हूँ कि तुम लोगों के इस नरक से मैं अपने बच्चे को कैसे बचा पाया। तुम्हारे जैसे लोगों के दरिंदे अब लड़कियों से भी ड्रग्स के धंधे कराने लगे हैं।"[9]

यह ड्रग्स की समस्या इसलिए मॉरीशस के समाज में तेज़ी से फैल रही है क्योंकि राजनीतिक दल एवं प्रशासनिक अधिकारी भी इससे संबंधित हैं। उन्हें उनका कमीशन मिलता रहता है अत: वह नशे के अवैध व्यापारियों के खिलाफ कोई ठोस कार्यवाही नहीं करते। जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण 'अस्ति-अस्तु' उपन्यास में देखने को मिलता है- "लेकिन जब तुम्हारे मित्र...वो क्या नाम है...हमजा। हाँ, जब मैंने नाम-पता बताए बिना हमजा मियाँ के लिए उसके सामने प्रस्ताव रखा तो साले की आँखें बाहर निकाल आई। तीनों पार्टियों के लिए माँग बैठा दो-दो मिलियन। मैंने, 'हाँ' कर दिया और कहा, 'ड्रग्स विभाग के चीफ इंस्पेक्टर, कस्टम के अधिकारी और उसे आज ही रात कैश पेमेंट हो जाएगा।"[10]

मॉरीशस में भी भ्रष्टाचार चरम पर है। राजनेताओं से लेकर लालफ़ीताशाही तक सभी इसमें लिप्त नज़र आते हैं। जिसका चित्रण अभिमन्यु अनत ने किया है। पुलिस पैसों के लालच में पड़कर बड़े से बड़े गुनहगार को भी कैसे बेगुनाह साबित कर देती है इसका उदाहरण 'अस्ति-अस्तु' में देखा जा सकता है- "पुलिस की जल्दबाजी में गलत ख़बर। कल के एक अख़बार में कंटेनर में ब्राउन शुगर पाये जाने की जो बात छपी थी उसे पुलिस गलत बता रही है। पुलिस का कहना है कि संदेह पुलिस को जरूर हुआ था। मुंबई के एंटी ड्रग्स विभाग से ऐसी संभावना का संकेत पुलिस को मिला था। इस सूचना के मिलते ही कस्टमवाले सचेत हो गए थे। शलवार-कमीज, शेरवानी इत्यादि रेडीमेड कपड़ों के उस कंटेनर को बन्दरगाह के कस्टम विभाग ने रोक लिया था। यह माल यहाँ का एक मशहूर व्यापारी पाकिस्तान से मँगवाता है। पुलिस को शक था कपड़ों के बीच ब्राउन शुगर का एक पैकेट है। लेकिन यह शक निराधार प्रमाणित हुआ।"[11]

राजनेताओं एवं लालफ़ीताशाही अफसरों का गठ जोड़ का चित्रण एवं ड्रग्स के व्यापार में पुलिस कर्मियों एवं राजनेताओं की मिली भगत को भी 'अस्ति-अस्तु' उपन्यास में दर्शाया गया है- "हाँ, करन। सभी कुछ पहले से तय था। वह ड्रग्स पुलिस के हाथों परमेश्वर यानी कि वित्त मंत्री के पास पहुँचा और वहाँ से..." "धंधा करने वाले ड्रग्स-बेरन के पास।" "तुम्हारे मंत्रि को उसका हिस्सा देने के बाद। उतनी ही बड़ी रकम, जो पुलिस, कस्टम और ड्रग्स यूनिट को दी गई।" "लेकिन इसका सबूत ?" "ये लोग सबूत नहीं छोड़ते। इसे परफेक्ट स्मगलिंग कहते हैं, परफेक्ट क्राइम। लोग यह पूछते रहते हैं कि आखिर ड्रग्स माफिया का सरदार क्यों कभी पुलिस के हाथ नहीं आता। इसलिए कि उसे पुलिस और राजनीति दोनों का संरक्षण प्राप्त है"[12]

ड्रग्स माफिया के मुखियाओं को सदैव सत्तासीन सरकारें बचाती आयी हैं और जनता को दिखाने एवं अपनी सरकार को बनाए रखने के लिए किसी छोटे-मोटे गिरोह को पकड़ कर हिरासत में डाल वाह-वाही लूटती हैं। जिसके कारण ड्रग्स की समस्या मॉरीशस में ज्यों की त्यों बनी हुई है, जिसका चित्रण 'अस्ति-अस्तु' में कथाकार करते हुए नज़र आते हैं- "मैंने तो पुलिस कमिश्नर को माफिया के उस मुखिया का नाम भी बताया जिसके पास मेरे कंटेनर का ड्रग्स पुलिस द्वारा पहुँचाया गया। पर कौन उसे हिरासत में लेकर पूछताछ का सकता है ? पुलिस तो छोटे-मोटे ड्रग्स बेचने, खरीदने और सेवन करने वाले को गिरफ्तार करके अखबारों में तसवीरें छपवा रही है। टी. वी. पर किला फतह करने की डींग हाँक रही है।"[13]

नशे के व्यापार का चित्रण 'शब्द भंग' उपन्यास में जगह-जगह पर देखने को मिलता है। मॉरीशस समाज में नशे की समस्या गहराई से फैल चुकी है, जिसका स्पष्ट प्रमाण निम्नवत उदाहरण में दृष्टिगत है- "कार चलाते हुए रास्ते भर वह उन आँकड़ों के बारे में सोचता रहा जो कल रात वह बायात की फाइलों से निकाल पाया था। छह मील के भीतर एक मिलियन से कम की आबादी वाले देश में आठ सौ मरीजों को अस्पताल में भर्ती किया गया था जो अफीम, ब्राउन शुगर और दूसरे अन्य जहरीले द्रव्यों के शिकार थे। छः महीनों में साठ व्यक्तियों को एयरपोर्ट पर धंधा करने के जुर्म में गिरफ्तार किया गया। उनसे हासिल जब्त किए द्रव्यों की कीमत तीस मिलियन रुपये से ज्यादा की थी। पोर्टलुई शहर के एक विशेष इलाके में पाँच सौ से ऊपर इन द्रव्यों का सेवन करने वाले बीस वर्ष से कम आयु के थे। जो पाँच आदमी सबसे अधिक उस धन्धे से कमाये बैठे थे वे उसी इलाके के थे और अपने ही इलाके में मौत बेचकर ग्यारह लोगों को मौत के घाट उतार चुके थे। उनमें जो सभी का गुरुघंटाल समझा जाता था उसके पास इस समय

पाँच बंगले, पाँच घर, तीन कारें और घुड़दौड़ में दौड़ने वाले चार घोड़े थे। उसकी आमदनी रोजाना पन्द्रह हजार की थी। ये वे सारे आंकड़े थे जिन्हें सोच-सोचकर रोबीन का सिर चकरा रहा था।"[14]

मॉरीशस में नशे के व्यापार की गहरी जड़ों की वास्तविक स्थिति का पता इन उदाहरण से स्पष्ट हो जाता है कि अफीम गाँजा ड्रग्स जैसे मादक पदार्थ कितनी आसानी से देश में लाये और बेचे जाते हैं। "अस्पताल के आँगन मेन चार-पाँच पुलिस के सीपहियों को देखकर मैंने मरियम से जानना चाहा कि यहाँ हमेशा पुलिस की इतनी सख्त निगरानी होती है। लकड़ी की बेंच में हमारी बगल ही में बैठी एक महिला ने हमें बताया कि कल अस्पताल के परिचारक के बस्ते से अफीम की छोटी-छोटी पच्चीस पोटलियाँ बरामद हुई हैं। यही कारण है कि पुलिस के सिपाही अभी भी अहाते से बाहर नहीं हुए थे। इस जानकारी से मुझे जितनी हैरानी हुई उससे कहीं अधिक सवाल मेरे भीतर उधम मचा उठे। कैसे-कैसे लोग इस नशीली दवा के धंधे से जुड़े हुए हैं।" "मैंने देश में फैल रही नशीली दवाओं के बारे में अपनी हैरानी जाहिर की थी और वह हँस कर बोला था- तुम यह पूछ रही हो कि यह चीज इन सारी जगहों में कैसे पहुँच जाती है। अरे इसका धंधा सिर्फ हम बेकार लोग ही नहीं करते। इसे फैलाने वालों में तो कॉलिज का अध्यापक भी है, कैदखाने का सिपाही भी है, अस्पताल का परिचारक भी इसमें उतना ही शामिल है जितना होटलों में काम करने वाला कोई नौकर। इस धंधे से तो दवाखाने वाला भी कमाता है, पुलिस भी, राजनेता भी और... और तो और, मेरे अपने एक दोस्त का बाप भी गाँजे का यह कारोबार करता है। जानते हो उसका पेशा क्या है ? वह पुजारी है।"[15]

निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि नशे की समस्या समसामयिक समस्या है, जो आज सम्पूर्ण विश्व में अपने पैर पसार चुकी है। नशे के सेवन से आज सभ्य व सुशिक्षित वर्ग ज्यादा ग्रसित है। वे नशे का सेवन करने से स्वयं को एलिट वर्ग का मानने लगते हैं। उनकी ऐसी मानसिकता बन चुकी है कि यदि आप पाश्चात्य सभ्यता का अनुकरण करते हैं तो आप ज्यादा सभ्य और उच्च वर्ग की श्रेणी में आएंगे और इसका दुष्प्रभाव सबसे ज्यादा युवा वर्ग पर पड़ा है। जो एक विश्व संकट बन चुका है। कहा जाता है कि किसी भी देश का भविष्य उस देश के युवा वर्ग निर्धारित करता है। जहाँ मॉरीशस की बंजर भूमि को भारतीय मूल के लोगों ने अपने खून-पसीने से सींचकर उपजाऊ बनाया था। आज उन्हीं की संतानें उस भूमि पर नशे के व्यापार को खड़ा कर रही हैं। निश्चित ही अभिमन्यु अनत ने अपने समाज को भाली भांति जाना पहचाना एवं भोगा होगा इसलिए समाज में व्याप्त विषमताओं को बहुत पास से महसूस किया है। अत: अपने उपन्यासों में मादक पदार्थों के सेवन जैसे सामाजिक मुद्दों एवं सामाजिक समस्याओं को बखूबी प्रस्तुत किया है।

संदर्भ ग्रंथ

1. आहूजा, राम, सामाजिक समस्यायें, रावत पब्लिकेशन, पृ.421, दूसरा संस्करण 2012.
2. अनत, अभिमन्यु, अचित्रित, प्रभात प्रकाशन, पृ. 47, प्रथम संस्करण 1989.
3. अनत, अभिमन्यु, मेरा निर्णय, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, पृ. 100, दूसरा संस्करण 2010.
4. अनत, अभिमन्यु, अस्ति-अस्तु, प्रभात प्रकाशन, पृ. 11, प्रथम संस्करण 2003.
5. अनत, अभिमन्यु, अस्ति-अस्तु, प्रभात प्रकाशन, पृ. 74-75, प्रथम संस्करण 2003.
6. अनत, अभिमन्यु, अस्ति-अस्तु, प्रभात प्रकाशन, पृ. 86, प्रथम संस्करण 2003.
7. अनत, अभिमन्यु, अस्ति-अस्तु, प्रभात प्रकाशन, पृ. 113, प्रथम संस्करण 2003.
8. अनत, अभिमन्यु, शब्द भंग, प्रभात प्रकाशन पृ. 130, प्रथम संस्करण 1989.
9. अनत, अभिमन्यु, अस्ति-अस्तु, प्रभात प्रकाशन, पृ. 121, प्रथम संस्करण 2003.
10. अनत, अभिमन्यु, अस्ति-अस्तु, प्रभात प्रकाशन, पृ.125, प्रथम संस्करण 2003.
11. अनत, अभिमन्यु, अस्ति-अस्तु, प्रभात प्रकाशन, पृ. 133, प्रथम संस्करण 2003.
12. अनत, अभिमन्यु, अस्ति-अस्तु, प्रभात प्रकाशन, पृ. 137, प्रथम संस्करण 2003.
13. अनत, अभिमन्यु, अस्ति-अस्तु, प्रभात प्रकाशन, पृ. 150, प्रथम संस्करण 2003.
14. अनत, अभिमन्यु, शब्द भंग, प्रभात प्रकाशन, पृ. 132, प्रथम संस्करण 1989.
15. अनत, अभिमन्यु, अचित्रित, प्रभात प्रकाशन, पृ. 123, प्रथम संस्करण 1989.

❖

विजय कुमार, शिवशकती ट्रेडर्स, धर्मशाला, जिला- कांडगड़ा , कर्मापा मंदिर के निकट , धर्मशाला, हिमाचल प्रदेश -176057
ईमेल shaleha02praveen@gmail.com संपर्क : 8750619476

अमृत महोत्मव: विकास के रास्ते 'वोकल फॉर लोकल'

डॉ. विशाल मिश्रा

अमृत महोत्सव के अंतर्गत देश की 75वीं वर्षगांठ विकास को समर्पित है। इस संबंध में ग्राम पंचायतों का सफर पर बात करेंगे। 1950 के दशक में, महान हिंदी रचनाकार फणीश्वरनाथ रेणु ने 'पंचलाइट' नाम से एक कहानी लिखी थी। यह कहानी ग्रामीण समाज को संदर्भित करते हुए उस युग को परिलक्षित करती है। इस कहानी में यह बताया गया है कि- कैसे अधिकांश ग्रामीण भारत में बिजली की पहुँच नहीं है। भारत के अधिकांश गाँवों में ढिबरी से उजाला प्राप्त करते हैं; पेट्रोमैक्स का खर्च और उसका निंवहन सबके बस की बात नहीं है। लेकिन अब पंचायती राज व्यवस्था के सशक्तिकरण के दिन आ गए हैं।

अमृत महोत्सव के अंतर्गत देश की 75वीं वर्षगांठ का अर्थ 75 साल पर विचार, 75 साल की उपलब्धियाँ, 75 पर एक्शन और 75 वर्ष पर संकल्प शामिल है, जो आज़ाद भारत के स्वप्न को साकार करने के लिए आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है।

इस वृहद आयोजन के द्वारा 'वोकल फॉर लोकल' अभियान को आगे बढ़ाने की कोशिश की जा रही है। इस अभियान को लोकप्रिय बनाने के लिए साबरमती आश्रम में मगन निवास के पास एक चरखा स्थापित किया जा रहा है। जब कोई इंसान किसी भी प्रकार का स्थानीय उत्पाद खरीदेगा तो 'वोकल फॉर लोकल' का प्रयोग करते हुए उस व्यक्ति की तस्वीर सोशल मीडिया पर पोस्ट होगी। इससे आत्मनिर्भरता से जुड़ी प्रत्येक ट्वीट के साथ यह चरखा एक बार घूमेगा।

दिलचस्प यह है कि पूरे देश में यह महोत्सव मनाया जा रहा है। इसके लिए प्रत्येक राज्य ने अपने स्तर पर तैयारियाँ प्रारम्भ कर दी हैं। भारत सरकार भी देश के विकास को बढ़ाने के लिए अपने प्रयासों में पीछे नहीं है। तत्कालीन समय में देश का मौजूदा फार्मूला फिलहाल समग्र विकास का है, इस कड़ी में विकास का लाभ अंतिम कड़ी तक पहुँच सके। इस फार्मूले को अमलीजामा पहनाने के लिए सरकार की नीतियाँ काम कर रही हैं। इस दृष्टि से सबसे पहले ग्रामीण बाजार पर बात करना चाहूँगा।

"जब हम कृषि में आत्मनिर्भरता की बात करते हैं तो ये सिर्फ खाद्यान्न तक ही सीमित नहीं है बल्कि ये गाँव की पूरी अर्थव्यवस्था की आत्मनिर्भरता की बात है। ये देश में खेती से पैदा होने वाले उत्पादों में वैल्यू एडिशन करके देश और दुनिया के बाजारों में पहुँचाने का मिशन है..."[1] वर्तमान प्रधानमंत्री की दृष्टि ना सिर्फ गाँवों को आत्मनिर्भर बनाने का है बल्कि ग्रामीण उत्पादों को विश्व-बाजार तक पहुँचाने का है। संचार क्रान्ति के इस बयार में लक्ष्य तक पहुँचना ही हमारा उद्देश्य है।

आत्मनिर्भर भारत का संकल्प हो या 'वोकल फॉर लोकल' की प्रतिज्ञा, इसे हम तभी साकार कर सकते हैं; जब ग्रामीण बाजार की-अर्थव्यवस्था को मूल बिंदु के तहत लाया जाए और इस लक्ष्य को साधने का एक फार्मूला है ग्रामीण मार्केटिंग। आज यदि ग्रामीण मार्केटिंग की स्थिति सुलभ नजर आ रही है तो यह अनायास नहीं है बल्कि सरकारों द्वारा 75 वर्ष की निरंतर इस दिशा में प्रयास है।

'वोकल फॉर लोकल' का मूल समझ स्थानीय उत्पादों को विश्व बाजार में प्रतिस्पर्धी बनाना है। भारत विविधता का देश है। भारत में

स्थानीय-विविधताओं से खाद्य के क्षेत्र में, वस्त्र उद्योग में व कलात्मक उत्पादों के जरिये इसे सफल बनाने की योजना है। इस प्रकार हम समावेशी विकास तक पहुँच सकते हैं। ऐसे में ग्रामीण मार्केटिंग 'वोकल फॉर लोकल' की संकल्पना साकार होगी।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के अनुसार- "देश की आज़ादी का अमृत महोत्सव कोटि-कोटि-भारतवासियों का पर्व है, जिसमें पूरे भारत की परंपरा भी है, स्वाधनीता संग्राम की परछाई भी है और आज़ाद भारत की गौरवान्वित करने वाली प्रगति भी है। यह आयोजन हमारे इन 75 वर्षों की उपलब्धियों को दुनिया के सामने रखने का और अगले 25 वर्षों के विकास की रूपरेखा और संकल्प के लिए प्रेरणा लेने का अवसर है।"[2]

ज्ञातव्य है कि ग्रामीण उत्पाद सिर्फ फसल उपजाने तक सीमित नहीं है। इसके अंतर्गत आदिवासी क्षेत्र, उत्तर-पूर्व में बने विभिन्न वन उत्पाद, हस्तशिल्प व हथकरधा उत्पाद भी आते हैं। इससे संबन्धित उत्पादनों में जुड़े लोगों के लिए पर्याप्त मेहनताना प्राप्त करवाने के लिए उन्हें बाजारों तक पहुँच स्थापित करने की जरूरत होती है। भारतीय केंद्रीय बजट 2018-2019 में सरकार द्वारा 22000 ग्रामीण बाजार (हाटों) को विकसित करने और आगे बढ़ाने की बात की गयी है। यह जान कर खुशी होती है कि 'मनरेगा' के तहत अब तक देश स्तर पर 1154 ग्रामीण हाटों में एक बुनियादी ढाँचे की नींव रखी जा चुकी है।

ग्रामीण मार्केटिंग में टिकने वाला उपभोग की संबंधी वस्तुएँ और सेवाओं के लिए ढेर संभावनाएँ हैं। ग्रामीण मार्केटिंग के बढ़ाने से कारोबार में, पेशे में और सेवाओं में भी उन्नति देखी जा रही है। यही कारण है कि रोजगार के काफी अवसर प्रकट हो रहे हैं। उत्पादों की मार्केटिंग से संबंधित पूरी प्रक्रिया में एक तरह की संचार तकनीकी और विज्ञापन की भूमिका होती है। इस तरह से एक बेहतर संचार तकनीकी ग्रामीण मार्केटिंग में बड़े बदलाव की तरफ इशारा देखा जा रहा है।

ध्यातव्य है कि 'वोकल फॉर लोकल' का मूल फार्मूला स्थानीय उत्पादों को विश्व बाजार में प्रतिस्पर्धी बनाना है। यह फार्मूला भारतीयों के लिए भारतीय उत्पाद तक सीमित नहीं है बल्कि विश्व बाजार को प्रदर्शित करता है। स्थानीय विविधता के जरिये खाद्य उद्योग, वस्त्र उद्योग तथा अन्य कलात्मक उत्पादों को तो इससे जोड़ने की बात की गयी है; साथ ही साथ, इसका ध्येय स्थानीय स्तर पर विकास की संभावनाओं को भी देखा गया है। इसके जरिये हम समावेशी-विकास के लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं। यही कारण है कि ग्रामीण बाजार 'वोकल फॉर लोकल' फार्मूले से सीधा संबंध रखता है।

प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी- "गाँव में भी डिजिटल एंत्रप्रेन्योर (उद्यमी) तैयार हो रहे हैं। गाँवों में जो हमारी सेल्फ हेल्प ग्रुप से जुड़ी 8 करोड़ से अधिक बहनें हैं, वो एक से बढ़कर एक प्रोडक्ट्स बनाती हैं। इनके प्रोडक्ट्स को देश में और विदेश में बड़ा बाज़ार मिले, इसके लिए अब सरकार ई-कॉमर्स प्लेटफार्म भी तैयार करेगी। आज जब देश 'वोकल फॉर लोकल' के मंत्र के साथ आगे बढ़ रहा है तो यह डिजिटल प्लेटफार्म महिला सेल्फ हेल्प ग्रुप के उत्पादों को देश के दूरदराज के क्षेत्रों में भी और विदेशों में भी लोगों से जोड़ेगा और उनका फलक बहुत विस्तृत होगा।"[3]

अमृत महोत्सव के अंतर्गत हम महिलाओं के 'आधी आबादी' की बात करते हैं तो इसका अर्थ है कि क्या दूसरी आबादी के तर्ज पर इन्हें वो सुविधाएँ मिल रही हैं? महानगरों में तो सुधार दिखता है, लेकिन गाँवों में बहुत कुछ किया जाना बाकी है। हाल ही में समाज हुए ओलंपिक खेलों में यह देखा गया कि महिला-खिलाड़ियों ने अपने अतीत को साझा किया। उन्होंने बताया कि क्यों वे अपने घर-परिवार के लिए बेहतर जीवन चाहती थीं और क्या कारण है कि उनके परिवार वालों ने संघर्ष के बावजूद गरीबी में जीवन यापन करते हुए खेल के रास्ते का चुनाव किया। इससे यह स्पष्ट होता है कि कठिन समय में भी इस दृढ़ फैसले को लेकर चलना सशक्तीकरण की ओर एक कदम है। इस जीवन रूपी दौड़ में आगे होना या उदाप्त पर होना ही जीत नहीं है। खेलों से मिलने वाला यह पाठ जीवन के गति में बिल्कुल सटीक हैं।

"खिलाड़ी के भीतर मानसिक दृढ़ता का अटूट बोध होना चाहिए क्योंकि मानसिक दृढ़ता खेल मनोविज्ञान का ऐसा घटक है, जो न केवल खिलाड़ी को अधिकतम क्षमता एवं अधिकतम प्रदर्शन तक पहुँचने के लिए प्रभावित करता है बल्कि खिलाड़ी को खेल एवं व्यक्तिगत जीवन में प्रतिकूल परिस्थितियों से निपटने में भी मदद करता है; मानसिक दृढ़ता खिलाड़ी को उनकी उपलब्धियों तथा स्वयं निर्धारित किए गए लक्ष्यों का अच्छी तरह बोध कराती है।

एकाग्रता अथवा व्यवधानों को अनदेखा कर हाथ में मौजूद कार्य

पर ही ध्यान लगाने की क्षमता खेल में सफल प्रदर्शन का महत्त्वपूर्ण निर्धारक तत्त्व होती है। लंबे समय से यह पता है कि कुशल खिलाड़ी अपने मन को बहकने देते हैं और प्रतियोगी वातावरण में वर्तमान में रहना उनके लिए कठिन होता है। शोध दिखाता है कि लोगों की एकाग्रता की प्रणाली उनके विकास तथा मनोविज्ञान से जुड़े कारकों के परिणामस्वरूप नाजुक ही होती है।"[4]

महिला खिलाड़ियों की सफलता उनकी शारीरिक क्षमता व मानसिक-स्थिरता पर आधारित होता है। अपनी क्षमता एवं स्पर्धा के स्तर पर महिलाएँ खेलों में हिस्सा ले रही हैं। इसीलिए अमृत महोत्सव: विकास के रास्ते में 'आधी आबादी' को आत्म निर्भर नारीशक्ति के तौर पर देखा जा रहा है।

हम जानते हैं कि भारत में खेल आदिकाल से जनजीवन का हिस्सा रहा है। भारतीय संस्कृति में खेल की दुनियां में उमंग और उल्लास के साक्ष्य भी मिलते हैं। रामायण और महाभारत जैसे महाकाव्यों में कुश्ती, तीरंदाजी, घुड़सवारी, रथदौड़ की लंबी परम्परा देखने को मिलती है।

भारत के ग्राम संस्कृति में खेलों का महत्त्व अनूठा है। प्रेम, मनोरंजन, शारीरिक व्यायाम का प्रयोग खेलों के माध्यम से स्पष्ट देखा जा सकता है। यही कारण है कि भारत के प्रत्येक राज्य में ग्रामीण खेल विकसित किए जा रहे हैं।

खेल की दुनिया आज वैश्विक स्तर पर बड़े कारोबार का रूप ले लिया है। खेल हमारे शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए अहम है। इसीलिए केंद्र सरकार की 'फिट इंडिया' की मुहिम एक सकारात्मक सोच है। फिट इंडिया अभियान "फिटनेस की डोज, आधा घंटा रोज' के अंतर्गत प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी का कहना है कि- 'फिट इंडिया अभियान को एक राष्ट्रीय लक्ष्य बनाना चाहिए। फिट इंडिया अभियान को सरकार द्वारा शुरू किया जा सकता है लेकिन इसकी अगुवाई लोगों को करनी होगी और इसे सफल बनाना होगा।'[5]

'आज़ादी का अमृत महोत्सव' भारत की आज़ादी के 75 साल का जश्न मनाने के उद्देश्य से की गयी भारत सरकार की एक पहल है। फिट इंडिया अभियान का उद्देश्य लोगों को खेल और स्वास्थ्य के प्रति जागरूक बनाना है। इसके साथ ही साथ राष्ट्रीय खेल दिवस के उपलक्ष्य पर 29 अगस्त, 2021 को फिट इंडिया मोबाइल ऐप भी लाँच किया गया।

भारतीय खेलों को तकनीकी से जोड़ने की शुरूआत की जा चुकी है। यह जरूर है कि खेल तकनीकी अभी अपने प्रारम्भिक चरणों में है। लेकिन इस क्षेत्र में बेहतर फल दृष्टिगत हो रहे हैं। इससे खेल निवेशकों में उत्सह का भाव जगा है। यदि भारत के खेल के क्षेत्र में महाशक्ति बनाना है तो हमें (आई.ओ.टी.) तकनीकी का सहारा लेना होगा।

खेल संसार में हो रहे विकास इस ओर संकेत करता है कि खेलों का भविष्य विशेष तौर पर भारत में आशाजनक है। हाल-फिलहाल भारत इस क्षेत्र में कदम दर कदम बढ़ रहा है। खेल जगत देश भर में राजस्व के साथ रोजगार सृजन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। चाहें भौगोलिक परिवेश हो, पारंपरिक विचार, ग्रामीण आय, अधिकतर खेलों से संबंधित नए निर्माण व ग्रामीण खेल के कारण ग्राम स्तर पर खेलों का कायाकल्प देखा जा रहा है। टोक्यो ओलंपिक और पैरालम्पिक में भारतीय खिलाड़ियों को मिली बेहतरीन सफलता के बाद देश में खेलों के प्रति नवीन भावना परीलक्षित हो रही है।

अमृत महोत्सव के अंतर्गत देश की 75वीं वर्षगांठ विकास को समर्पित है। इस संबंध में ग्राम पंचायतों का सफर पर बात करेंगे। 1950 के दशक में, महान हिंदी रचनाकार फणीश्वरनाथ रेणु ने 'पंचलाइट' नाम से एक कहानी लिखी थी। यह कहानी ग्रामीण समाज को संदर्भित करते हुए उस युग को परिलक्षित करती है। इस कहानी में यह बताया गया है कि- कैसे अधिकांश ग्रामीण भारत में बिजली की पहुँच नहीं है। भारत के अधिकांश गाँवों में ढिबरी से उजाला प्राप्त करते हैं; पेट्रोमैक्स का खर्च और उसका निंवहन सबके बस की बात नहीं है। लेकिन अब पंचायती राज व्यवस्था के सशक्तिकरण के दिन आ गए हैं।

पंचायती राज मंत्रालय प्रत्येक वर्ष 24 अप्रैल को राष्ट्रीय पंचायती राज दिवस के उपलक्ष्य पर राष्ट्रीय पंचायत पुरस्कारों के तहत श्रेष्ठ प्रदर्शन करने वाली पंचायतों/राज्यों/केंद्रशासित प्रदेशों को 5 लाख रुपये से 50 लाख रुपये तक के नकदी पुरस्कार व प्रोत्साहन देती है। जीतने वाले को इससे आगे कार्य करने की प्रेरणा मिलती है। परिणामस्वरूप सुशासन का वातावरण बनता है।

'यह माना जाता है कि दर्ज इतिहास की शुरुआत से पंचायतें गाँवों की रीढ़ रही हैं- विशेष रूप से भारतीय और सामान्य रूप से दक्षिण

एशियाई देशों में। किसी और से ज्यादा यह गांधी जी का सपना था कि वे प्रत्येक गांव को सत्ता सौंपें उनकी तात्कालिक चिंता के विषयों पर कानून बनाएँ। ग्रामीण पुनर्निर्माण में लोगों की भागीदारी को सूचीबद्ध करने के लिए त्रिस्तरीय पंचायती राज प्रणाली की शुरूआत उस लक्ष्य की ओर एक कदम है।'[6]

पंचायती राज प्रणाली हमारी संस्कृति और सभ्यता का अंग है। प्राचीन काल से भारत में पंचायतों के न्याय के द्वारा गांवों में एक आदर्श व्यवस्था को देखा जाता रहा है। इस व्यवस्था ने हमारे ग्रामीण जीवन और उससे जुड़ी अर्थव्यवस्था को इतना मजबूत बनाया कि दुनिया में आने वाले उठा-पठक भी उसे प्रभावित नहीं कर पाए हैं। संसाधनों के कमी के बावजूद इन पंचायतों का अपना सूचना-तंत्र भी मजबूत रहा।

पंचायतें शासन की प्रत्येक योजनाओं का अंतिम बिंदु होती हैं। देश की बड़ी आबादी तक शासन की सभी योजनाओं को पहुँचाने में पंचायतों का महत्त्वपूर्ण योगदान है। कई तरह के अभियान के माध्यमों से जैसे संविधान दिवस, कोरोना जागरूकता अभियान, फिट-इंडिया अभियान, अंतराष्ट्रीय योग दिवस आदि के द्वारा ग्राम सभाओं का आयोजन किया जाता है। इस आयोजन से ग्रामीण लोगों में भरोसा कायम होता है। अमृत महोत्सव: विकास के रास्ते 'वोकल फॉर लोकल' की कहानी इसी पंचायती विकास के समानान्तर है।

"वित्त वर्ष 2015-16 के दौरान व्यापक और सम्मिलित विकास योजना के वाहक के रूप में, ग्राम पंचायत विकास योजना की तैयारी को संस्थागत रूप दिया गया था। यह योजना प्रक्रिया गांव के समुदाय के सदस्यों द्वारा विकेन्द्रीकृत नियोजन की सुविधा प्रदान करती है। भारत सरकार और संबंधित राज्य सरकारों की विभिन्न योजनाओं के साथ-साथ 'स्वयं के स्रोतों से राजस्व' के माध्यम से उपलब्ध संसाधनों का अभिसरण, ग्राम पंचायतों को ग्राम सभा की सक्रिय भागीदारी के माध्यम से अपनी आवश्यकता-आधारित विकास योजनाएँ बनाने का अवसर प्रदान करता है।"[7]

आज़ादी के इस अमृत महोत्सव में पंचायत को डिजिटल करने व समावेशी बनाने की तरफ हम बढ़ रहे हैं। विकास की प्रक्रिया में ज्यादा कुशलता से हमें हिस्सा लेना है। योजनाओं की कुशलता और प्रभावी बनाने के लिए जमीनी स्तर पर निगरानी की आवश्यकता है। पंचायती राज मंत्रालय ने कार्य पूरा होने पर तैयार संपत्ति की- 'जियो-टैग' के साथ तस्वीरें लेने में सहायता के लिए मोबाइल आधारित समाधान के तौर पर एमएक्शन सॉफ्ट विकसित किया है। मंत्रालय का उद्देश्य ई-ग्रामस्वराज पोर्टल को वृहद स्तर देना है। फलस्वरूप ग्राम पंचायत प्रत्येक स्तर पर पारदर्शी हो।

"भारत का उत्तर-पूर्व क्षेत्र, दक्षिण-पूर्व एशिया के लिए खुल रहा है। हालांकि इस विषय पर काफी बात होती रही है। वर्ष 1990 की शुरुआत से ही यह संवाद, चर्चा और सम्मेलनों का विषय बना हुआ है लेकिन तब से इस संबंध में कोई प्रगति दिखाई नहीं देती। क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था को खोलने में एक महत्त्वपूर्ण कारक बांग्लादेश के साथ बेहतर व्यापार और राजनीतिक संबंध में निहित है। इससे उत्तर-पूर्व क्षेत्र, दक्षिण और दक्षिण-पूर्व एशिया में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने में सक्षम होगा। जैसी संभावना प्रधानमंत्री ने अलग-अलग समय पर अपनी ढाका और गुवाहाटी घोषणा में जताई और उनसे पहले अन्य नेता भी ऐसी संभावना जता चुके हैं।"[8]

इस प्रकार के संकल्पों और समाधानों से इस क्षेत्र में भी भारतीय युवा पीढ़ी को भरपूर प्रोत्साहन मिलेगा। इससे भविष्य उन्मूख जो शांति, सम्मान और न्याय को बल मिलेगा। भौतिक आधारभूत संरचना का निर्माण, व्यापार और विकास के इतर विकास का निश्चित भविष्य तय होगा। फलस्वरूप आंतरिक राजनीति, सामाजिक और आर्थिक मतभेदों का हल करना होगा।

इस क्रम में पूर्वोत्तर राज्यों के लिए त्वरित बहु-कौशल संस्थान शुरू किए जाने की जरूरत है। साथ ही साथ इस क्षेत्र के लिए उच्चतर शिक्षा को प्रशिक्षुता से जोड़ने की जरूरत है। इससे कार्य आधारित शिक्षण व्यवस्था से करियर की दिशा में एक नए आयाम खुलेंगे। इस क्षेत्र में लोग कृषि संबंधी मानसिकता पर बल देते हैं। इस बात की जरूरत है कि पूर्वोत्तर का क्षेत्र अपने कौशल विकास व उद्यमिता को प्रोत्साहन देगा।

किसी भी राष्ट्र के विकास का मानक वहाँ का स्वस्थ समाज होता है। प्रत्येक नागरिक नागरिक के स्वास्थ का सीधा संबंध उसके कार्य शक्ति से जुड़ी होती है। पूर्वोत्तर के स्वास्थ्य की भारत के अन्य राज्यों से बेहतर स्थिति में हैं।

लेकिन इसका अर्थ यह बिल्कुल नहीं है कि वहाँ पर स्वास्थ्य व्यवस्था के ढांचा की जरूरत नहीं है। भारत की कुल जनजातीय आबादी का 12 फीसदी लोग पूर्वोत्तर की जमीन से आते हैं। प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता हो, विशिष्ट भौगोलिक रचना हो या अंतराष्ट्रीय सीमा से करीबी पूर्वोत्तर को उस जगह खड़ा करती है; जहाँ आर्थिक संवृद्धि की असल संभावना दिखती है। इसके बाद भी संभावनाएँ नज़र क्यों नहीं आती? पूर्वोत्तर में जो भी समस्याएँ रही हों उसे दूर करने में सरकार की दिलचस्पी स्पष्ट तौर पर दिख रही है। सरकार की यह दिलचस्पी भविष्य के सुखद संकेत हैं। आवश्यकता इस बात की है कि इस क्षेत्र में क्रियान्वित योजनाओं को सफल बनाया जाए।

पूर्वोत्तर की तर्ज पर जटिल सांस्कृतिक विविधता वाले दुनिया के और समाजों को भी मुख्यधारा से जोड़ना और एक समन्वय स्थापित करना सदैव कठिन कार्य रहा है। लेकिन राष्ट्रीय समन्वय के लिए इस प्रकार का संतुलन आवश्यक है। पूर्वोत्तर की संस्कृति और जीवन शैली के साथ वहाँ की परम्पराओं के प्रति पर्याप्त समझ-बूझ की जरूरत है। एक समावेशी लोकतंत्र की यह दरकार है कि आधुनिकता और परम्परा में समन्वय स्थापित हो। वर्तमान सरकार के भीतर यह समन्वय स्थापित करने की अद्भुत क्षमता है।

"पूर्वोत्तर राज्यों के लोगों ने प्रकृति और संस्कृति, कला और जीवन, सामरिक- ललक, भावनात्मक एवं आध्यात्मिक शांति, जैव एवं सांस्कृतिक विविधता के बीच एक बेमिसाल तालमेल स्थापित किया है और इसे संरक्षित भी किया है। इन लोगों ने इस संतुलन की खूबी को संगीत, कला, स्थापत्य, अपनी सोच और ज्ञान प्रणाली, जीवन के आधारभूत रीति-रिवाज से लेकर अपने कार्यों, मौसम और प्रकृति में संजोए रखा है। इसमें स्थानीय वनस्पति न केवल उनके दैनिक जीवन बल्कि जीविका से भी जुड़ गयी है। किंतु, कुछ कानूनी व तकनीकी अड़चनें उनकी इस प्रकृति-अनुकूल जीवन शैली व जीविका प्रणाली को कठिन बनाने लगती हैं। प्रशासकीय स्तर पर एक छोटी सी पहल अर्थात् कानूनी बदलाव, इस समुदाय के लिए छोटे-छोटे बहुत ही क्रांतिकारी बदलाव ला सकते हैं।"[9]

अमृत महोत्सव: विकास के रास्ते 'वोकल फॉर लोकल' के तहत 'जल' जो प्रकृति की संचालक शक्ति है; उस पर बातचीत करना चाहूँगा। हमें पता है कि जल एक अनमोल संसाधन है; जो हमारी अर्थव्यवस्था के लिए महत्त्वपूर्ण होता जा रहा है।

'जल' प्रकृति की संचालन शक्ति है। जल कृषि, उद्योग, परिवहन के लिए ही नहीं बल्कि वानिकी, मनोरंजन एवं पर्यावरण के लिए भी महत्त्वपूर्ण होता जा रहा है। लेकिन कष्ट इस बात का है कि आधुनिक समाज जीवन के चकाचौंध में असंवेदनशील हो गया है। मनुष्य द्वारा नदियों, समुद्रों और सागरों का लगातार शोषण किया जा रहा है। यही कारण है कि विश्व के लगभग प्रत्येक हिस्से में जल समस्या उत्पन्न हो गयी है। सूखे के समय में यह देखा गया है कि जल की समस्या से किसानी कार्य प्रभावित हो जा रही है। इससे भारी मात्रा में कृषि कार्य को नुकसान झेलना पड़ रहा है। कृषि उत्पाद के बरबाद होने से किसान आत्महत्या करने पर मजबूर होते रहे हैं।

स्थिति की गंभीरता को मद्द-ए-नज़र रखते हुए सरकार जल संसाधन की समस्या पर नीतियाँ बनाने में व्यस्त है। भारत सरकार इस दिशा में संवेदनशीलता दिखाते हुए कई अहम कदम उठा रही है। प्रधानमंत्री सिंचाई-योजना एक ऐसा ही कार्यक्रम है।

"ग्लोबल रिस्क रिपोर्ट 2016 में विश्व आर्थिक मंच (2016) ने प्रभावकारिता के स्तर पर जल संकट को सबसे बड़े वैश्विक खतरे के रूप में सूचीबद्ध किया है। जल संकट के विविध आयाम हैं, जिनमें भौतिक, आर्थिक एवं पर्यावरणीय (जल की गुणवत्ता से संबंधित) आदि प्रमुख हैं। आबादी का बढ़ता दबाव, बड़े पैमाने पर शहरीकरण, बढ़ती आर्थिक गति, विधियाँ, उपभोग की बदलती प्रवृत्तियाँ, रहन-सहन के स्तर में सुधार, जलवायु विविधता, सिंचित कृषि का विस्तार एवं जल की अधिकांश मांग करने वाली फसलों की पैदावार आदि से जल की मांग का दायरा बढ़ा है।"[10]

भारत जल और भूमि संसाधनों में धनी देश है। विश्व भर में भारतभूमि 2.5 प्रतिशत हिस्से में है। जल संसाधन की जो विश्वस्तरीय उपलब्धता है वो 4 प्रतिशत की है। जनसंख्या 17 प्रतिशत की है। उपलब्ध क्षेत्र 165 मिलियन हेक्टेयर है जो दुनिया भर में दूसरे सबसे ज्यादा क्षेत्र के रूप में है। इसी प्रकार भारत का स्थान जनसंख्या के मामले में दुनिया भर में दूसरे स्थान पर है।

नब्बे के दशक में भारत में 65 प्रतिशत किसान और कृषि मजदूर थे। इससे यह तय हो जाता है कि भारत देश कृषि, जमीन और पानी

पर आधारित रहा है। ऐसे में हम कह सकते हैं कि भारतीय समाज और आर्थिक विकास के लिए जल संसाधनों का विकास अत्यंत अपरिहार्य है।

अमृत महोत्सव: विकास के रास्ते ही आगे बढ़ेगी। बात हम अनमोल जल संसाधन पर कर रहे हैं। यह बताना आवश्यक है कि बाढ़ और अकाल हमेशा एक साथ दावत देते हैं। इनसे पूर्व अच्छे कार्यों का, नेक विचारों का अकाल पड़ता है। इसी के समानान्तर बुरे विचार, बुरे कार्य की बाढ़ आती है। चाहें कोई भी क्षेत्र हो, प्रत्येक बार अकाल और बाढ़ में यही सब होता आ रहा है। वहीं दूसरी ओर दिल्ली हो, मुंबई हो, कोलकाता हो या बंगलुरू या कोई भी दूसरा बड़ा शहर हो; प्रत्येक जगह पानी की बोतलों का व्यवसाय बड़े पैमाने पर फैला हुआ है। हमने देखा कि कुछ दशकों तक यह पानी बंद बोतल अमीर वर्ग करता था। लेकिन स्थितियाँ बदल चुकी हैं। अब यह देहात तक के दुकानों पर बिक रही हैं।

"प्रधानमंत्री ने अपने रेडियो कार्यक्रम मन की बात में देश में बढ़ते सूखे के बीच जल और जलाशय संरक्षण की बात कही है। इसके लिए उन्होंने मीडिया से भी सहयोग मांगा। इसी प्रकार मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री ने भी दिल्ली में चौथे जल सप्ताह कार्यक्रम को संबोधित करते हुए कहा कि पानी के संरक्षण और संवर्धन की दिशा में बेहतर परिणामों के लिए बच्चों को शुरू से ही इस विषय में शिक्षित और जागरूक करने की जरूरत है। दरअसल, समस्याओं के समाधान के लिए संचार माध्यमों के महत्त्व को समझने और उसके सम्यक् उपयोग की दिशा में नए सिरे से विमर्श और प्रयास किए जा रहे हैं। निरंतर परिवर्तित सामाजिक स्थितियों में प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्रियों, नीति-निर्माताओं, मत-निर्माताओं और संचार विशेषज्ञों के लिए प्रभावी संचार एक बड़ी चुनौती है। सहज माध्यम और अधिक तथा प्रभावी संचार आवश्यक है।"[11]

इस पृथ्वी पर पानी बहुत मात्रा में है। लेकिन पीने योग्य पानी की कमी है। लेकिन इतना भी कम नहीं है। सच्चाई यह है कि पानी को लेकर जो रस्साकशी खिंची हुई है। इसके पीछे मुख्य कारण पानी के प्रति मानवीय व्यवहार है।

'वोकल फॉर लोकल' का फार्मूला का मूल मंत्र स्थानीय उत्पादों को विश्व स्तर पर प्रतिस्पर्धी बनाना है। इसके लिए कृषि क्षेत्र में विकास, प्रौद्योगिकी विकास, ग्रामीण-शहरी संपर्क, नारी शक्ति, ग्रामीण भारत, जल संसाधन, पंचायती राज, मेक- इन इंडिया, स्टार्टअप योजना के माध्यम से हम आगे बढ़ रहे हैं। यह सभी कारक तत्त्व सम्मिलित रूप में वृद्धि और बेहतर परिवेश का निर्माण कर रहे हैं। भारत में अमृत-महोत्सव: विकास के रास्ते इन्हीं कारक तत्त्वों से गुजरते हैं।

आज़ादी का 'अमृत महोत्सव' प्रत्येक व्यक्ति अपने ढंग से मना रहा है। बीते 75 वर्षों में से खुशहाली और उपलब्धियों को हम याद कर रहे हैं। प्रधानमंत्री ने कहा है कि आज़ादी का अमृत महोत्सव स्वाधीनता सेनानियों से है। आज़ादी का अमृत-महोत्सव नए विचारों व उपलब्धियों का अमृत है। यह एक नए संकल्पों का अमृत है। यह एक आत्मनिर्भरता का अमृत है।

संदर्भ ग्रंथ

1.कुरुक्षेत्र, वर्ष 67, अंक: 11, पृष्ठ-4, सितंबर 2021, प्रकाशन विभाग (सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार)।

2.PIB.GOV.in, 15 अगस्त 2021 का भाषण।

3.PIB.GOV.in, 15 अगस्त 2021 का भाषण।

4.ब्रूअर, (2009), हैंडबुक ऑफ स्पोर्ट्स मेडिसिन एंड साइंस स्पोर्ट साइकोलॉजी, जॉन विली एंड संस लिमिटेड, वेस्ट ससेक्स, ब्रिटेन, पृष्ठ 3-18

5.FIT INDIA, एफ आई टी इंडिया, http://fitindia.gov.in

6.पंचायती राज इन इंडिया: डॉ. महिपाल, प्रकाशन विभाग। (भूमिका से)

7.ग्राम पंचायत विकास योजनाओं की तैयारी के लिए दिशानिर्देश (2018, पंचायती राज मंत्रालय भारत सरकार के पंद्रहवें वित्त आयोग की रिपोर्ट)

8.योजना, वर्ष 60, अंक 4, अप्रैल 2016, पृष्ठ 9

9.योजना, अंक 4, अप्रैल 2016, आलेख (पूर्वोत्तर का बांस उद्योग: छोटी सी पहल से बदल सकती है तस्वीर); अविनाश चंद्र, पृष्ठ 51

10.आर्थिक विकास में जल संसाधन प्रबंधन; सच्चिदानंद मुखर्जी योजना अंक 7, जुलाई 2016, पृष्ठ 9

11.जल संरक्षण में संचार माध्यमों की भूमिका; अनिल सौमित्र, योजना, अंक 7, जुलाई 2016, पृष्ठ 71

❖

अतिथि शिक्षक, दिल्ली विश्वविद्यालय
पता- सी-224, प्रथम तल, गांधी विहार, नई दिल्ली
मो.नं.-8860010858 vishalmishra.jmi@gmail.com

वाद, विवाद, पंथ, खेमे सब खोखले हैं: नीरजा माधव

साक्षात्कारकर्त्ता - राहुल द्विवेदी

साहित्यिक खेमेबाजी से दूर एक मौन साधिका की तरह डॉ० नीरजा माधव लगातार अपने अनछुए विषयों पर केन्द्रित उपन्यासों और कहानियों के कारण लगातार पूरे राष्ट्र के बुद्धिजीवियों, पाठकों और विशेष रूप से छात्र-छात्राओं के बीच चर्चा का विषय बनी रहती हैं। भारत विभाजन और पाकिस्तान से बलात् विस्थापित हिन्दुओं के ऊपर हुए बर्बर अत्याचार जैसी इतिहास की कारुणिक त्रासदी हो, चीन की विस्तारवादी नीति के चलते तिब्बत जैसे राष्ट्र के अस्तित्व का विश्व के मानचित्र से गायब हो जाना और शरणार्थी तिब्बतियों के भारत में शरण लेने की करुण कथा हो, दो महादेशों के बीच शान्ति स्थापना की पहल की खोज हो अथवा भारतीय संस्कृति, इतिहास, परम्परा के साथ हो रहे अभद्र छेड़छाड़ का पर्दाफाश करना हो, नीरजा माधव बड़ी तल्लीनता से इन सभी अन्तरराष्ट्रीय और राष्ट्रीय मुद्दों को अपनी रचना का विषय बनाती चली आई हैं। एक प्रखर सांस्कृतिक चेतना वाली राष्ट्रवादी लेखिका के रूप में डॉ० नीरजा माधव पूरे भारत में ही नहीं, अपितु विश्व के गिने चुने हिन्दी साहित्यकारों में शामिल हैं। राही रैंकिंग नाम की संस्था प्रतिवर्ष छात्रों, प्रोफेसर, पाठकों, लाइब्रेरियों आदि के सर्वेक्षण के आधार पर पूरे विश्व में चर्चित और जीवित सौ हिन्दी साहित्यकारों की एक सूची जारी करती है जिसमें सन् २०२१ की विश्व रैंकिंग में नीरजा माधव आठवें स्थान पर हैं। विभिन्न विश्वविद्यालयों में डॉ० नीरजा माधव के उपन्यास और कहानियाँ पाठ्यक्रमों में शामिल हैं। सन् २०१८ में उन्हें भारतीय संस्कृति और मानवीय मूल्य आदि कई विषयों पर कई शहरों में व्याख्यान देने हेतु कनाडा आमन्त्रित किया गया था जहाँ एसेम्बली ऑफ एलबर्टा ने नीरजा माधव के मौलिक लेखन का सम्मान किया। म० प्र० साहित्य अकादमी, उ० प्र० हिन्दी संस्थान लखनऊ आदि द्वारा नीरजा माधव को कई राष्ट्रीय पुरस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है। भारत में थर्डजेन्डर विमर्श को जन्म देने वाला पहला उपन्यास ''यमदीप'' नीरजा माधव की कालजयी कृति बन चुका है और उन्हें विभिन्न विश्वविद्यालयों तथा स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा इस थर्डजेन्डर जैसे उपेक्षित समुदाय के उद्धार एवं मुख्यधारा से जोड़ने की क्रान्ति करने के कारण इक्कीसवीं सदी की एक प्रमुख समाज सुधारक के रूप में भी पहचाना जाता है। कई संस्थाओं ने नीरजा माधव को अजातशत्रु लेखिका घोषित किया तो कई ने उपन्यास-सम्राट मुंशी प्रेमचन्द की धरती की इस कथाकार को ''कथा-क्वीन'' की पदवी से महिमामण्डित किया। कथा-क्वीन डॉ० माधव अकेली महिला ललित-निबन्धकार भी हैं जिनके कई संग्रह (ललित निबन्धों के) प्रकाशित हैं और वे कुबेरनाथ राय, हजारी प्रसाद द्विवेदी, पं० विद्यानिवास मिश्र की ललित-निबन्धों की परम्परा को पूरी गरिमा के साथ आगे बढ़ा रही हैं। अब तक लगभग पचास पुस्तकें प्रकाशित हैं। प्रस्तुत है नीरजा माधव से बातचीत के कुछ अंश-

प्रश्न- आपको बहुत कम समय में एक सशक्त राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय पहचान मिल गई है, इसके पीछे आप किसे कारण मानती हैं-

नीरजा माधव- (हँसते हुए) यदि आप यह मान रहे हैं तो निश्चय ही इसमें मेरी भूमिका नहीं अपितु मेरी रचनाओं की ही भूमिका है। क्योंकि मेरा मानना है कि रचना पूरी हो जाने के बाद रचनाकार उसमें से गौड़ हो जाता है। वह रचना लोक की हो जाती है। लोक की एक विशेषता होती है कि जो उसे ग्राह्य होता है उसे वह सिर माथे पर सजा लेता है अन्यथा दृष्टि ओझल कर देता है। लोक से मेरा तात्पर्य यहाँ गाँव या गँवई नहीं है। न ही हमारे समाज के तीज-त्यौहार, पर्व-उत्सव या लोकगीत हैं, बल्कि समग्रता में हमारे आस-पास जो कुछ भी है, वह सब लोक में समाहित हो जाता है। इसीलिए वाल्मीकि के रामायण लेखन को ब्रह्मा का जब आशीर्वाद मिलता है कि ''लोकेषु प्रचरयिष्यति'' तो ब्रह्मा का आशय गाँव या तीज-त्योहार, पर्व-उत्सव भर नहीं होता अपितु मानव समाज अपनी सम्पूर्णता में होता है।

प्रश्न- आपका जन्म गाँव में हुआ या शहर में? शिक्षा-दीक्षा कहाँ से हुई? परिवार और आपके जीवन चर्या के बारे में भी जानने की उत्सुकता पाठकों की होगी।

नीरजा माधव- बहुत सीधा-सपाट सा जीवन परिचय है मेरा। जौनपुर जिले (उ०प्र०) के एक सुदूर गाँव कोतवालपुर में मेरा जन्म हुआ। प्रारम्भिक शिक्षा गाँव की प्राइमरी पाठशाला से तो उच्च शिक्षा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से हुई। अंग्रेजी में एम० ए०, पीएच० डी० किया मैंने। पहले उ० प्र० लोक सेवा आयोग द्वारा शैक्षिक सेवा हेतु और कुछ ही महीनों बाद संघ लोक सेवा आयोग (यूपीएससी) द्वारा राजपत्रित अधिकारी के रूप में आकाशवाणी, दूरदर्शन की सेवा हेतु चुन ली गई। वर्तमान में आकाशवाणी गोरखपुर में कार्यक्रम प्रमुख (आई०बी०पी०एस०) के रूप में कार्यरत हूँ। माँ श्रीमती विमला देवी एक धर्मनिष्ठ महिला थीं और पिताजी एक शिक्षक लेकिन साथ ही साथ आर०एस०एस० से सक्रिय रूप से जुड़े हुए थे। दो भाई अनिल और अजय हैं। बड़ी दीदी सरोज और छोटी बहन पद्मजा का निधन अल्पायु में हो गया था।

नौकरी में आने के बाद मेरा विवाह डॉ० बेनी माधव मिश्र से हुआ जो शिक्षा विभाग में सारनाथ के एक कॉलेज में प्रधानाचार्य पद पर थे। मार्च२०२१ में वे सेवानिवृत्त हो गये हैं और अब वर्ल्ड-पीस के लिए संस्था के माध्यम से कार्य कर रहे हैं। मेरे दोनों बच्चे कुहू माधव, भू-गर्भ विज्ञान और केतन माधव, वनस्पति विज्ञान में बी०एस०यू० से शोध कार्य में संलग्न हैं। मेरी जीवन-चर्या में सुबह चिड़ियों के लिए चावल डालना, अपने लॉन में प्रकृति के बीच टहलना, प्रणायाम, पूजा और फिर लेखन करना शामिल है। यह सुबह की दिनचर्या है। आफिस से लौटने के बाद यदि कहीं कोई सेमिनार आदि के लिए समय दिया है तो उसे सम्पन्न करना अथवा मिलने आने वालों के साथ बातचीत, सायंकालीन पूजा, बच्चों और पति के साथ कुछ समय बिताना और रात ग्यारह बजे तक पुन: लेखन। बस इतना ही सब कुछ ईश्वर अन्तिम समय तक बनाए रखे, यही प्रार्थना करती हूँ।

प्रश्न- आपने संक्षेप में ही अपनी जीवन-चर्या का परिचय दे दिया, धन्यवाद। "पाञ्चजन्य" में आपका उपन्यास "गेशे जम्पा" धारावाहिक के रूप में दो-दो बार छपा। एक बार अपने प्रकाशन के ठीक दूसरे वर्ष यानी सन् २००७-०८ में और दूसरी बार जुलाई२०२० से जब कोरोना महामारी ने पूरे विश्व को अपनी चपेट में ले लिया था और भारत चीन के बीच सीमा पर तनाव की स्थिति भी बनी हुई थी। पांचजन्य को लोग संघ का मुखपत्र मानते हैं। सन् २००७ में जब पहली बार आपका उपन्यास "गेशे जम्पा" पांचजन्य में कड़ियों में प्रकाशित हुआ जो क्या आपको यह भय नहीं लगा कि कांग्रेस के शासनकाल में आपके ऊपर ब्रैण्डेड लेखिका होने का टैग लग जायेगा अथवा आपका यह उपन्यास तिब्बती मुक्ति साधना और शरणार्थियों पर केन्द्रित होने तथा चीन के विरोध में होने के कारण सरकार की पॉलिसी के खिलाफ लिखने वाली एक लेखिका के रूप में आप की नकारात्मक छवि बन सकती थी और आपकी सरकारी नौकरी पर आँच आ सकती थी?

नीरजा माधव- देखिए, "पाञ्चजन्य" कोई राष्ट्र विरोधी पत्र या पत्रिका तो नहीं है जिसे हम अछूत की तरह देखें। उसमें व्यक्त विचार शुरू से ही राष्ट्रीय धारा का मुख्य प्रवाह रहे हैं। हाँ, बाहर बैठे राष्ट्र विरोधी विचारधारा वाले लोगों के लिए ऐसा सोचा जा सकता है। जिसके भीतर अपने राष्ट्र की सुरक्षा, सीमाओं की सुरक्षा, इतिहास, संस्कृति और अस्मिता की सुरक्षा का भाव नहीं, उसे भारत राष्ट्र में रहने का अधिकार नहीं। विश्व के सभी देशों में नागरिक अपने-अपने राष्ट्र को प्यार करते हैं। हम भी करते हैं। इसमें ब्रैण्डेड होना तो गर्व की बात है।

(हँसते हुए) फिर कैसा ब्रैण्डेड होना? परम्परावादी, दक्षिणपन्थी, संस्कृतिवादी, या हिन्दूवादी? इसमें से कौन या तत्त्व ऐसा है जिससे जुड़कर नीरजा माधव को गर्व नहीं होगा? मेरे ये प्रश्न ही आपके प्रश्नों का जवाब हैं। हाँ, कुछ लोग ऐसे होते हैं जो इस पहचान से कतराते हैं। कहीं आयातित विचारधारा के मालिकान उनसे पुरस्कार, सुविधाएँ सब छीन न लें। मैं ऐसे राष्ट्र विरोधी लोगों की छिन्नमूल मानती हूँ। पावों के नीचे जमीन नहीं और 'भारत तेरे टुकड़े होंगे' का हवाई किला बनाने वाले बेचारे मूढ़ जन। दरअसल जब हम अपने राष्ट्र, परम्परा, इतिहास और संस्कृति का खण्डन कर रहे होते हैं, उसी समय किसी दूसरी परम्परा, संस्कृति या राष्ट्र के प्रभाव में होते हैं। जब तिब्बत पर मेरे दो उपन्यास (१) गेशे जम्पा (२) देनपा: तिब्बत की डायरी, आए तो कुछ लोगों ने यह कहा कि आप चीन के विरोध में क्यों लिख रही है? तिब्बत उसका आन्तरिक मामला है। तो मेरा जवाब यही था कि कल को वह भारतीय सीमा में घुसपैठ की कोशिशें कर रहा है और अरुणाचल को साउथ तिब्बत कह रहा है तो यह क्षेत्र भी उसका आन्तरिक मामला बन जायेगा। तो ये वैसे ही राष्ट्रविरोधी तत्त्व हैं जो चीन में बारिश होने पर छाता भारत में लगाते हैं।

रचना करते समय मैं तटस्थ भाव से मानवीय मूल्यों और अधिकारों के प्रश्न उठाती हूँ। उस समय मैं न तो दक्षिणपन्थी होती हूँ और

न ही वामपन्थी। हाँ, एक राष्ट्रनिष्ठ लेखिका के रूप में मेरे लिए मेरा राष्ट्र प्रथम है, उसकी सुरक्षा और अस्मिता मेरे लिए महत्त्वपूर्ण है। वाद और पन्थ तो रचना के प्रकाश में आ जाने के बाद के ढकोसले हैं। यदि गरीब, शोषित और वंचित के बारे में लेखन करना ही वामपन्थी या मार्क्सवादी होना है तो मैंने तो सर्वप्रथम थर्डजेन्डर जैसे वंचित, उपेक्षित समुदाय के अधिकारों और उन्हें मुख्य धारा में शामिल करने की बात अपनी रचना "यमदीप" के माध्यम से उठाई। तो, है कोई भारत में मुझसे बड़ा वामपन्थी या मार्क्सवादी? ये वाद, विवाद, पन्थ, खेमे सब खोखले हैं। रचना में कुछ बात होगी तो वह स्वयं बोलेगी? क्यों भारत में आयातित स्त्री विमर्श, देह विमर्श में तब्दील हो अब अन्तिम साँसें गिन रहा है? सबकी अपनी मर्यादा होती है। ऐसा नहीं है कि भारत केवल आध्यात्मिक या धार्मिक देश ही रहा है जिसने तमाम जगद्गुरू और नैतिकता के पाठ विश्व को दिए बल्कि भारत ने कला, संगीत, ज्योतिष्, आयुर्वेद के साथ-साथ खजुराहो की मूर्तियाँ और कामसूत्र जैसा ग्रन्थ भी विश्व को दिया। पर भारत में सेक्स या नग्नता की भी अपनी एक मर्यादा स्थापित थी, इसीलिए विश्व गुरू था यह देश। कामसूत्र जैसे ग्रन्थ वाले देश में रचनाकारों के देह विमर्श की बढ़ चढ़कर अश्लीलता क्यों कम ही समय में दम तोड़ बैठी? आज उन अश्लील लेखकों का कोई नाम नहीं लेना चाहता। उनकी पुस्तकें अपने बच्चों को पढ़ने नहीं देता। तो, भारत राष्ट्र की सदियों से एक मर्यादा रही है। लेखन में भी उस मर्यादा की रक्षा होनी चाहिए।

प्रश्न- ललित निबन्धों के क्षेत्र में स्त्री रचनाकार प्राय: न के बराबर हैं। आप अपने ललित-निबन्धों के कारण भी चर्चित हैं। क्या ललित निबन्धों के ऊपर अपने पूर्ववर्ती लेखकों का प्रभाव मानती हैं?

नीरजा माधव- लेखन कभी भी किसी के प्रभाव में आकर नहीं करना चाहिए। आपके भीतर जो स्वत: स्फूर्त्त भाव होते हैं उनसे प्रेरित जो लेखन होता है वही सच्चा लेखन कहा जा सकता है। हाँ, आपको कोई पूर्ववर्ती लेखक पसन्द या नापसन्द हो सकता है परन्तु किसी के प्रभाव में आकर लेखन करना रचनाधर्मिता के साथ छल है। ऐसे छल से मैं बचती हूँ। अनगढ़ हो, अनसँवरा हो, जो कुछ भी हो, मेरा अपना हो। अनसँवरा भी कभी-कभी बहुत खूबसूरत लगता है। छात्र जीवन से लेख और कविताएँ लिखती थी इसलिए आज भी उसमें मन रमता है।

प्रश्न- आपके अब तक लगभग सौ से अधिक कहानियाँ लिखी हैं। आपकी कहानियाँ हमेशा अलग-अलग पृष्ठभूमि पर और अनछुए शिल्प और कथ्य के साथ आती हैं। अपने समकालीन कथाकारों से बिल्कुल अलग शैली है आपकी कहानियों की। ऐसा कैसे सम्भव हुआ? क्या केवल भोगा हुआ यथार्थ ही कथ्य बन सकता है कहानी का या और भी कुछ?

नीरजा माधव- आधा-आधा दोनों। कई बार आँखों के सामने से गुजरी कोई घटना उद्वेलित कर देती है तो वह भी कहानी का विषय बन जाती है। उदाहरण के लिए मेरी एक कहानी आई थी "चुप चन्तारा रोना नहीं," जो बाद में 'हंस' पत्रिका द्वारा कराए गये एक सर्वेक्षण के अनुसार समकालीन एक हजार कहानियों में से सर्वश्रेष्ठ ग्यारह कहानियों में एक थी। उन सर्वश्रेष्ठ ग्यारह कहानियों का विशेषांक भी "हंस" ने प्रकाशित किया। मेरी वह कहानी एक सत्य घटना पर आधारित थी जो प्राय: हम किसी शादी ब्याह में जाने पर देखते हैं। खाने वाली जगह पर अथवा किसी छोटे से मंच पर किसी बच्चे अथवा लड़की को स्टैच्यू बनाकर खड़ा करना। यह स्टैच्यू किसी भी रूप में जैसे शिव, गाँधी, विवेकानन्द या कुछ भी हो सकता है। कड़ाके की ठंड में ऐसे ही किसी बारात में एक दस-बारह वर्ष के बच्चे को अर्धनग्न अवस्था में स्टैच्यू बनाकर बैठाया गया था। हम सब ऊनी कपड़ों में लदे-फँदे थे तब भी हाथ-पैर ठंडे हो रहे थे और वह बच्चा खुले आसमान के नीचे कड़ाके की ठंड में नंगे बदन स्टैच्यू बना था। मेरा मन उद्वेलित हुआ था। बारात से तबियत उचट गई थी और एक कहानी ने जन्म लिया था-चुप चन्तारा रोना नहीं। शायद कहानी पढ़कर बन्द हो जाए। तो इसे आप मेरा भोगा हुआ सच कह सकते हैं। वहीं एक दूसरी कहानी का उदाहरण दे दूँ जो मेरा भोगा हुआ सच तो नहीं है परन्तु उस कहानी के कथ्य और शिल्प को आप नकार नहीं सकते। वह मेरी कहानी है "पुन्नो के दारजी"। जलियाँवाले बाग काण्ड पर आधारित। संयोग से उम्मीद के विपरीत डॉ० राजेन्द्र यादव जी जो तत्कालीन सम्पादक थे "हंस" के, ने उस कहानी को प्रथम बार अपनी पत्रिका में ही प्रकाशित किया। आमतौर पर राजेन्द्र यादव जी अपनी विचारधारा से इतर लेखकों को इस पत्रिका "हंस" में स्थान नहीं देते थे। तो कहानी के बारे में आपको बताऊँ। आज की तारीख तक मुझे अमृतसर जाने का अवसर नहीं मिल पाया है। देश-विदेश घूमी हूँ पर अपने ही देश के इस अति महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक स्थान को देखने का अवसर नहीं मिल पाया मुझे। जलियाँवाले बाग काँड से एक किताबी परिचय मात्र है मेरा। एक दिन आकाशवाणी कार्यालय में अपने कक्ष में बैठी थी। सामने कैलेण्डर पर जलियाँवाले बाग काण्ड का चित्र उकेरा गया था। एक कुआँ और आस-पास गिरीं अनेक लाशें। मन में एक विचार कौंधा- क्या जितने लोग यहाँ मारे गये थे, सबका ब्यौरा मिल पाया होगा आजादी के बाद? क्या जो लोग जनसभा में आए थे, सभी के मन में शहीद हो जाने का भाव रहा होगा? और एक सूत्र मिल गया था मेरे मन को। मेरी कहानी "पुन्नो के दारजी" सबके सामने आई थी। तो कई बार अपनी छठी इन्द्रिय से महसूस करता है लेखक और परकाया प्रवेश कर चुपके से उस अतीन्द्रिय पात्र के अन्तर्मन की बातें भी कह जाता है। यह सब घटित होता है संवेदना के सघन क्षणों में।

प्रश्न- आपकी एक पुस्तक ''लाल बहादुर शास्त्री'' का लोकार्पण माननीय सरसंघ चालक श्री मोहन भागवत ने २०१५ में रामनगर वाराणसी में किया। दिसम्बर २०१५ में ही दसवें भारत जापान सम्मिट के अवसर पर भारत के प्रधानमन्त्री माननीय श्री मोदी जी एवं जापान के प्रधानमन्त्री श्री शिन्जो अबे के वाराणसी आगमन पर आपको एक मात्र साहित्यकार के रूप में दोनों प्रधानमन्त्रियों के साथ गंगा आरती और रात्रिभोज पर आमन्त्रित किया गया। परमपावन दलाईलामा जी जो तिब्बतियों की निर्वासित सरकार के राष्ट्राध्यक्ष भी हैं, ने आपके तिब्बत केन्द्रित दोनों उपन्यासों का दिल्ली में लोकार्पण किया। कई बार साहित्य के नाम पर आपकी अपने देश के प्रधानमन्त्री और उत्तर प्रदेश के मुख्यमन्त्री माननीय श्री योगी जी से मुलाकात हो चुकी है।

आपको एक राष्ट्रवादी साहित्यकार के साथ-साथ समाज एक राजनीतिक साहित्यकार भी मानने लगा है। क्या आने वाले समय में एक साहित्यकार सक्रिय राजनीति में भी आयेगी?

नीरजा माधव- हाँ, आपने जितनी भी बातें कहीं हैं, वे सब सच हैं। परन्तु सक्रिय राजनीति में आने के बारे में अभी सोचा नहीं। बस, इतना अवश्य समझना चाहिए कि राजनीति को वैचारिकी चाहिए और एक साहित्यकार अपने देश की राजनीति से परे नहीं होता।

प्रश्न- उपन्यास, कहानियों के साथ-साथ अपने ललित निबन्ध, वैचारिक गद्य साहित्य, इतिहास और पत्रकारिता जैसे विषयों पर भी लेखनी चलाई है। एक बहुत ही संवेदनशील विषय राष्ट्रवाद पर भी आपकी पुस्तक आ रही है। आप कविताएँ भी लिखतीं हैं। इतने व्यापक फलक पर लिखने के बाद भी आपकी प्रसिद्धि कथाकार के रूप में ही प्रमुख हैं। क्यों?

नीरजा माधव- कोई भी साहित्यकार एक विधा के लिए ही प्रमुख रूप से पहचाना जाता है। जैसे प्रेमचन्द ने कथा के साथ प्रचुर मात्रा में गद्य साहित्य भी लिखा। पं० विद्यानिवास मिश्र मुख्य रूप से ललित निबन्धकार के रूप में जाने जाते हैं परन्तु उन्होंने कविताएँ भी लिखीं। दार्शनिक पुस्तकें भी लिखीं। प्रसाद जी महाकवि जाने जाते हैं परन्तु उनके उपन्यास और कहानियाँ भी चर्चित हैं। तो नाम तो किसी एक विधा के साथ ही पाठकों की स्मृति में रहता है।

आपने कहा कि गद्य साहित्य और कविताएँ भी मैं लिखती हूँ तो उसके बारे में इतना ही कहना चाहूँगी कि गद्य मेरा बहिर्मुखी रूप है तो कविता मेरी आन्तरिक बुनावट है। एक में सजग वैचारिकता तो दूसरे में प्रेम और संवेदना का मृदु स्पंदन। कविता आज भी मुझे अकेला पाकर चुपचाप मेरे पास चली आती है। मेरे आन्तरिक यात्रा की पाथेय होती हैं कविताएँ। इनकी छाँव में विश्रान्ति मिलती है मुझे और मैं पुन: ऊर्जस्विनी हो राष्ट्र चेतना से जुड़ जाती हूँ। मेरे उपन्यास और अन्य गद्य साहित्य उसी राष्ट्र चेतना की अभिव्यक्ति हैं।

❖

ग्राम पचरखा, पोस्ट- जसरा , प्रयागराज, उत्तर प्रदेश, पिन-212107 मो. 7905942443

पृष्ठ 86 का शेष...

समाज का नैतिक पतन, स्वार्थ, लालच असंतोष, संयुक्त परिवारों का टूटना, प्रकृति के साथ छेड़छाड़, प्रकृतिक आपदाएँ, महंगाई, लूट खसोट, चोरी, गुंडागर्दी, व्यवसाय का भ्रष्ट होना, पुलिस ही चोरों की रक्षक बनना, राजनीति का पतन, अश्लील भाषा के रूप में हिंसक रूप, अमीरों की चाँदी होना, गरीबों का और गरीब होना, बाज़ारवाद का वर्चस्व, विज्ञापनों में अश्लीलता, युद्ध, हिंसा, अशांति का वातावरण, आदिवासी, दलित और स्त्री अस्मिता का प्रश्न हो या अधिकारों की बात सभी विषयों पर लेखक का ध्यान जाता है। इस संग्रह में लेखक एक सजग और प्रतिबद्ध सचेत रचनाकार के रूप में सामने आते हैं जिन्होंने समाज की समस्याओं को विविध पहलूओं और विविध माध्यमों से हमारे सामने रखा। भूमिका में स्वयं लिखते हैं- ''ये ग़ज़लें न केवल जीवन-यथार्थ और उनके अन्तर्विरोधों को उजागर करती हैं, अपितु अपनी धारदार अभिव्यक्ति से उनकी विडंबनाओं और त्रासदियों, राजनीति के कुरूप चेहरों, आपदाओं के साथ प्रकृति के रम्य चित्रों की झाँकी, बनते-बिगड़ते सामाजिक जीवन मूल्यों की अत्यंत ही मार्मिक तस्वीर, प्रेम और सौन्दर्य के अनछुए प्रसंग, स्त्री-विमर्श, दलित विमर्श एवं पारिवारिकता से जुड़े अन्य प्रसंगों से भी स्वयं को समृद्ध करती है।'' इसलिए निश्चित रूप से कह सकते हैं कि वशिष्ठ अनूप जी का यह ग़ज़ल संग्रह आज के समय के सच के यथार्थ को तो प्रकट करती ही है। साथ ही समाज में घट रही घटनाओं का बिना लोभ-लालच को ध्यान में रखते हुए अपनी बात निष्पक्ष और निडरता से रखते हैं। यही बात इस संग्रह की आज के समय के लिहाज से सबसे बड़ी है जो एक महत्त्वपूर्ण बात है। निश्चित रूप से कह सकता हूँ कि यह ग़ज़ल-संग्रह समाज के सच से तो रूबरू करवाता ही है साथ में आत्मचिंतन और आत्ममूल्याँकन करने के लिए भी प्रेरित करता है। इसलिए मुझे उम्मीद है कि यह ग़ज़ल संग्रह पाठकों को जरूर पसंद आयेगा। इस नवीनतम संग्रह के लिए वरिष्ठ अनूप जी को हार्दिक बधाई और शुभकामनाएँ।

❖

युवा आलोचक एवं नाट्यचिंतक
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
पिन -221005 मो. 8010776556

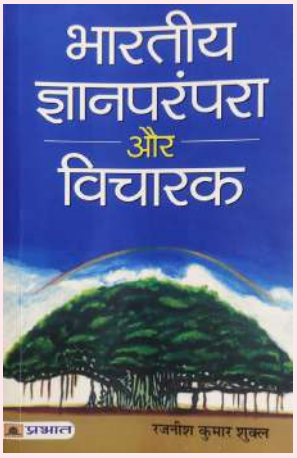

विश्व गुरु का सपना भारतीय ज्ञानपरम्परा और विचारों के रास्ते

डॉ. रवि शंकर शुक्ल

पिछले कई दशकों से यूँ कहें आज़ादी के कई वर्ष पूर्व से ही भारतवर्ष समाजिक, आर्थिक, राजनीतिक रूप से अपने आप को सशक्त करते हुए एक विकसित राष्ट्र के श्रेणी में आ खड़ा हुआ है। इसी सशक्तीकरण के कारण आज भारतवर्ष विश्व का नेतृत्त्व करने की स्थिति में दिखाई दे रहा है। यदि भारत विश्व का नेतृत्त्व करता है तो इसके पीछे सनातन काल से चली आ रही भारत की समता मूलक अवधारणा, स्वातन्त्र्य वीरों की प्रेरणा, उपासना पद्धति, एकात्म मानव दर्शन, परम्परा , आधुनिकता और लोक-जीवन , समाज का उद्धार, सभ्यता के मानवीकरण के यत्न, समाज, संस्कृति व स्वराज, हिंदी भाषा को राष्ट्र भाषा बनने की चिंता जैसे अनेकानेक विचार को देने वाले विचारकों की तपस्या रही है। आचार्य रजनीश कुमार शुक्ल की यह महान कृति भारत ही नहीं वरन विश्व पटल पर सनातन काल से चली आ रही भारतीय ज्ञानपरम्परा समाज को समझाने में कारगर रही है।

लगभग डेढ़-दो दशकों से भारतीय सभ्यता का जो पराभव हुआ है उसके पीछे कहीं न कहीं मानव समाज के द्वारा अपने मानवीय मूल्यों का पतन ही विशेष कारण बनता रहा । "सभ्यता की विरासत और भविष्य की सभ्यता" के लेख से यह स्पष्ट होता है। आज मानव जाति को गांधी को वैश्विक सभ्यताओं की दृष्टि से देखने की आवश्यकता है। भारतीय जनमानस को लगातार इतिहास के माध्यम से भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता से हमेशा भटकाने का कार्य किया गया है, आज उसी इतिहास के माध्यम से हमें अपनी संस्कृति एवं सभ्यता को सुधारने एवं पराभव से बचाने की आवश्यकता है। आचार्य रजनीश कुमार शुक्ल मानीवय सभ्यताओं को संरक्षित करने की चिंता स्पष्ट करते हैं। भारतीय मनीषी एवं ज्ञानपरम्परा के अनेक विचारक समस्त मानवीय सभ्यताओं को अपने अच्छे आचरण एवं कर्मों के माध्यम से आने वाली समस्त पीढ़ियों को जोड़ने की प्रेरणा देते हैं।

राष्ट्र को एक सूत्र और एकात्मकता के माध्यम से भारतीय मूल्यों की अस्मिता को बचाने की आवश्यकता है। हमारी संस्कृति अपना विकास तो करती ही करती है साथ ही विदेशी संस्कृति को जीवंत एवं मार्गदर्शन करने की क्षमता रखती है, यही वजह है कि हम भारत को विश्व गुरु बनने की बात करते हैं।

जब हम अपनी पहचान को विस्मृत करने लगते हैं तो इसका तात्पर्य है कि हम कहीं न कहीं अपने आदर्शों एवं अपने मूल्यों को विस्मृत करने लगते हैं। जब हम अपने आदर्शों एवं मूल्यों को विस्मृत करने लगते हैं तो हमारी संस्कृति पर संकट के बादल मंडराने लगते हैं। भारतीय संस्कृति में जिन मूल्यों की चिंता की गई है वह अन्य विदेशी सांस्कृतिक मूल्यों के लिए पथ प्रदर्शक का कार्य करती है यह कभी न खत्म होने वाली संस्कृति है। हमारी भारतीय संस्कृति इस चराचर मानवीय सभ्यता के लिए किस प्रकार कल्याणकारी एवं जीवनदायी है इस महत्त्वपूर्ण दृष्टिकोण से भी यह कृति समाजोपयोगी है।

जब हम अपनी ज्ञानपरम्परा और विचारों को विश्व तक पहुँचाने की बात करते हैं तो सबसे जरूरी बात जो निकल के आती है वह है "भाषा"। हमारे पास हिंदी के रूप में एक विशिष्ट भाषा है। आज हिंदी 130 करोड़ लोगों की भाषा है। भारत के अलावा अन्य एशियाई देशों, कैरेबियन द्वीप, ऑस्ट्रेलियन महाद्वीप तक किसी न किसी रूप में फैली यह हिंदी भाषा आज अपने ही देश में राष्ट्र भाषा बनने के लिए संघर्ष कर रही है। चिन्ता की बात यह है कि जब तक हम भारतवासी हिंदी को राष्ट्र भाषा के रूप में नहीं स्वीकार्य करते तब तक हम हिंदी को अंतरराष्ट्रीय भाषा का दर्जा नहीं दिला सकते। आचार्य रजनीश कुमार शुक्ल लिखते हैं "हिंदी जब राजनैतिक सम्बंधों और कूटनीति, विज्ञान और तकनीक के शिक्षण की भाषा के रूप में विकसित होगी तभी वैश्विक सन्दर्भ में अंतरराष्ट्रीय भाषा की मान्यता प्राप्त करेगी।" आचार्य रजनीश कुमार शुक्ल का यह मानना बिल्कुल सत्य है कि हिंदी का विकास मात्र हिंदी में कहानी, कविता, उपन्यास को लिखने-पढ़ने से ही नहीं हो सकता बल्कि डिजिटलाइजेशन के इस काल खंड में हिंदी को तकनीक की भाषा , विज्ञान की एवं डिजिटल प्लेटफॉर्म की भाषा बननी पड़ेगी। हिंदी को विश्व की भाषा बनने के लिए तकनीक में हिंदी का होना आवश्यक है। जिस समय हम हिंदी को तकनीकी से जोड़ने में सफल होते हैं उसी दिन हमारी हिंदी विश्व के लिए एक मापदण्ड तैयार करेगी।

आचार्य रजनीश कुमार शुक्ल दर्शन के गम्भीर अध्येता एवं मर्मज्ञ विद्वान होने के नाते अपने दार्शनिक दृष्टि के माध्यम से भारतीय ज्ञानपरम्परा और विविध विचारों को इस कृति में सजोने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। अनेकानेक भारतीय मनीषियों एवं विचारकों के विचारों को सारगर्भित तरीके से समाज के अध्येताओं के सामने रखा है।

❖

C/o- जगदीश नारायण त्रिपाठी, संस्कृत विभाग, महात्मा गाँधी अंतरराष्ट्रीय विश्वविद्यालय, वर्द्धा महाराष्ट्र, पिन 442001 मो. 9614889085
ग्राम- प्रतापपुर खुर्द, पो. लवाइया प्रतापपुर, जिला-अम्बेडकरनगर उत्तर प्रदेश। 224183 मो.9614889085

समय के सच का यथार्थ चित्रण - गर्म रोटी के ऊपर नमक-तेल था

डॉ. लहरी राम मीणा

समकालीन साहित्य में ग़ज़ल और नवगीत के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण और प्रसिद्ध चिंतक वशिष्ठ अनूप जी का अभी हाल ही में आया नया ग़ज़ल संग्रह 'गर्म रोटी के उपर नमक तेल था' आज के समय के सच को बड़ी बेबाकी से चित्रित करता हैं। यह ग़ज़ल संग्रह आज के सच की विविध चुनौतियों के यथार्थ को तो प्रकट करता ही है, साथ ही उनसे सचेत होने का एक नया रास्ता दिखाती है। हालांकि ऐसा भी नहीं है, कि समाज के यथार्थ को इसी पुस्तक में पहली बार दिखा रहे हो, इससे पहले भी लेखक ने अपनी रचनात्मकता के माध्यम से समाज में घट रही मानवीयता, मूल्यों का पतन, शोषण, संघर्ष, भेदभाव, भूख-प्यास, पीड़ा, घुटन, अपमान, लांछन, नैतिक पतन आदि तमाम मूद्दों को अपनी रचनाओं में अलग-अलग माध्यमों से हमारे सामने समाज की सच्चाई दिखाते हैं। अब चाहे वो गीतों का माध्यम हो, ग़ज़लों के सहारे से या आलोच्य सृजन हो या किसी ना किसी माध्यम से घट रही भिन्न-भिन्न चुनौतियों और समस्याओं से रूबरू होते हैं जो एक बड़ी बात है। एक लेखक अपनी विविध साहित्य विधाओं के माध्यम से समाज के यथार्थ को बड़ी निर्दयता से हमारे सामने लाते हैं।

'गर्म रोटी के ऊपर नमक तेल था' ग़ज़ल संग्रह वर्तमान के यथार्थ से रूबरू करवाते हैं। वर्तमान समय की समस्याएँ चाहे वो किसानों की समस्या हो, बेरोजगारी का प्रश्न हो, स्त्री-शिक्षा का सवाल हो या शोषण का, आदिवासियों एवं दलितों की अस्मिता की बात हो या समाज में नैतिक मूल्यों के पतन की बात तथा हर तरह की योग्यता और ज्ञान होने के बावजूद दर-दर की ठोकरें खाने को मज़बूर आज के युवा की मानसिक स्थिति की बात, घर में बड़े-बुजुर्गों के सम्मान की बात हो या मनुष्य के मुख़ौटे बदल-बदल कर सामने आने की बात हो इन तमाम प्रश्नों पर एक लेखक की चिंता इस संग्रह में देखने को मिलती हैं। आज के लोक जीवन का जो यथार्थ रूप है उसको बड़ी निडरता से इस संग्रह में बताने का प्रयास किया है। स्वयं लेखक भी इस ग़ज़ल संग्रह की भूमिका में कहते हैं-''ये ग़ज़ल हमारे समय के बहुआयामी यथार्थ और अनेकानेक प्रकार की चुनौतियों से रूबरू होकर उनसे सीधी रचनात्मक मुठभेड़ करती है। इनमें किसानों, मजदूरों और मध्यवर्ग का जीवन-संघर्ष तो है ही शिक्षा, स्वास्थ्य, सुरक्षा और रोजी-रोटी की समस्याएँ भी देखी जा सकती हैं। अव्यवस्था और अभाव का मारा बचपन, उपेक्षित, बहिष्कृत बुढ़ापा, दिन-रात परिश्रम के साथ सारी जिम्मेदारियों का बोझ उठाने के बावजूद अपमानित, लांछित स्त्री और तमाम ऊँची डिग्रियों के बाद भी बेरोजगार नौजवानों का दर्द इन ग़ज़लों में अनुभव किया जा सकता है।''

लेखक को कड़वी, निरंकुश और अत्याचारी भाषा से नफरत है। सत्ता और शमशीर की भाषा को लेखक स्वीकारता नहीं है, उसे अच्छी नहीं लगती है। उसे अच्छी लगती है तो कबीर और तुलसी की भाषा। वह कबीर और तुलसी के साथ-साथ मीर, संतों, फकीरों की मीठी भाषा सीखना चाहता है। उसमें जीना चाहता है। नहीं सीखनी उसे निरंकुश और हिंसक भाषा जो हमेशा सत्ता अपनाती है। जिस तरह से कबीर और तुलसी की भाषा का दायरा धीरे-धीरे सीमित होता जा रहा है और सत्ता की, हिसंक भाषा का विस्तार होता जा रहा है उसे लेखक बहुत चिंतित और दुःखी है।

प्रकृति की सौम्यता और रमणीयता का चित्रण करना लेखक नहीं भूलता है। कैसे गाँववासियों का प्रकृति के साथ गहरा संबंध है, पशु-पक्षियों की बोलियों का प्रश्न हो या विभिन्न तरह के पेड़ों-पौधों की खुबसूरती सभी लेखक के रचना का विषय बनते हैं। किस तरह आज भोले सीधे-सच्चे आदिवासियों के ऊपर अपनी धरती माता के सामने शोषण के विभिन्न रूपों की परतें खोलता है; आज प्रकृति के रक्षक, प्रकृति के पूजक आदिवासियों की अस्मिता, उनकी स्वाधीनता और आत्मसम्मान को कुचला जा रहा है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के नाम पर तरह-तरह के लोभ-लालच देकर आज इनको अपनी ही जमीनों से बेदखल किया जा रहा है। इस पर भी लेखक की चिंता देखने को मिलती है।

जंगलों, नदियों, पहाड़ों, के निधन का प्रश्न है ही,
अपने घर में पिट रहे बनवासियों का प्रश्न है।

निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि यह ग़ज़ल संग्रह आज के समय की चुनौतियों और विविध समस्याओं को सृजनात्मक निर्माण के माध्यम से हमारे सामने लाती है। इस संग्रह में आज के समय के जीवन-संघर्ष के साथ-साथ समाज के हर पहलू चाहे किसान, मज़दूर, गरीबी, शोषण, बलात्कार, अत्याचार, बेरोजगारी, बुजुर्गों का अपमान,

शेष भाग पृष्ठ 84 पर

सुषेण पर्व : द्वंद्व और उसकी निरस्ति का आख्यान

डॉ. मृगेन्द्र राय

द्वन्द्व मनुष्य का एक मनोवैज्ञानिक सत्य है। किसी भी प्रश्न पर सचेतन मानस पूर्वा पर संबंधों और अनिर्णित परिणामों के बीच द्वन्द्वग्रस्त हो जाता है। यह द्वन्द्व जहाँ एक ओर व्यवधान बनता है वहीं दूसरी ओर विवेक पोषित होकर नीर क्षीर विवेक द्वारा भावी निर्णय का पथ भी प्रशस्त करता है। द्वन्द्वात्मक स्थितियाँ सदाशयी निर्णयों द्वारा व्यक्तित्व को समृद्ध करती हैं। रचनात्मक लेखन में यह द्वन्द्वात्मकता पाठक अथवा श्रोता की उत्सुकता को बढ़ाती है और द्वन्द्वातीत दशा में पहुँचकर मानसिक विश्रांति का अनुभव करती है। इसीलिए प्रायः सभी रचनाकार द्वन्द्व को उपकारक मानते हैं। डॉ . देवेन्द्र दीपक ने अपने काव्यनाटक सुषेण पर्व में द्वन्द्व का सफल रचनात्मक उपयोग किया है।

सात दृश्य में विभक्त काव्यनाटक 'सुषेण पर्व' 'थिसिस ' नाटक है जो परिकल्पना के संकेत से प्रारंभ होकर संकल्पना के संस्थापन के बिंदु पर समाप्त होता है। सुषेण पर्व का आरंभ नट – नटी के संवाद से होता है जिसमें द्वन्द्व के अनेक आयाम सहृदयों – दर्शकों के बीच उद्घाटित एवं संप्रेषित होते हैं। जीवन का सत्य, भावना और भावना में द्वन्द्व,सर्वनाम और सर्वनाम में द्वन्द्व, क्रिया और क्रिया में द्वन्द्व, संहिता और संहिता में द्वन्द्व, अंधेरे और रोशनी तथा अंधेरे और अंधेरे में द्वन्द्व की प्रस्तुति करते हुए काव्यनाटककार पाठकों को विभिन्न धरातलों पर चिंतन के लिए विवश करता है। आलोच्य कृति में नाटककार ने स्थापना की अभिव्यक्ति के लिए नट – नटी का प्रयोग किया है। स्थापना स्वयं में कृति का महत्वपूर्ण अंश है। इसका एक – एक वाक्य भाष्य चाहता है। नागरिकों के संवाद से युद्ध की पीड़ा, आम जन की हानि का दर्द दिखाई देता है। रावण के अहंकार का परिणाम तो नारी ही भोगती है यथा, अद्भुत है युद्ध / परिजन नहीं चाहते युद्ध / पुरजन नहीं चाहते युद्ध। (पृ . 36)

द्वन्द्व मानव मन की स्थिति विशेष का द्योतक है। तभी तो नटी जीवन के एक विशेष सत्य की ओर संकेत करते हुए कहती है – द्वन्द्व में निर्द्वन्द्व होना पुरुषार्थ / ऐसे पुरुषार्थ से ही / सध पाता परमार्थ (पृ. 25)

काव्य नाटक के मुख्य पात्र सुषेण द्वन्द्वग्रस्त हैं हनुमान के संग जाने से पूर्व उनके भीतर अनेक प्रश्न उठते हैं – राम मेरे महाराज का शत्रु / शत्रु के शिविर में मैं!/कैसे?क्यों? (पृ. 58)

उनका द्वन्द्व यह भी है – मैं शासकीय अधिकारी / शत्रु के हित में मेरा / बनना एक साधन / राजद्रोह है। (पृ. 59)

आलोच्य काव्यनाटक में रचनाकार ने दो कल्पित नारी पात्रों की सृष्टि की है एक नटी दूसरी सूर्या। सूर्या एक विदुषी और सुधर्मा पत्नी है वैद्य सुषेण की जिसकी उपस्थिति से काव्य नाटक प्रभावी एवं रोचक बन जाता है | द्वन्द्वग्रस्त वैद्य पति सुषेण की द्वंद्वात्मक स्थिति का निराकरण सूर्या करती है तभी तो वह कहती है – धर्म और नीति के / विरुद्ध हो जो राजा / उसकी अवज्ञा राजद्रोह कैसे ? / शिखर को निरापद / होना चाहिए / स्वामी ! / और फिर यहाँ युद्ध का कारण / नितांत वैयक्तिक ! (पृ . 59)

यही नहीं अपनी बात को प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुत करते हुए वह उन्हें पंचशील दीक्षा का स्मरण कराती है – स्वामी / शास्त्र का अभिमत – / जो दीक्षा लेते हैं / दीक्षित होता है जो / देव तुल्य ! (पृ . 61)

अंततः मूर्छित लक्ष्मण के उपचार के लिए सुषेण लंका के राजवैद्य का पद त्यागने का निर्णय लेते हैं – मुझे अपना त्यागपत्र / लिखने दो / राजपद के बोझ से मुक्ति / यही सार्थक युक्ति (पृ. 63-64)

यहां रचनाकार दीपक की मौलिक उद्भावना है। सुषेण निश्चिंत होकर रोगी के उपचार के लिए तत्पर होते हैं। लेकिन उनका द्वन्द्व यहीं समाप्त नहीं होता। लक्ष्मण के उपचार से पूर्व उनके मन में पुनः द्वन्द्व उत्पन्न होता है – – चिकित्सा सफल न हुई तो – मेरी निष्ठा पर / सबको होगा संदेह। / वंचना का दोष मुझ पर / ऐसे में / मैं ना रावण का रहा / और न राम का (पृ . 96)

उनके इस द्वन्द्व का निराकरण राम द्वारा होता है। राम का प्रतिउत्तर है – आचार्य / राम जिस पर रखता है निष्ठा / उस पर संदेह नहीं करता / मैं जानता हूँ / वैद्य के हाथों में केवल उपचार / आरोग्य देव के हाथ! (पृ. 96)

पाँचवें दृश्य में मूर्च्छित लक्ष्मण की चिकित्सा से पूर्व सुषेण ईश्वरीय आराधना का सुझाव देते हैं। तभी तो वह कहते हैं- स्वामी / साधन और आराधन / दोनों साथ-साथ / मैं करता हूँ साधन / आप सब करें आराधन ! (पृ. 74-75)

जैसे – जैसे क्षण बीत रहे हैं हनुमान के आने में विलंब हो रहा है पुनः सुषेण तनावग्रस्त होते दीख पड़ते हैं। उनका द्वन्द्व इन पंक्तियों में दिखाई देता है – मैं द्वन्द्वमुक्त था / अब पुनः द्वन्द्व ने / द्वैत ने मुझे घेरा / रात बीत रही है / लक्ष्मण की शिथिलता बढ़ रही निरंतर / हनुमान अभी तक नहीं आए / खेती को पानी / रोगी को औषधि समय पर मिले तो लाभ / स्वामी एक कारक और भी है / औषधि आई / उसके सेवन से / लक्ष्मण स्वस्थ नहीं हुए / तो (पृ . 95) सुषेण का यह द्वन्द्व आज के मानव का द्वन्द्व है। आज मनुष्य कोई भी कार्य करने से पूर्व उसके परिणाम पर पहले से ही चिंताग्रस्त होने लगता है। समय पर कार्य की पूर्णता उसकी सफलता का सूचक है। राम उनके संशय का समाधान करते हुए कहते हैं उपचार करना तो चिकित्सक का कार्य है किंतु रोगी का स्वस्थ होना तो विधाता के हाथ में है। राम सूर्य से प्रार्थना करते हैं कि वह कुछ विलम्ब से उदित हो। रचनाकार ने सूर्य को आकाशवाणी द्वारा प्रस्तुत करते हुए अपने कर्तव्य से बंधे सूर्य की वाणी को अभिव्यक्त किया है सूर्य का कथन देखिए – मैं सूर्य हूँ / मेरा उदित होना / या फिर अस्त होना / सब निश्चित है / उसमें मेरा कोई सम्भव नहीं हस्तक्षेप। / आपके रचे / व्याकरण से बँधा हूँ मैं / प्रभु समझें मेरी विवशता / मुझे क्षमा करें / प्रभु / क्षमा करें / मैं आश्वस्त हूँ / पटाक्षेप आपके पक्ष में होगा / हनुमान औषधि ले / आते ही होंगे। (पृ. 97-98)

लक्ष्मण चेतनावस्था में आ जाते हैं। राम के हर्षातिरेक की कोई सीमा नहीं रहती। वे प्रसन्न हो कर सुषेण से आग्रह करते हैं कि सुषेण अपना कोई मनोवांछित वरदान माँगें। सुषेण वैद्यक और रुग्ण की सेवा को अपना धर्म मानते हैं। जीवन भर इसी धर्म को पूजा मानकर आचरण करते रहे हैं।

सुषेण धर्म की स्थापना के साथ – साथ लोक कल्याण हेतु वर माँगते हैं – वैद्य राज से बड़ी उपाधि और क्या। / स्वामी / इतना वरदान दीजिए / कि एक चिकित्सक के रूप में / मेरे हाथ में जश हो ! / रोगी मेरे द्वार पर यदि रोता हुआ आए / तो मेरी सेवा से हँसता मुस्कुराता हुआ जाए ! (पृ. 105)

मूर्च्छित लक्ष्मण का उपचार सुषेण ने सफलता पूर्वक किया। राम उन्हें वैद्यराज की संज्ञा से विभूषित करते हुए कहते हैं जो पूरे काव्यनाटक का मूलभाव है – सुषेण / पहले तुम राजवैद्य थे / और आज से तुम वैद्यराज ! सुषेण ! / चिकित्सा सेवा से / रोगी के मुख पर लौटी मुस्कान / वैद्य का सौन्दर्यशास्त्र है ! / निर्लोभ, / निर्भय, / निस्संग होना / वैद्य का धर्मशास्त्र है। / भेद मुक्त ही पूरे विश्व का आरोग्य / वैद्य का समाजशास्त्र है! (पृ. 103) राम के इस कथन द्वारा देवेन्द्र दीपक किसी भी व्यवसाय के व्यक्ति के लिए विशेष रूप से वैद्यक विद्या के आराधक के लिए उसके मूलभूत कर्तव्य को सामाजिक और धार्मिक संबंधों से जोड़कर व्यापक चरितार्थता का व्यावहारिक स्वरूप प्रस्तुत करते है। सौन्दर्यशास्त्र, धर्मशास्त्र और समाजशास्त्र को समन्वित करके उसे व्यापक मानव हित से संयुक्त करते हैं। वस्तुतः समस्त ज्ञान शाखाओं और कलाओं का सुपरिणाम यही हो सकता है कि वह मानव मात्र के हित की चिंता करे। इसी की अनुपस्थिति में आज पूरा विश्व विघटनशील और पतनोन्मुख हो रहा है। आज अर्थकामी, संवेदनहीन, कुलिश हृदय, पैशाचिक चित्ता, लोभी चिकित्सको के समक्ष आम आदमी विवश है। चिकित्सा उसकी पहुँच से परे हो चुकी है। रोगी का दोहन कोई नई बात नहीं है। आज अर्थ लोभी चिकित्सको के लिए एक प्रकार का तथ्योद्घाटन है। दूसरे शब्दों में कहा जाय कशाघात है। कहा जाता है कि अंतिम उपाधि दीक्षांत समारोह में शपथ लेनी प ड़ती है कि वे अपने ज्ञान को अर्थाजन पर केन्द्रित नहीं करेंगे। किंतु जो घटित होता है वह जग जाहिर है...

राम द्वारा आयुध की पूजा, 'शस्त्रो रक्षित रक्षितः 'उपचार से पूर्व औषधि का पूजन, चिकित्सा के बीच नेपथ्य में महामृत्युंजय जप का चलना, आकाशवाणी द्वारा दशरथ की आत्मा का प्रवेश, काव्यनाटक के अंत में रंगोत्सव का दृश्य है पाँचों नागरिक, नट – नटी क्रमशः राम, लक्ष्मण, सुषेण, हनुमान, गिरिखण्ड, संजीवनी के एक पौधे, धरती और अंततः सबको घेर कर अबीर उड़ाते हुए जयकारा करते हैं। आदि प्रसंग हमारी सनातन संस्कृति का स्मरण दिलाते हैं। प्राचीन सांस्कृतिक मूल्यों को विस्मृति करने से हमारी उज्ज्वल परंपराएँ, सांस्कृतिक निष्ठाएँ और परस्परावलंबन की भावनाएँ विलुप्त हो जायेंगी। दीपक जी ने बड़े कौशल से इस तथ्य को रेखांकित किया है और मानव के सर्वांगीण विकास के लिए अनिवार्यता पर बल दिया है।

सातवें दृश्य में रिक्त स्थान की पूर्ति करते हुए रचनाकार ने दो नये प्रयोग किये हैं एक चिकित्सा शिविर से महामृत्युजंय का जाप और आकाशवाणी द्वारा दशरथ की आत्मा का प्रवेश। उपचार के दौरान महामृत्युंजय मंत्र भारतीय मानस के लिए तारक मंत्र है। चिकित्सक तो चिकित्सा करता है ठीक तो ईश्वर करते हैं। वी ट्रीट, ही क्योर्स यही तो अस्पताल में डॉक्टर कहता है। नाटककार ने जहाँ व्यथित राम का प्रलाप दिखाया है, वह उसकी कलात्मक अभिव्यक्ति को द्योतक है –

नियति की लीला विचित्र – / आज एक पंख वाला / गरुड़ है राम, / एक बिना लौ का / दीपक है राम, / एक बिना मूठ का / खड्ग है राम, / एक पहिये वाला / रथ है राम, (पृ. 91) दशरथ राम को समझाते हैं कि ईक्ष्वाकु वंश में जन्मा राम अपने रामत्व को क्यों भूल रहा है ? वह इतना दुःखी क्यों है ? दशरथ का संदेश राम की आंतरिक उर्जा को जागृत करता है। यह रचनाकार एक मौलिक प्रयोग है। पूरे काव्यनाटक में एक पंक्ति बार – बार घूमती है – 'खेती को पानी / रोगी को औषधि / समय पर मिले तो लाभ 'यह एक सार्वभौमिक सूक्ति बन गई है।

मंचन के परिप्रेक्ष्य एक बात स्पष्ट करना चाहूँगा कि स्थापना के अंश को निर्देशक को दर्शकों के समक्ष सावधानी से हैंडिल करना चाहिए। स्थापना का एक – एक वाक्य भाष्य चाहता है। अत: संवाद में थोड़ा गैप आवश्यक है। सुषेण पर्व नाटक के संदर्भ में दो विचारणीय बिंदु अध्येता, सहृदय और गंभीर नाट्यकर्मी का ध्यान आकृष्ट करते हैं – एक पुरानी शब्दावली में कहें तो दिक् और काल से जुड़ी हुई स्थिति है तो दूसरी स्पेस संबंधी। अंतरावलंबन की वह गुत्थी है जिसको भेदकर नाटककार को सुषेण पर्व की प्रभावी कथ्य रचना को आकार देना होता है। सभी जानते हैं युद्धभूमि में सायंकाल लक्ष्मण मूर्च्छित हुए थे और वैद्यराज सुषेण ने सूर्योदय से पूर्व संजीवनी बूटी से उपचार का मार्ग बताया। लंका और हिमालय जहाँ द्रोणगिरि पर संजीवनी की प्रकाश रश्मियाँ बिखरती हुई किसी की भी आँखों को चौंधिया देती हों स्वयं हनुमान जैसे ज्ञानी के लिए रहस्य बन जाती हैं। तब भी अपने ज्ञान कौशल, शौर्य, दृढ़ता और रामनिष्ठा के बल पर हनुमान सूर्योदय से पूर्व लंका राम के शिबिर में पहुँच जाते हैं। यहाँ किसी नाटककार के लिए स्पेस भरना सरल काम नहीं लेकिन दीपक अपने प्राचीन भारतीय नाट्यकर्म और आधुनिक नियोजन पद्धति का सहारा लेकर इस दिशा में मार्मिकता के साथ सफलता पूर्वक आगे बढ़ते हैं। वे मंचन के अनुरूप स्थितियों को रूपायित करते हैं। इस दृष्टि से नट – नटी का प्रयोग। सूर्या और सुषेण का प्रारंभिक संवाद और कालनेमि के वध और मकरी की मुक्ति की अंतरकथा को पुनः सूत्रधारीय कौशल से प्रेक्षकों के सम्मुख रूपायित किया गया है वह नाटक को एक सांकेतिक रचना के साथ विशिष्ट मिथकीय आयोजन से भी संपृक्त कर देती है। निःसंदेह नाटककार इस कौशल के लिए जहाँ वह प्राचीन नाट्यशास्त्रीय पद्धति का अवसरानुकूल सार्थक प्रयोग करता है वहीं दशरथ की आत्मा के अवतरण के संदर्भ में शेक्सपियर के नाटकों की भीतरी पर्तो में झाँकता हुआ पश्चिम के इस महान नाटककार को गहरी उपयुक्तता एवं बलवत्ता के साथ मंच विधान का अंग बनाता है।

काव्यनाटक अपनी प्रस्तुति में इतना प्राणवान बन गया है कि त्रेता से लेकर वर्तमान समय तक की चेतना को वहन करने पाठकों एवं प्रेक्षकों की चेतना में संप्रेषित करने में सफल रहा है। काव्यनाटक में वस्तु विन्यास, मंचीय विधान और शिल्प में बनावट और बुनावट का विलक्षण घनत्व पाठकों को आदि से अंत तक बाँधे रखता है। इसकी भाषा सूक्तिपरकता, प्रतीक, बिम्ब, मुहावरों, सांकेतिकता एवं शब्दशक्तियों से युक्त है। आकर्षक शैली का प्रयोग नाटक का वैशिष्ट्य है। वस्तु एवं शिल्प की दृष्टि से सफल प्रयोग है। मानव मात्र की द्वन्द्वात्मक स्थिति का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण संगत और प्रेरणास्पद है। समकालीन संदर्भों में उपभोक्तावाद के बढ़ते दबाबों के बीच 'सुषेण पर्व 'का संदेश वैद्यकीय धर्म के प्रति लोकहित की भावना की प्रतिष्ठा में मील के पत्थर का काम करेगी ऐसा मेरा विश्वास है।

❖

ई – 5/21, अरेरा कॉलोनी, भोपाल 462016
2/ सी 6 सेक्सरिया कम्पाउण्ड, गोलंजी हिल, परेल विलेज, मुंबई – 400012 ई मेल – mrig10@gmail.com मोबाईल – 9869158885

हवाएँ

हवाएँ शहर आईं
जहरीली हो गई
आदमी शहर आए
घर वीरान हो गए
जमीनें बिक गईं
गुलाम हो गई आधी कीमत
पर दूर हो गई मिट्टी से मिट्टी।

शहर में पहले आदमी बिका
फिर किताबें
और फिर ज्ञान भी बिक गया।

धीरे-धीरे बिक गये स्कूल
फिर कॉपी-कपड़े
और फिर अध्यापक बिकने लगे

उसके बाद.....
कॉलेज बिके
फिर कॉलेजों से निकले
डॉक्टर, इंजीनियर, वकील, ऑर्किटेक्ट और नेता
सभी बिकने लगे
दुनिया बाज़ार में बदल गई

ईमान बिक गया
बाज़ारवाद की चपेट में।
फिर कोख बिकी
मातृत्व बिका
बचपन बिका सीरियल्स में
और सड़कों पर बिके
विकलाँग
कवि चौराहों पर।

बचपन से सुनता रहा एक गीत
बाबूजी तुम क्या-क्या खरीदोगे
यहाँ तो हर चीज़ बिकती है।

और
आसमान खरीद लिया है
कंपनियों ने।

❖

ज़हर

ज़हर क्या है?
बंद दिमाग
सीमित दायरे में बँधी सोच
और सबसे ऊपर यह मान लेना
कि अंतिम सत्य हम ही जानते हैं।

ज़हर क्या है?
दुनिया को
नर्क में तब्दील करने का रास्ता
सभी रास्ते बंद करने के बाद
सिर्फ़ एक ही रास्ते की ओर
संकेत करना।

ज़हर क्या है?
सबसे बड़ा
सबसे ऊपर होने का भ्रम कभी-कभी
करोड़ों लोगों के जीवन की खुशियाँ,
सुख-चैन छीन लेने का दंभ।

ज़हर क्या है?
प्रकृति के ख़िलाफ़
खड़ा होने की साज़िश
उम्मीद की आख़िरी किरण पर
मौत की जीत का भरोसा।

ज़हर क्या है?
सोच का
विचारों का क्षैतिज हो जाना।

❖

एच.आई.जी फ्लैट नं- 4, संचार विहार अपार्टमेंट्स
सी-58/4 सैक्टर-62, नोएडा- 20130 मो. 9911170832

1

रूप का आईना मुस्कुराता रहा।
स्वप्न बन आंख में झिलमिलाता रहा।।

बांध कर मुझ पे हर लम्हा पहरे नये।
वक़्त सब बंधनों को हटाता रहा।।

ग़म को जिसने उड़ाया हँसी खेल में।
दर्द को थपकियाँ दे सुलाता रहा।।

ज़िंदगी को हँसी मोड़ जिसने दिए।
वो हर इक मोड़ पर याद आता रहा।।

दर्द के पृष्ठ पर दिल ने जो लिख दिया।
'मीत' नग़मा वही गुनगुनाता रहा।।

2

जिसने महके हुए फूलों में है बचपन देखा।
उसने उठती हुई लपटों में भी कुंदन देखा।।

दिल में अंगड़ाई-सी लेने लगीं यादें उनकी।
हमने जब रात का खिलता हुआ यौवन देखा।।

फिर से मन शाद हुआ और लगा तन उड़ने।
जब किसी भँवरे ने बन में कोई गुलशन देखा।।

दिल की धड़कन जो बड़ी, पाओं से पायल बोली।
हमने होते हुए दिल का कहीं बंधन देखा।।

'कृष्ण' कहती है जिसे 'मीत' ये दुनिया सारी।
उसने 'राधा' का नहीं 'मीरा' का भी मन देखा।।

3

कभी भी सुस्तरवी से बना है काम नहीं।
चले चलो के ठहरने का यह मुक़ाम नहीं।।

कोई तो बात है, मक़सद है कुछ तो आने का।
मैं तेरी बज़्म में आया बराये-नाम नहीं।।

वह जिसको पढ़ने से दिल को नसीब हो राहत।
क़िताबे-जीस्त में ऐसा तो कोई नाम नहीं।।

हमारे जिस्म को हसरत है रूह की यारों!
किसी भी रूह को लेकिन बदन से काम नहीं।।

कोई कमाल दिखाओ तो 'मीत' बात बने।
जहां में यूँ ही उभरता किसी का नाम नहीं।।

4

इक पहेली है गुमाँ है ज़िंदगी।
ढूँढते हैं हम कहाँ है ज़िंदगी।।

इक हक़ीक़त के सिवा कुछ भी नहीं।
दर्दो-ग़म की दास्ताँ है ज़िंदगी।।

रास जिसको आ गई उसके लिए।
ख़ूबसूरत है, जवाँ है ज़िंदगी।।

बढ़ रहे हैं मौत की जानिब क़दम।
हाय कैसा कारवाँ है ज़िंदगी।।

हौसला दिल से जुदा मत कीजिए।
'मीत' हिम्मत से जवाँ है ज़िंदगी।।

❖

1/6833, प्रतापगली नं. 1 पूर्वी रोहतास गली , शाहदरा
दिल्ली-110032, मो. 9818555511

सुशील 'साहिल' की ग़ज़लें

1

अगर बाहर नहीं टूटा तो अंदर टूट जाएगा
नहीं तामीर करना काँच का घर, टूट जाएगा

किसी से इश्क़ होने दीजिए इक बार पत्थर को
गुलों की चोट से भी फिर वो पत्थर टूट जाएगा

ख़सो-ख़ाशाक मिट्टी में मिलाना छोड़ मत देना
सनम का वरना कांधा, पैर या सर टूट जाएगा

ख़ुदा के वास्ते तुम प्यार का शहतीर मत खींचो
बहुत नाज़ुक है मेरे दिल का छप्पर, टूट जाएगा

समुंदर की उठी लहरों में ऐसा ज़ोर होता है
ये तेरी आहनी क्या, कोई लंगर टूट जाएगा

2

लब से, मासूमों की मुस्कान चुराने वाले
कितने बेदर्द हैं अरमान चुराने वाले

इस तरफ़ राह से चुनते हैं ये बच्चे कचरा
उस तरफ़ बैठे हैं सामान चुराने वाले

ये ख़बर आज ही टकराई कई कानों से
आये हैं शहर में कुछ कान चुराने वाले

चौड़े रस्ते का जो देते हैं भरोसा तुमको
बस वही तो लोग हैं दालान चुराने वाले

मालो-ज़र और मोबाइल के कई चोर मिले
अब कहाँ मिलते हैं दीवान चुराने वाले

आजकल आपको पहचान दिलाने की जगह
आ गए आप की पहचान चुराने वाले

होती दानाई जो, 'साहिल' को न करते वापस
कैसे नादान हैं गुलदान चुराने वाले

3

हुआ नहीं है फ़क़त एक काम मुद्दत से
न आया लब पे तेरे मेरा नाम मुद्दत से

नहीं मिली है दिवाली को ईद की दावत
ख़फ़ा-ख़फ़ा हैं दुआ और सलाम मुद्दत से

वो क्या बताएगा कितनी मिठास है उसमें
जो पी रहा है करेले का जाम मुद्दत से

वो पानी पीके भी दरिया से ज़ात पूछे है
पचा रहे हैं जो खाना हराम मुद्दत से

क्यों पांव रखने को कांधा तलाश करता है
यहीं खड़ा है तेरा इक ग़ुलाम मुद्दत से

जिसे गुज़ार के 'साहिल' फ़ना मैं हो जाऊं
मिली नहीं है वही एक शाम मुद्दत से

4

एक ऐसा भी तो सितारा हो
चाँद-सूरज से भी जो प्यारा हो

ऐसा दरिया मिले तो बतलाना
जिसका बस एक ही किनारा हो

उसका मुँह फेरकर चले जाना
क्या पता, इक नया इशारा हो

ख़ाक़ हसरत की छानता हूँ मैं
ज़िन्दा शायद कोई शरारा हो

सब्र करते रहो क़यामत तक
आख़िरी दाँव ही तुम्हारा हो

तेरी ख़ुशियों पे हो न हो 'साहिल'
तेरे ग़म पर तो हक़ हमारा हो

पता - डी-18, ऊर्जानगर कॉलोनी, महागामा, जिला: गोंड्डा,
झारखंड-814154, मो. 9955379103/7004943432

1

ज़ेरो ज़बर से बचना मुमकिन नहीं है साहिब
दिन एक से हमेशा रहते नहीं किसी के

हम अपनी कोशिशों में छोडें कमी न कोई
शायद बदल ही जाएँ हालात इस सदी के

थम सी गईं हवाएँ, दहशत में हैं फ़ज़ाएँ
बादल उठे कहाँ से चारों तरफ़ बदी के

लगने लगा है डर सा अपने ही "अक्स" से अब
क्या रंग हो गए हैं ख़ुशरंग ज़िंदगी के

❖

2

बीते बचपन की सब कहानी है
अब न राजा न कोई रानी है

ज़िंदगी भागदौड़ बन सी गई
अब कहाँ बज़्म-ए-शादमानी है

उनसे रूठें तो किस लिए रूठें
यह तो रिश्तों से बेईमानी है

बारिशें और नाव काग़ज़ की
भूली बिसरी सी इक कहानी है

बादशाहत ज़मीं पे है उनकी
आपकी दिल पे हुक्मरानी है

जन्म और मौत ज़िंदगी के लिए
एक ऊला तो एक सानी है

"अक्स" उससे हो इश्क़ क्यूँ न हमें
जिसका लहजा ही ज़ाफ़रानी है

❖

3

बरबाद हरिक घर का मैं दर देख रही हूँ
उजड़ा हुआ पुरखों का नगर देख रही हूँ

ज़ख़्मी हैं सभी ज़ह्नो जिगर, देख रही हूँ
मैं सख्त परेशां हूँ मगर देख रही हूँ

अब अपनी दुआओं में असर देख रही हूँ
बदली हुई दुनिया की नज़र देख रही हूँ

भरता है वो परवाज़ भला कैसे फ़लक़ में
हैरत से मैं शाहीन के पर देख रही हूँ

मायूस निगाहों से उजड़ता हुआ फिर से
इख़्लास -ओ-मुहब्बत का नगर देख रही हूँ

हर कोई यहाँ आज लहू थूक रहा है
ज़ख़्मी है ज़माने का जिगर देख रही हूँ

सरसब्ज़ दरख़्तों को मयस्सर ही नहीं हैं
सूखे हुए पेड़ों में समर देख रही हूँ

मासूम सी बेटी पे वही ज़ुल्म की बारिश
अख़बार में फिर आज खबर देख रही हूँ

बादल घिरे हुए हैं, हर सम्त बेबसी के
आते नहीं नज़र कुछ आसार ज़िंदगी के

❖

एच-2 हाउस नं. 529एल, मॉडल टाउन, पानीपत, नियर परुथी
चौक-132103 मों. 8950118935

रबीन्द्रनाथ टैगोर सेंटर, आईसीसीआर क्षेत्रीय कार्यालय कोलकाता द्वारा आईसीसीआर के स्थापना दिवस के अवसर पर दिनांक 09 अप्रैल 2022 को सांस्कृतिक संध्या का आयोजन किया गया जिसमें मुख्य अतिथि सुश्री अलोकानंद राय, सामाजिक कार्यकर्ता थीं तथा इस दौरान सुश्री तन्मयी चक्रवर्ती और उनके समूह द्वारा नृत्य नाटिका प्रस्तुत की गई एवं आईसीसीआर के छात्रों द्वारा संगीत कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया।

श्रीमती मीनाक्षी लेखी, विदेश और संस्कृति राज्यमंत्री द्वारा विश्व पुर्तगाली भाषा दिवस समारोह के अवसर पर दिनांक 13 मई 2022 को आईसीसीआर, आज़ाद भवन सभागार, नई दिल्ली में आयोजित कार्यक्रम के दौरान दीप प्रज्वलन।

श्री कुमार तुहिन, महानिदेशक, आईसीसीआर एवं श्री दिलशोद अखतोव, महामहिम, उज्बेकिस्तान के राजदूत द्वारा भारत और उज्बेकिस्तान के बीच राजनयिक संबंधों की स्थापना की 30वीं वर्षगांठ के अवसर पर दिनांक 2 अप्रैल 2022 को आईसीसीआर, आजाद भवन सभागार, नई दिल्ली में आयोजित कार्यक्रम के दौरान दीप प्रज्ज्वलन।

भारत और उज्बेकिस्तान के बीच राजनयिक संबंधों की स्थापना की 30वीं वर्षगांठ के अवसर पर दिनांक 2 अप्रैल 2022 को आईसीसीआर, आज़ाद भवन सभागार, नई दिल्ली में आयोजित कार्यक्रम के दौरान उज्बेकिस्तान के दो प्रसिद्ध समूहों "हवास" और "लज़्गी" द्वारा नृत्य और संगीत प्रदर्शन।

भारत और उज्बेकिस्तान के बीच राजनयिक संबंधों की स्थापना की 30वीं वर्षगांठ के अवसर पर दिनांक 2 अप्रैल 2022 को आईसीसीआर, आज़ाद भवन सभागार, नई दिल्ली में आयोजित कार्यक्रम के दौरान उज्बेकिस्तान के हवास समूह द्वारा संगीत प्रस्तुति।

क्षेत्रीय कार्यालय, भुवनेश्वर द्वारा क्षितिज श्रृंखला कार्यक्रम के तहत ओडिया भाषा साहित्य और संस्कृति विभाग, मुम्बई के सहयोग दिनांक 14 मई 2022 को आयोजित कार्यक्रम के दौरान भंडीरा ट्री थिएटर ग्रुप, मुम्बई द्वारा भगवान जगन्नाथ कथा: पर हिंदी नाट्य प्रस्तुति।

क्षेत्रीय कार्यालय, भुवनेश्वर द्वारा क्षितिज श्रृंखला कार्यक्रम के तहत उड़िया भाषा साहित्य और संस्कृति विभाग, भारत सरकार के सहयोग से आईसीसीआर के स्थापना दिवस के अवसर पर दिनांक 09 अप्रैल 2022 को ओडिशा के उत्कल रंगमंच, जीकेसीएम ओडिसी रिसर्च सेंटर, भुवनेश्वर में श्रीमती रोजलिनी मोहंती द्वारा ओडिसी नृत्य गायन की प्रस्तुति।

श्रीमती मीनाक्षी लेखी, विदेश राज्यमंत्री, श्री विनय सहस्त्रबुद्धे, अध्यक्ष, भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद एवं श्री कुमार तुहिन, महानिदेशक, भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद ने दिनांक 20-29 मई, 2022 के दौरान आईसीसीआर के जेन-नेक्स्ट डेमोक्रमेसी नेटवर्क प्रोग्राम के द्वितीय समूह से सुषमा स्वराज भवन में मुलाकात की।

श्री कुमार तुहिन, महानिदेशक तथा श्री राजीव कुमार, उप महानिदेशक, भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद द्वारा दिनांक 20-29 मई, 2022 के दौरान जेन-नेक्स्ट डेमोक्रमेसी नेटवर्क प्रोग्राम के द्वितीय समूह के प्रतिनिधियों के साथ प्रधानमंत्री म्यूजियम का दौरा।

आईसीसीआर के जेन-नेक्स्ट डेमोक्रमेसी नेटवर्क प्रोग्राम के द्वितीय समूह द्वारा दिनांक 20-29 मई, 2022 के दौरान आदर्श ग्राम हीवरे बाजार, अहमदनगर का दौरा।

क्षेत्रीय कार्यालय, वाराणसी द्वारा भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद के स्थापना दिवस के उपलक्ष्य में दिनांक 09 अप्रैल 2022 को श्री विजय कपूर की गायन तथा श्री पंकज राय की तबला वादन प्रस्तुति।

स्वामी विवेकानंद सांस्कृतिक केंद्र, कोलंबो द्वारा दिनांक 30 अप्रैल 2022 को अंतर्राष्ट्रीय दिवस पर अस्तंक योग मंदिर के सहयोग से हठ योग प्रशिक्षक पुरस्कार समारोह एवं योग प्रदर्शन का आयोजन किया गया।

क्षेत्रीय कार्यालय, गुवाहाटी द्वारा क्षितिज श्रृंखला के तहत दिनांक 27 मई 2022 को आयोजित कार्यक्रम के दौरान बिहू नृत्य की प्रस्तुति।

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद तथा संस्कृति विश्वविद्यालय, सीएनएएस, नेपाल (त्रिभुवन विश्वविद्यालय), एवं काठमाण्डु विश्वविद्यालय के मध्य 'अंतरराष्ट्रीय संबंध पीठ' को स्थापित करने के लिए दिनांक 16 मई 2022 को समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर हुए।

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद तथा Thammasat University, थाईलैण्ड के मध्य 'हिंदी पीठ' को स्थापित करने के लिए दिनांक 22 अप्रैल 2022 को समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर हुए।

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद

सदस्यता शुल्क फार्म

प्रिय महोदय,

कृपया गगनांचल पत्रिका की एक साल/तीन साल की सदस्यता प्रदान करें।

बिल भेजने का पता

.....

.....

.....

.....

पत्रिका भिजवाने का पता

.....

.....

.....

.....

विवरण	शुल्क			प्रतियों की सं.	रुपये/US$
गगनांचल वर्ष	एक वर्ष	₹	500 (भारत)		
		US$	100 (विदेश)		
	तीन वर्षीय	₹	1200 (भारत)		
		US$	250 (विदेश)		
कुल	छूट, पुस्तकालय		10%		
	पुस्तक विक्रेता		25%		

मैं इसके साथ बैंक ड्राफ्ट सं. ..... दिनांक .....

रु./US$ ..... बैंक .....

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद, नई दिल्ली के नाम भिजवा रहा/रही हूँ।

कृपया इस फॉर्म को बैंक ड्राफ्ट के साथ
निम्नलिखित पते पर भिजवाएँ :
कार्यक्रम निदेशक (हिंदी)
भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद
आजाद भवन, इंद्रप्रस्थ एस्टेट,
नई दिल्ली-110002, भारत
फोन नं. 011-23379309, 23379310

हस्ताक्षर और स्टैंप .....

नाम .....

पद .....

दिनांक .....

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद

प्रकाशन एवं मल्टीमीडिया कृति

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद द्वारा गत 44 वर्षों से हिंदी पत्रिका गगनांचल का प्रकाशन किया जा रहा है, जिसका मुख्य उद्देश्य देश के साथ-साथ विदेशों में भी भारतीय साहित्य, कला, दर्शन तथा हिंदी का प्रचार-प्रसार करना है तथा इसका वितरण देश-विदेश में व्यापक स्तर पर किया जाता है।

इसके अतिरिक्त परिषद ने कला, दर्शन, कूटनीति, भाषा एवं साहित्य, विभिन्न विषयों पर पुस्तकों का प्रकाशन किया है। सुप्रसिद्ध भारतीय राजनीतिज्ञों और दार्शनिकों जैसे महात्मा गाँधी, मौलाना आजाद, नेहरू व टैगोर की रचनाएँ परिषद की प्रकाशन योजना में गौरवशाली स्थान रखती हैं। प्रकाशन-योजना विशेष रूप से उन पुस्तकों पर केंद्रित है, जो भारतीय संस्कृति, दर्शन तथा पौराणिक कथाओं, संगीत, नृत्य और नाट्यकला से संबद्ध हैं।

परिषद द्वारा भारत में आयोजित अंतरराष्ट्रीय महोत्सवों के अंतर्गत सांस्कृतिक कार्यक्रमों तथा विदेशी सांस्कृतिक दलों द्वारा प्रस्तुत कार्यक्रमों की वीडियो रिकॉर्डिंग तैयार की जाती है। इसके अतिरिक्त परिषद ने ध्वन्यांकित संगीत के 100 वर्ष पूर्ण होने के अवसर पर दूरदर्शन के साथ मिलकर ऑडियो कैसेट एवं डिस्क की एक शृंखला का संयुक्त रूप से निर्माण किया है।

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद की स्थापना, सन् 1950 में स्वतंत्र भारत के प्रथम शिक्षा मंत्री मौलाना अबुल कलाम आज़ाद द्वारा की गई थी। तब से अब तक, हम भारत में लोकतंत्र की दृढ़ीकरण, न्यायसंगत सामाजिक व्यवस्था की स्थापना, अर्थव्यवस्था का तीव्र विकास, महिलाओं का सशक्तीकरण, विश्व-स्तरीय शैक्षणिक संस्थाओं का सृजन और वैज्ञानिक परम्पराओं का पुनरुज्जीवन देख चुके हैं। भारत की पांच सहस्त्राब्दि पुरानी संस्कृति का नवजागरण, पुनः स्थापना एवं नवीनीकरण हो रहा है, जिसका आभास हमें भारतीय भाषाओं की सक्रिय प्रोन्नति, प्रगति एवं प्रयोग में और सिनेमा के व्यापक प्रभाव में मिलता है। भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद, विकास के इन आयामों से समन्वय रखते हुए, समकालीन भारत के साथ कदम से कदम मिलाकर चल रही है।

पिछले पांच दशक, भारत के लम्बे इतिहास में, कला के दृष्टिकोण से सर्वाधिक उत्साहवर्द्धक रहे हैं। भारतीय साहित्य, संगीत व नृत्य, चित्रकला, मूर्तिकला व शिल्प और नाट्यकला तथा फिल्म, प्रत्येक में अभूतपूर्व सृजन हो रहा है। भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद, परंपरागत के साथ-साथ समकालीन प्रयोगों को भी लगातार बढ़ावा दे रही है। साथ ही, भारत की सांस्कृतिक पहचान-शास्त्रीय व लोक कलाओं को विशेष सम्मान दिया जाता है। भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद सहभागिता व भाईचारे की संस्कृति की संवाहक है, व अन्य राष्ट्रों के साथ सृजनात्मक संवाद स्थापित करती है। विश्व-संस्कृति से संवाद स्थापित करती है। विश्व-संस्कृति से संवाद स्थापित करने के लिए परिषद ने अंतरराष्ट्रीय मंच पर भारतीय संस्कृति की समृद्धि एवं विविधता को प्रदर्शित करने का प्रयास किया है।

भारत और सहयोगी राष्ट्रों के बीच सांस्कृतिक व बौद्धिक आदान-प्रदान का अग्रणी प्रायोजक होना, परिषद के लिए गौरव का विषय है। परिषद का यह संकल्प है कि आने वाले वर्षों में भारत के गौरवशाली सांस्कृतिक एवं शैक्षणिक आंदोलन को बढ़ावा दिया जाए।

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद

अध्यक्ष	:	23378616, 23370698
महानिदेशक	:	23378103, 23370471
उप-महानिदेशक (प्रशासन)	:	23370784, 23379315
उप-महानिदेशक (संस्कृति)	:	23379249, 23370794
हिंदी अनुभाग	:	23370237, 23379309-10 एक्स. 2268/2272

गगनांचल
गगनांचल
गगनांचल
गगनांचल
गगनांचल
गगनांचल
गगनांचल
गगनांचल
गगनांचल
गगनांचल
गगनांचल
गगनांचल
गगनांचल
गगनांचल
गगनांचल
गगनांचल
गगनांचल
गगनांचल
गगनांचल
गगनांचल

पंजीयन संख्या, आर.एन/32381/78
ISSN-0971-1430

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद के प्रकाशन

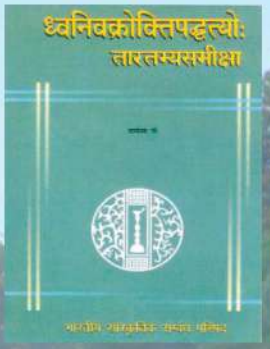

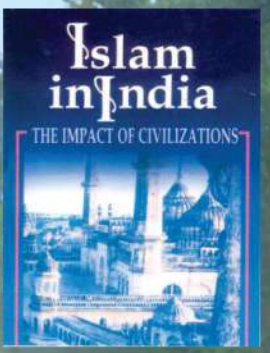

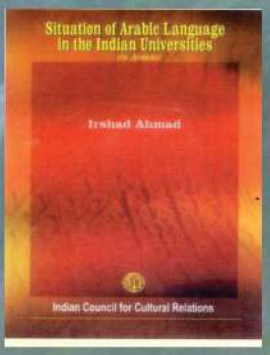

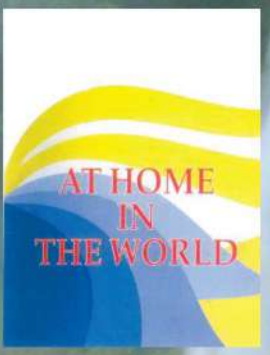

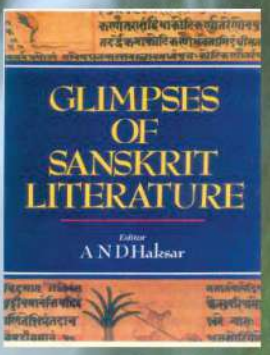

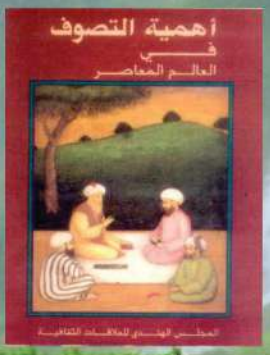

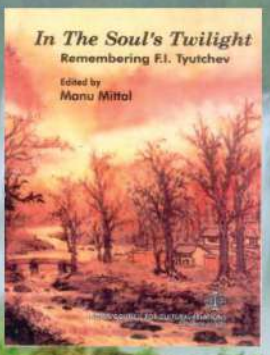

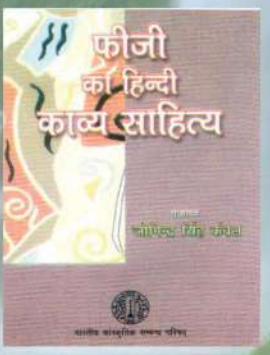

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद
फोन : 91-11-23379309, 23379310
ई-मेल : pohindi.iccr@nic.in
वेबसाइट : www.iccr.gov.in

आवरण परिकल्पना : ममता गोयनका